भारत का

नया शासन-विधान

[प्रान्तीय स्वराज्य]

लेखक

हरिश्चन्द्र गोयल बी० एस-सी० एल-एल० बी०

सस्ता साहित्य मण्डल,

दिल्ली

अप्रैल, सन् १९३८
पहली बार २०००
मूल्य
बारह आना

मुद्रक—
हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस,
नई दिल्ली

प्रकाशक की ओर से

सन् १९३५ में जब गवर्नमेण्ट आफ् इंडिया एक्ट पास हुआ था तो उसके बाद कई मित्रों ने मण्डल से नये शासन-विधान पर एक आलोचनात्मक पुस्तक प्रकाशित करने का सुझाया। लेकिन देश में उस समय तो शासन-विधान को ठुकरा देने का वातावरण अधिक था सो हमने इस ओर ध्यान देना ठीक नहीं समझा। लेकिन जब पिछले साल दिल्ली में गांधीजी की सलाह से कांग्रेस ने गवर्नरों द्वारा आश्वासन दे दिये जाने पर पदग्रहण करने की छूट दी और उसके बाद की घटनाओं के बाद कांग्रेस ने पद-ग्रहण करना स्वीकार किया, तब यह जरूरी समझा गया कि हिन्दी में नये शासन-विधान पर एक आलोचनात्मक पुस्तक निकाली जाय, जिसमें विषय का विश्लेषण इतनी सरलता से हो कि साधारण पाठक विधान को समझ सकें और उसके खोखलेपन को महसूस कर सकें।

हम पूरे विधान पर एक ही पुस्तक मे विचार करना चाहते थे लेकिन कई अनिवार्य कारण ऐसे आगये कि हमारा और लेखक का यह विचार पूरा न हो सका और हमे 'प्रान्तीय स्वराज्य' और 'फेडरेशन' दो विभाग अलग-अलग करने पडे। इस भाग मे 'प्रान्तीय स्वराज' पर ही विचार किया गया है।

यद्यपि हिन्दी मे लेखक की यह पहली रचना है परतु अपने विषय पर उनका अधिकार होने के कारण पुस्तक मे उन्होने यथासम्भव किसी प्रकार की त्रुटी नही होने दी है। लेखक कानून के गहरे विद्यार्थी है ओर कान्स्टीट्यूशनल ला (विधान कानून) उनका दिलचस्प विषय रहा है। आप हिन्दी के होनहार लेखक है और हिन्दी को आपसे बहुत आशाये है। हम इनकी लिखी 'फेडरेशन' भी शीघ्र ही पाठको की सेवा मे उपस्थित करेगे।

मंत्री

भूल सुधार

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३५	फुटनोट	६८	६७
३९	अन्तिम	और सिन्ध में	उडीसा और सिन्ध में
४४	२१	१२, ०००)	११२, ०००)
४५	१४	३५,०००)	११, ५००)

लेखक की ओर से

इस पुस्तक में गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की उन धाराओ पर आलोचनात्मक व विश्लेष्णात्मक दृष्टि से विचार करने का प्रयत्न किया गया है जो १ अप्रैल सन् १९३७ से प्रान्तो में अमल में आई है। इसके अलावा उन विभिन्न आर्डर-इन-कौंसिलो, आदेश-पत्रो, लेटर्स पेटेण्टो और नियमोपनियमो पर भी यथासम्भव प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है जो एक्ट के मातहत जारी किये गये है और जिनको नये शासन-विधान में लगभग उतना ही महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है जितना कि खास एक्ट की धाराओ को। प्रारम्भ में एक अध्याय में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ज़माने से अबतक के वैधानिक परिवर्त्तनो पर भी सरसरी तौर से विचार किया गया है, ताकि नये परिवर्तनो का महत्व ठीक-ठीक समझ में आसके। अन्त में एक अध्याय मे इस बात पर विचार किया गया है कि नये एक्ट की योजना में ऐसे किन-किन परिवर्तनो का किया जाना आवश्यक है जिससे प्रान्तो में वास्तविक प्रान्तीय स्वराज्य और उत्तरदायी शासन-पद्धति स्थापित की जा सके।

किसी भी देश के शासन-विधान में शासन-विधान सम्बन्धी कानूनी धाराओ के अलावा सैकडो ऐसी प्रथायें (Conventions) भी प्रचलित होजाती है, जिनका कानून की भांति ही पालन करना शासन से सम्बन्ध रखनेवाले विभिन्न अधिकारियो का कर्तव्य होजाता है, और जो धीरे-धीरे एक प्रकार से शासन-विधान का अंग ही बन जाती है। ब्रिटेन के शासन-विधान में इस प्रकार की प्रथाओ की भरमार है, लेकिन हिन्दुस्तान में इस प्रकार की प्रथाओ का कहाँतक जन्म हो सकेगा और ब्रिटिश अधिकारी उन्हे कहाँतक पनपने देंगे यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता।

राजबन्दियो की रिहाई के प्रश्न पर सयुक्तप्रान्त और बिहार के गवर्नरो और मन्त्रि-मण्डलो में हाल ही में जो मतभेद पैदा हो गया था और जिनके फलस्वरूप मन्त्रि-मण्डलो को इस्तीफे तक देने पडे थे, उससे यह वात बिलकुल स्पष्ट होगई है कि यहाँ किसी भी प्रथा का कायम होना तबतक सहज नहीं है जबतक कि स्वय ब्रिटिश अधिकारी उस प्रथा का कायम होना पसन्द न करे। यद्यपि इन प्रान्तो के गवर्नरो को अन्त में यह स्वीकार करना पडा कि प्रान्त के अमन-चैन को कायम रखने की प्रारम्भिक जिम्मेदारी मिनिस्टरो पर है, लेकिन यह प्रथा कबतक कायम रह सकेगी यह देखना बाकी है।

इस पुस्तक को तैयार करने में अग्रेजी भाषा की कई पुस्तको और खासकर प्रो० शाह की पुस्तक (Provincial Autonomy) से काफी सहायता ली गई है। इन सबके लेखको को मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ। इनके अलावा मैंने सरकारी रिपोर्टो और खरीतो और, खासकर ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमिटी की रिपोर्ट से भी काफी सहायता ली है।

मैं भाई मुकुटबिहारी वर्मा को धन्यवाद दिये बगैर नहीं रह सकता, जिन्होंने सारी पुस्तक को आद्योपान्त पढकर उसमें यथास्थान सशोधन किया है। वास्तव में यदि उन्होने इस काम में हाथ न लगाया होता तो यह पुस्तक इस रूप में प्रकाशित न हुई होती। इसपर भी कई त्रुटियो का रह जाना सम्भव है। आशा है पाठकगण उनके लिए मुझे क्षमा करेगे और उनकी ओर मेरा ध्यान अवश्य आकर्षित करेगे ताकि भविष्य में उन्हे सुधारा जा सके।

८, निकलसन स्क्वायर
नई दिल्ली

हरिश्चन्द्र गोयल

पूज्य माता-पिता के
चरणों में

विषय-क्रम

विषय-प्रवेश

अंग्रेजो का आगमन

भारत मे अंग्रेजो का आगमन आमतौर पर ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के रूप में होता है, जो कि ईसा की १६ वी सदी के आखिरी दिन यानी ३१ दिसम्बर सन् १६०० ईसवी को लन्दन में इंग्लैण्ड की महारानी एलिजाबेथ के एक चार्टर (सनद) द्वारा बनी थी। यह कम्पनी केवल व्यापार के लिए बनी थी, लेकिन यहाँके निवासियो की आपसी फूट और मुगलो की क्षीण होती हुई शक्ति से लाभ उठाकर उसने एक राजशक्ति की तरह यहाँ अपने पैर जमाने शुरू किये और धीरे-धीरे सारे भारत पर अपना अधिकार जमा लिया।

भारत मे ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के इतिहास को हम आमतौर पर दो कालो मे बाँट सकते है—(१) सन् १६०० से १७६५ तक, और (२) सन् १७६५ से १८५७ तक।

कम्पनी का कारोबार

कम्पनी के ज्यों-ज्यो पाँव जमते गये, सन् १६०० से १७६५ के बीच, उसने मद्रास, बम्बई और बगाल इन तीन प्रेसिडेंसियो की नीव डाली। इनका नाम प्रेसिडेंसी इसलिए पड़ा, क्योकि इनका शासन एक कौंसिल और प्रेसिडेण्ट के द्वारा होता था। इसके अलावा और कोई ऐसी बात इस काल में नही हुई जिसका यहाँ उल्लेख करना आवश्यक हो।

पार्लमेण्ट का दखल

सन् १७६५ में लार्ड क्लाइव ने शाह आलम से बगाल, बिहार और उडीसा[१] की दीवानी प्राप्त करली। इससे कम्पनी की एकदम कायापलट-सी होगई और ब्रिटेन की सर्वोच्च शासन-सत्ता पार्लमेण्ट भी कम्पनी की इस बढती हुई शक्ति को देखकर चुप न बैठ सकी। उसने कम्पनी को अपने नियन्त्रण में रखने का निश्चय किया और सन् १७७२ में रेग्युलेटिंग एक्ट के नाम से एक कानून पास किया, जिसके द्वारा कम्पनी के सगठन और अधिकारो में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये। यही नहीं, बल्कि कम्पनी द्वारा स्थापित भारत की शासन-पद्धति में भी कई महत्वपूर्ण परिवर्तन उसके द्वारा हुए। इनमें सबसे मुख्य परिवर्तन यह था कि मद्रास और बम्बई की प्रेसिडेंसियो को, जिनका अभीतक इंग्लैण्ड में सीधा कम्पनी से ही ताल्लुक रहता था, बगाल की प्रेसिडेंसी के मातहत कर दिया गया और बगाल के गवर्नर को 'बगाल का गवर्नर-जनरल' की उपाधि दी गई। साथ ही, उसकी सहायता के लिए, ४ सदस्यो की एक कौंसिल भी नियुक्त की गई।

रेग्युलेटिंग एक्ट

रेग्युलेटिंग एक्ट के बाद दूसरा महत्वपूर्ण कानून ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने सन् १७८४ में पास किया, जो 'पिट का इण्डिया एक्ट' (Pitt's India Act) के नाम से मशहूर है। इस कानून के जरिये कम्पनी के हिस्सेदारो की आम सभा यानी 'जनरल कोर्ट ऑफ प्रोप्राइटर्स' (General Court of Proprietors) को शासन-सम्बन्धी सब अधिकारो से वचित कर दिया गया और

पिट का इण्डिया एक्ट

१ उडीसा से यहाँ तात्पर्य आजकल के उडीसा से नहीं है, बल्कि उस हिस्से से है जो आजकल मेदिनीपुर का जिला कहलाता है। आजकल का उडीसा तो कम्पनी को सन् १८०३ में मिला था।

शासन के सब मामलो में कम्पनी के संचालक-मण्डल (Court of Directors) को सम्राट् द्वारा नियुक्त एक नई कमेटी के मातहत कर दिया गया। यह कमेटी आमतौर पर 'बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल' (Board of Control) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके ६ सदस्य होते थे, लेकिन इसका सारा काम वास्तव में एक सदस्य के जिम्मे ही आ पड़ा, जो बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के प्रेसिडेन्ट के नाम से जाना जाने लगा। इसे यदि हम वर्तमान भारत-मन्त्री का पूर्वाधिकारी कहे तो अनुपयुक्त न होगा। पिट के इण्डिया एक्ट ने बम्बई व मद्रास की प्रेसिडेंसियो के ऊपर बगाल प्रेसिडेन्सी के अधिकारो को और भी ज्यादा बढ़ा दिया।

केन्द्रीय सरकार की स्थापना

पिट के इण्डिया एक्ट के बाद दूसरा जो महत्वपूर्ण कानून ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने भारतीय शासन के सम्बन्ध मे पास किया वह सन् १८३३ का चार्टर-एक्ट था। इसके द्वारा भारत में सबसे पहले एक केन्द्रीय सरकार का जन्म हुआ, जिसे हम आमतौर पर भारत-सरकार[१] के नाम से पुकारते है। बगाल के गवर्नर-जनरल को भारत के गवर्नर-जनरल की उपाधि दी गई व मद्रास और बम्बई की प्रेसिडेंसी-सरकारो को भारत के गवर्नर-जनरल और उसकी एग्जीक्यूटिव कौंसिल के बिलकुल मातहत कर दिया गया। यहाँतक कि इन दोनो प्रेसिडेंसियो को अपने प्रान्तो के लिए स्वतन्त्र रूप से कानून बनाने का अधिकार भी नहीं रहा जो कि उन्हे अभीतक प्राप्त था। तीनो प्रेसिडेंसियो के लिए कानून बनाने का एकमात्र अधिकार भारत-सरकार को दिया गया। लेकिन गवर्नर-जनरल को

१ कानूनी भाषा मे भारत-सरकार से अभिप्राय गवर्नर-जनरल और उसकी एग्जीक्यूटिव कौंसिल से ही होता है और गवर्नर-जनरल को वाइसराय के नाम से भी पुकारा जाता है।

यह आदेश दिया गया कि जब कभी वह और उसकी एग्जीक्यूटिव कौंसिल कानून बनाने के निमित्त बैठें तो एक और व्यक्ति को, जो कानून में पारंगत हो, अपनी कौंसिल में शामिल कर लिया करे। सन् १८५३ से इस सदस्य को, जो कानून-सदस्य के नाम से जाना जाने लगा था, एग्जीक्यूटिव कौंसिल की और कार्रवाईयो में भाग लेने का अधिकार भी दे दिया गया।

भारत की धारा-सभाओ पर कानून बनाने की जो तरह-तरह की पाबन्दियां लगाई गई है उनका श्रीगणेश भी पार्लमेण्ट के इसी चार्टर-एक्ट से होता है, क्योंकि इसी कानून के द्वारा गवर्नर-जनरल और उसकी कौंसिल को यह आदेश दिया गया था कि वे भारत के लिए ऐसा कोई कानून न बनायें जो ब्रिटिश पार्लमेण्ट द्वारा पास किये हुए किसी कानून के विरुद्ध हो।

सारे भारत का शासन-भार सम्हालने के अलावा बगाल प्रेसिडेंसी का शासन-भार भी भारत-सरकार यानी गवर्नर-जनरल और उसकी कौंसिल पर ही रहा। मद्रास और बम्बई की प्रेसिडेंसियो की तरह बगाल के लिए कोई पृथक् गवर्नर और कौंसिल नियुक्त नही हुए।

नये प्रान्तो का निर्माण

उत्तरी भारत में कम्पनी के इलाको का विस्तार शीघ्रता से बढता जा रहा था, और सब नये इलाके आमतौर पर बगाल प्रेसिडेंसी में ही शामिल कर दिये जाते थे। भारत के गवर्नर-जनरल और उसकी कौंसिल के लिए इतना काम सम्हालना मुश्किल होगया। इसलिए पार्लमेण्ट ने सन् १८३५ में एक कानून पास करके बंगाल प्रेसिडेंसी के पश्चिमोत्तर भाग को प्रेसिडेंसी से निकालकर एक अलग लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर के मातहत कर दिया। यह प्रान्त पश्चिमोत्तर प्रान्त के नाम से प्रसिद्ध हुआ,

लेकिन आजकल संयुक्तप्रान्त के नाम से जाना जाता है। बंगाल प्रेसिडेंसी के शेष भाग के लिए सन् १८५४ में एक अलग लेफ़्टिनेंण्ट-गवर्नर नियुक्त किया गया। तब कही भारत-सरकार को प्रान्तीय शासन के काम से छुटकारा मिला।[१]

लेजिस्लेटिव संस्था का जन्म

पार्लमेण्ट के सन् १८५३ के कानून से भारत में कानून बनाने के लिए एक पृथक् लेजिस्लेटिव संस्था का जन्म हुआ। इसके अनुसार कानून बनाने के निमित्त गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल में ६ सदस्यो की और नियुक्ति की गई, और उसके अधिवेशन भी खुलेआम होने लगे। लेकिन कानून की निगाह मे लेजिस्लेटिव कौंसिल का कोई पृथक् अस्तित्व नही स्वीकार किया गया। कानून में तो इस कौंसिल को कानून बनाने के निमित्त गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के विस्तार के रूप मे ही माना गया। इसीलिए, इन नये शामिल किये गये सदस्यो को कौंसिल का पूरा सदस्य न कहकर 'अतिरिक्त सदस्य' के नाम से पुकारा जाता था।

इस प्रकार गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल मे जो 'अतिरिक्त सदस्य' कानून-निर्माण के निमित्त नियुक्त किये गये उनमें भी भारतीय कोई

१ सयुक्तप्रान्त और बगाल के बाद सन् १८५९ मे पजाब के लिए, सन् १९०५ मे पूर्वी बगाल और आसाम के लिए और सन् १९१२ मे विहार व उडीसा के लिए पृथक् लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर नियुक्त किये गये।

लेफ्टिनेण्ट-गवर्नरो की नियुक्ति आमतौर पर गवर्नर-जनरल द्वारा इण्डियन सिविल सर्विस के उच्च अफसरो मे से की जाती थी, जब कि गवर्नरो की नियुक्ति सीधी विलायत से होती थी। मॉण्ट-फोर्ड सुधारो के वाद लेफ्टिनेण्ट-गवर्नरो की नियुक्ति सर्वथा बन्द होगई है और अव उनकी जगह गवर्नर ही नियुक्त किये जाते है।

नहीं लिया गया।[१] इसके अलावा, जितने भी सदस्य उसमें नियुक्त किये गये, वे सब सरकारी सदस्य ही होते थे।

चीफ कमिश्नरियों का निर्माण

सन् १८५४ में पार्लमेण्ट ने एक कानून पास करके भारत-सरकार को चीफ कमिश्नरियो के निर्माण का अधिकार दिया। इस प्रकार भिन्न-भिन्न समयो पर मध्यप्रान्त, आसाम, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, दिल्ली, अजमेर-मेरवाड़ा, ब्रिटिश बलूचिस्तान, कुर्ग और अण्डमान-निकोबार के प्रान्त चीफ कमिश्नरो के मातहत रक्खे गये। इनमें से पहले दो प्रान्तो यानी मध्यप्रान्त और आसाम को तो सन् १९२१ में ही गवर्नरी का दर्जा देदिया गया, लेकिन पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त को सन् १९३२ में जाकर यह दर्जा प्राप्त हुआ। शेष सब प्रान्त अभीतक चीफ कमिश्नरो के ही मातहत है। चीफ कमिश्नरियो में और अन्य प्रान्तो में यह भेद है कि चीफ कमिश्नरियां सीधी भारत-सरकार के मातहत समझी जाती है। चीफ कमिश्नरो की नियुक्ति भी भारत-सरकार के हाथ में रहती है और उनके अधिकारो का फैसला भी भारत-सरकार ही करती है। चीफ कमिश्नरी में जो चीफ कमिश्नर होता है वही आमतौर पर उस प्रान्त की प्रान्तीय सरकार माना जाता है, लेकिन इन प्रान्तो में भारत-सरकार कई अधिकारो को अपने हाथो में भी सुरक्षित रखती है।

'गदर' और कम्पनी के शासन का अन्त

सन् १८५७ के 'गदर' के बाद भारत में ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के

१ बोर्ड आफ कण्ट्रोल के तत्कालीन प्रेसिडेण्ट सर चार्ल्स वुड ने तो, जबकि उस सम्बन्धी कानून पार्लमेण्ट मे विचाराधीन था, उस बात को पार्लमेण्ट तक मे कह डाला था कि इस कौंसिल में कोई भी भारतीय या गैर-सरकारी सदस्य नहीं लिया जायगा।

शासन का अन्त हुआ । पार्लमेण्ट ने सन् १८५८ में एक कानून पास करके कम्पनी और उसके संचालक-मण्डल के शासन-सम्बन्धी सब अधिकारो को छीन लिया और भारत का शासन सीधा सम्राट् के सुपुर्द कर दिया। इस प्रकार उस दोहरे शासन का अन्त हुआ जो पिट के इण्डिया एक्ट द्वारा निर्मित बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल के कारण चला आरहा था। बोर्ड ऑफ कण्ट्रोल की जगह 'इण्डिया कौसिल' (India Council) नाम की एक नई कौसिल नियुक्त की गई, जिसके अध्यक्ष को सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इण्डिया (Secretary of State for India) यानी भारत-मन्त्री की उपाधि दी गई। भारत-सरकार और सब प्रान्तीय सरकारो को इसी नये अधिकारी यानी भारत-मन्त्री की सीधी मातहती मे रक्खा गया, लेकिन उनकी स्थिति और संगठन में इस कानून के फलस्वरूप और कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ।

प्रान्तो मे कौसिलों की स्थापना

सन् १८५८ के कानून के बाद शीघ्र ही सन् १८६१ में पार्लमेण्ट ने इण्डियन कौसिल्स एक्ट (Indian Councils Act, 1861) के नाम से एक कानून और पास किया, जिसके द्वारा कानून बनाने के निमित्त गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौसिल के अतिरिक्त सदस्यो की संख्या ६ से बढाकर १२ करदी गई। इनमे कम-से-कम आधो का गैर-सरकारी होना लाज़िमी था; और इनमें से कुछ जगहे भारतवासियों को भी दी गई। लेकिन ये सब सदस्य गवर्नर-जनरल द्वारा ही नामजद किये जाते थे; निर्वाचित इनमें कोई भी न होता था।

गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौसिल के अतिरिक्त सदस्यों की संख्या बढ़ाने के अलावा सन् १८६१ के एक्ट ने बम्बई और मद्रास प्रेसि-डेंसियो के गवर्नरों की एग्ज़ीक्यूटिव कौसिलो को भी उनके कानून बनाने

के अधिकार, जो उनसे सन् १८३३ में छीन लिये गये थे, वापस देदिये। लेकिन ऐसे कानून बनाने पर बन्दिश लगा दी गई जो गवर्नर-जनरल और उसकी एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल द्वारा बनाये हुए किसी कानून के खिलाफ जाते हों। दूसरे गवर्नर-जनरल से पूर्व-स्वीकृति लिये बगैर वे सरकारी आय, सरकारी कर्ज़ा, वैदेशिक और फौजी व नाविक मामलो, सिक्का, भारतीय दण्ड-विधान जैसे कई विषयो पर कोई कानून नही बना सकती थी। तीसरे उनके हरेक कानून के लिए गवर्नर-जनरल की अन्तिम स्वीकृति भी आवश्यक थी। जिस प्रकार कि केन्द्र में कानून बनानें के निमित्त गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल में अतिरिक्त सदस्य नियुक्त किये जाते थे, उसी प्रकार इन प्रेसिडेंसियो के गवर्नरो की एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिलो में भी अतिरिक्त सदस्यो की नियुक्ति का प्रबन्ध किया गया।

सन् १८६१ के एक्ट में गवर्नर-जनरल को यह भी आदेश दिया गया कि वह बगाल प्रेसिडेंसी में भी, जो सन् १८५४ से एक पृथक् लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर के मातहत करदी गई थी, कानून-निर्माण के लिए एक लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना करे। इस आदेश के फलस्वरूप, सन् १८६२ में, बगाल प्रेसिडेंसी में भी कानून बनाने के लिए एक पृथक् कौंसिल की स्थापना की गई।[1]

१ ब्रिटिश भारत के शेष प्रान्तो मे लेजिस्लेटिव कौंसिलो की स्थापना इस प्रकार हुई है—पश्चिमोत्तर प्रान्त मे, जो आजकल सयुक्तप्रान्त के नाम से प्रसिद्ध है, सन् १८८६ मे, पजाब मे सन् १८९७ मे, बिहार व उड़ीसा, मध्यप्रान्त और आसाम मे सन् १९१२ मे, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त मे सन् १९३२ मे, और कुर्ग की चीफ कमिश्नरी मे सन् १९२३ मे। उड़ीसा और सिन्ध ये दो नये प्रान्त सन् १९३६ मे बनाये गये है, इनमे लेजिस्लेटिव असेम्बलियाँ सन् १९३७ मे प्रान्तीय स्वराज्य की स्थापना के साथ-साथ स्थापित हुई है।

पिछड़े हुए प्रान्तो मे रेग्युलेशन-राज्य

सन् १८७० में पार्लमेण्ट ने एक कानून पास करके गवर्नर-जनरल और उसकी एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल को यह अधिकार दिया कि वे ब्रिटिश भारत के खास-खास पिछडे हुए प्रान्तो या प्रान्तों के इलाको के लिए रेग्युलेशनो के ज़रिये कानून बनाले। इस प्रकार रेग्युलेशनों के ज़रिये जो क़ानून गवर्नर-जनरल और उसकी कौंसिल द्वारा बनाये जाते, वे कौंसिल के अतिरिक्त सदस्यो तक के सामने पेश नही किये जाते थे। इसकी वजह यह थी कि पार्लमेण्ट इन प्रदेशो में ठेठ पुराने ढर्रे से शासन करना चाहती थी; इसीलिए वह गवर्नर-जनरल की एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के अलावा इन प्रदेशो के मामले मे और किसीका दखल पसन्द नही करती थी।

यह ध्यान रहे कि एक्ट और रेग्युलेशनो की कानूनी स्थिति मे केवल इतना भेद है कि जहाँ एक्ट से यह बोध होता है कि यह कानून किसी लेजिस्लेटिव कौंसिल या असेम्बली द्वारा पास किया गया है, रेग्युलेशन से बोध होता है कि यह कानून किसी लेजिस्लेटिव कौंसिल या असेम्बली ने नही बल्कि किसी एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल या इसी प्रकार की किसी और कार्यकारिणी सत्ता ने पास किया है।[1]

१. सन् १९३५ के गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के अमल मे आने से पहले तक ब्रिटिश बलूचिस्तान, अजमेर-मेरवाडा, कुर्ग, पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त, उडीसा, आसाम और अण्डमान-निकोबार आदि प्रान्तो के लिए भारत-सरकार रेग्युलेशनो के जरिये ही कानून बनाती रही है। अब नये एक्ट के अन्तर्गत इस अधिकार का प्रयोग केवल ब्रिटिश बलूचिस्तान और अण्डमान-निकोबार इन दो प्रान्तो मे ही गवर्नर-जनरल द्वारा किया जा सकेगा। इन दो प्रान्तो के अलावा जिन-जिन प्रान्तो मे एक्ट की धारा ९१ के अन्तर्गत वहिर्गत-क्षेत्र (Excluded Areas) या अर्ध-

सन् १८३३ से पहले जो कानून बनते वे सब रेग्युलेशन ही कहलाते थे। इसकी वजह यह है कि सन् १८३३ तक कानून बनाने का अधिकार गवर्नर-जनरल, गवर्नर और उनकी एग्जीक्यूटिव कौंसिलो को ही होता था। इन्हीं रेग्युलेशनो के मातहत अक्सर भारत-सरकार प्रमुख राजनैतिक नेताओ को शाही बन्दी के रूप में गिरफ्तार करती रही है।

१८९२ का कौंसिल-एक्ट

सन् १८९२ का इण्डियन कौंसिल्स एक्ट लॉर्ड डफरिन के उद्योग का फल था, जो कि उस समय भारत के वाइसराय और गवर्नर-जनरल थे। इसके अनुसार कानून-निर्माण के निमित्त वाइसराय की एग्जीक्यूटिव कौंसिल के अतिरिक्त सदस्यो की संख्या बढाकर १६ करदी गई। कुछ गैर-सरकारी सदस्यो की नियुक्ति के लिए निर्वाचन का सिद्धान्त रक्खा गया, शेष सब सदस्य वाइसराय द्वारा नामजद ही होते रहे। यद्यपि कौंसिल में गैर-सरकारी सदस्यो की संख्या पहले से बढादी गई, मगर बहुमत उनका नही रक्खा गया। कौंसिल के सदस्यो को सरकारी सदस्यो से प्रश्न पूछने का अधिकार भी पहली बार दिया गया, और उन्हे सरकारी बजट पर आम बहस करने का मौका भी दिया जाने लगा।

इसी प्रकार के परिवर्तन प्रान्तो की कौंसिलो में भी किये गये, लेकिन इस बात का खास तौर से ध्यान रक्खा गया कि कहीं भी गैर-सरकारी सदस्यों का बहुमत न होजाय। एकमात्र बम्बई ही इस नियम का अपवाद था, लेकिन वहां भी निर्वाचित गैर-सरकारी सदस्यो को अल्पमत में ही रक्खा गया।

वर्जित-क्षेत्र (Partially Excluded Areas) कायम किये गये है उनमें उस प्रान्त का गवर्नर भी रेग्युलेशनों के जरिये कानून बना सकेगा।

मॉर्लें-मिण्टो शासन-सुधार

सन् १८९२ के बाद अगला महत्त्वपूर्ण कानून पार्लमेण्ट ने सन् १९०९ में पास किया, जो 'सन् १९०९ का इण्डियन कौंसिल्स एक्ट' के नाम से प्रसिद्ध है और जो तत्कालीन भारत-मंत्री लॉर्ड मॉर्ले और वाइसराय लॉर्ड मिण्टो के उद्योग का फल था। इस एक्ट के द्वारा केन्द्रीय और प्रान्तीय कौंसिलो के अतिरिक्त सदस्यो की संख्या पहले से और भी ज्यादा बढ़ादी गई। उदाहरणार्थ, केन्द्रीय कौंसिल के अतिरिक्त सदस्यों की संख्या बढ़ाकर ६० तक और बंगाल-कौंसिल के अतिरिक्त सदस्यो की संख्या बढ़ाकर लगभग ४५ तक करदी गई। गैर-सरकारी निर्वाचित सदस्यो की संख्या भी पहले से बहुत ज्यादा बढ़ादी गई। लेकिन इस बात का हर जगह ध्यान रक्खा गया कि कही गैर-सरकारी निर्वाचित सदस्यो का बहुमत न होजाय। बंगाल-कौंसिल ही इस नियम का अपवाद रही। शेष सब प्रान्तीय कौंसिलो में नामजद और निर्वाचित दोनों प्रकार के गैर-सरकारी सदस्यो का मिलकर तो थोड़ा-थोड़ा बहुमत रहा, लेकिन केवल निर्वाचित गैर-सरकारी सदस्यो का नही। केन्द्रीय कौंसिलो मे तो निर्वाचित और नामजद दोनों प्रकार के गैर-सरकारी सदस्यो का मिलकर भी बहुमत नही रक्खा गया।

> भारत के राजनैतिक जीवन मे पृथक् निर्वाचन-पद्धति का श्रीगणेश भी मॉर्ले-मिण्टो योजना के साथ ही होता है, जो फिलहाल केवल मुसलमानो के लिए ही जारी की गई थी।

कौंसिलो के निर्माण और संगठन में परिवर्तन करने के अलावा उनके अधिकारो में भी यह परिवर्तन किया गया कि उन्हे मौखिक प्रश्नोपप्रश्न करने और बजट एवं सार्वजनिक महत्व के अन्य विषयो पर सिफारिश के तौर पर प्रस्ताव पास करने का अधिकार भी देदिया गया। लेकिन गवर्नर-

जनरल, गवर्नर या लेफ्टिनेन्ट-गवर्नर की अनुमति के बिना, जो कौंसिलो के प्रधान होते थे, कोई भी प्रस्ताव या प्रश्न नही किया जा सकता था।

इस एक्ट को अमल में लाने के साथ-साथ कई और महत्वपूर्ण परिवर्तन भी ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने ब्रिटिश भारत के शासन-विधान में किये। भारत की राजधानी कलकत्ते से दिल्ली लेआई गई और दिल्ली को पंजाब से निकालकर भारत-सरकार के मातहत चीफ कमिश्नर का एक पृथक् प्रान्त बना दिया गया। पूर्वी बगाल का जो इलाका सन् १९०५ में लॉर्ड कर्जन ने बगाल से निकालकर आसाम में मिला दिया था वह वापस बगाल में मिला दिया गया। बगाल में लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर की जगह एक गवर्नर और कौंसिल की नियुक्ति की गई तथा बिहार व उडीसा के इलाके को बगाल से निकालकर एक पृथक् लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर और कौंसिल के मातहत रक्खा गया।

मॉण्टेगू-चेम्सफोर्ड सुधार

मॉर्ले-मिण्टो योजना से राजनैतिक प्रगति की ओर बढते हुए भारत की आकाक्षायें भला कैसे सन्तुष्ट हो सकती थी? क्योकि कौंसिलो के अधिकार और कर्तव्य तो बढा दिये गये, मगर शासन की मशीन उसी पुराने ढर्रे पर चलती थी।

१९१७ की घोषणा

उधर सन् १९१४ में यूरोपीय महायुद्ध छिड़ गया और उसमें भारतवासियो ने जी खोलकर ब्रिटेन की सहायता की। फलत, भारतवासियो के सहयोग को बनाये रखने के लिए, ब्रिटिश राजनीतिज्ञो को अपनी नीति में कुछ परिवर्तन करना पडा। २० अगस्त १९१७ को ब्रिटिश पार्लमेण्ट की कामन्स-सभा में एक प्रश्न के उत्तर में तत्कालीन भारत-मन्त्री मि० मॉण्टेगू ने जो घोषणा की, वह इसी नीति का परिणाम थी। उस घोषणा के महत्वपूर्ण शब्द इस प्रकार हैं—

"ब्रिटिश सरकार का भारत मे यह उद्देश्य है कि शासन के हरेक विभाग से भारतवासियो का सम्पर्क दिन-प्रतिदिन बढाया जाय और स्वराज्य-सस्थाओ का शनै शनैः विकास हो, ताकि ब्रिटिश साम्राज्य के अविच्छिन्न अग भारत मे धीरे-धीरे उत्तरदायी शासन-पद्धति स्थापित हो सके।"

इस घोषणा के कुछ दिनो बाद मि० मॉण्टेगू स्वयं भारत आये और वाइसराय लॉर्ड चेम्सफोर्ड के सहयोग से भारतीय शासन-सुधारों की एक नई योजना तैयार की, जो मॉण्टेगू-चेम्सफोर्ड (और संक्षेप में, मॉण्ट-फोर्ड) योजना के नाम से प्रसिद्ध है। यह योजना सन् १९२१ में अमल मे लाई गई। सन् १९३५ के गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एेक्ट द्वारा जारी किये गये परिवर्तनो को ठीक-ठीक समझने के लिए इस योजना पर जरा विस्तार से विचार करना आवश्यक है। प्रान्तीय सरकार, प्रान्तीय धारा-सभा, केन्द्रीय सरकार, केन्द्रीय धारा-सभा, और भारत इन पॉच शीर्षको के अन्तर्गत हम मॉण्ट-फोर्ड योजना द्वारा भारत के शासन-विधान में जारी किये गये परिवर्तनों पर विचार करेगे।

प्रान्तीय सरकार

मॉण्टफोर्ड योजना के फलस्वरूप प्रान्तीय सरकारो के संगठन मे सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि मद्रास, बम्बई और बंगाल के अलावा संयुक्तप्रान्त, पंजाब, बिहार-उडीसा, मध्यप्रान्त और आसाम मे भी गवर्नरो की नियुक्ति की गई। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त को सन् १९३२ में गवर्नरी का दर्जा मिला। जिन-जिन प्रान्तों मे गवर्नरी कायम हुई उन-उन प्रान्तो मे एक प्रकार की द्वैध शासन-पद्धति कायम की गई। प्रान्तीय शासन के विषयो को सुरक्षित और हस्तान्तरित इन दो भागो में बॉटा गया, जिनमे सुरक्षित विषयो का शासन गवर्नर और उसकी एग्जीक्यूटिव कौंसिल के और हस्तान्तरित विषयों का शासन गवर्नर और मिनिस्टरो के मातहत रक्खा

गया। जिन प्रान्तो में एग्जीक्यूटिव कौंसिले नही थीं उनमें एग्जीक्यूटिव कौंसिले स्थापित की गई। इनके सदस्य भी गवर्नरो की भाँति सम्राट् द्वारा नियुक्त होते थे; पर मिनिस्टर प्रान्तीय लेजिस्लेटिव कौंसिल के निर्वाचित सदस्य ही नियुक्त किये जाते थे। गवर्नर और एग्जीक्यूटिव कौंसिल के सदस्य सुरक्षित विषयो के शासन के लिए भारत-सरकार के जरिये भारत-मत्री ओर पार्लमेण्ट के प्रति उत्तरदायी थे, जबकि मिनिस्टर लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य होने के नाते हस्तान्तरित विषयो के शासन के लिए लेजिस्लेटिव कौंसिल के प्रति उत्तरदायी समझे जाने लगे। गवर्नर को जहाँ एक ओर मिनिस्टरो की सलाह पर चलने का आदेश दिया गया, वहाँ साथ में उसे यह अधिकार भी दिया गया कि वह चाहे तो मिनिस्टरो की सलाह को न माने। इसके अलावा भारत-सरकार और भारत-मत्री ने भी हस्तान्तरित विषयो में हस्तक्षेप करने का अधिकार अपने हाथ में सुरक्षित रक्खा।

प्रान्तीय विषयो में जो-जो महत्वपूर्ण थे वे आमतौर पर सुरक्षित विषयो की सूची में रक्खे गये और शेष विषयो को हस्तान्तरित विषयो की सूची में डाल दिया गया। उदाहरणार्थ, मालगुजारी, लगान, आवपाशी (सिंचाई), नहर, अकाल-पीडितो की सहायता, कानून और व्यवस्था (अर्थात् पुलिस, जेल और अदालतें), अखबारो और किताबो व छापेखानो पर नियन्त्रण, प्रान्तीय सरकार का क़र्ज़, जगलात (बम्बई व बर्मा के अलावा), कारखानो व मजदूरो की देखभाल और उनके व मिल-मालिको के झगडो को निपटाना आदि विषय सुरक्षित विषयो की सूची में रक्खे गये। और स्थानिक स्वराज्य (Local Self Government), सार्वजनिक स्वास्थ्य व सफाई, अस्पताल, शिक्षा, कृषि, सहकारी सस्थायें, आवकारी (शराब व नशीली चीजें), तामीर (सडके और सरकारी इमारतें) तथा उद्योग-

धन्धो की वृद्धि आदि विषय हस्तान्तरित विषयों की सूची में रक्खे गये।

गवर्नर वाले प्रान्तो में जो धारा-सभायें थी, जोकि लेजिस्लेटिव कौंसिलो के नाम से जानी जाती थी, वे बदस्तूर जारी रही; लेकिन उनके निर्माण और अधिकारो में कई परिवर्तन हुए। पहला परिवर्तन तो यह हुआ कि उनके सदस्यों की संख्या पहले से और ज्यादा बढ़ादी गई। इसके अनुसार विभिन्न प्रान्तो में सदस्यो की संख्यायें बढ़ाकर इस प्रकार होगई—आसाम में ५३, मध्यप्रान्त में ७३, बम्बई में ११४, मद्रास में १३२, बंगाल में १४०। अतिरिक्त सदस्यो का भेद मिटा दिया गया और लेजिस्लेटिव कौंसिलों को एग्जीक्यूटिव कौंसिल का ही विस्तार न मानकर उन्हें पृथक् अस्तित्व दिया गया। लेकिन यह एक महज कानूनी बारीकी थी, क्योकि गवर्नर की एग्जीक्यूटिव कौंसिल के सदस्यों को साधिकार लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य बने रहने का अधिकार फिर भी दिया गया। यह जरूर है कि अब प्रत्येक कौंसिल मे निर्वाचित और गैर-सरकारी सदस्यो का बहुमत रक्खा गया। प्रत्येक लेजिस्लेटिव कौंसिल का जीवन-काल ३ साल रहा, और उसे गवर्नर की मंजूरी से अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार दिया गया। निर्वाचित सदस्यो के चुनाव के लिए मताधिकार-सम्बन्धी नियमो में पहले से बहुत कुछ उदारता दिखाई गई।

प्रान्तीय धारा-सभायें

प्रान्तीय कौंसिलो को प्रान्तीय विषयो पर कानून बनाने का अधिकार दिया गया, लेकिन कई विषय ऐसे ठहराये गये जिनपर वे गवर्नर या गवर्नर-जनरल की पूर्व-अनुमति के बिना कानून नही बना सकती थी। प्रान्तीय सरकारो का बजट भी केन्द्रीय सरकार के बजट से अलग कर दिया गया, और प्रान्तीय कौंसिलो को प्रान्तीय बजट में कुछ काट-छाँट करने का भी अधिकार दिया गया।

केन्द्रीय सरकार के ढांचे में कोई विशेष परिवर्तन मॉण्टफोर्ड-योजना ने नहीं किया। हां, शासन के विषय केन्द्रीय और प्रान्तीय इन दो भागो में बँट जाने के कारण केन्द्रीय सरकार और प्रान्तीय सरकार के कार्य-क्षेत्र लगभग अलग-अलग बँट गये। केन्द्रीय विषयो की सूची में मुख्य विषय ये रक्खे गये: देश की रक्षा और सेना-सम्बन्धी मामले, वैदेशिक विषय, आयात-निर्यात कर, रेलें, डाक व तार विभाग, इन्कमटैक्स, सिक्का, दीवानी और फौजदारी कानून, व्यापार और सरकारी कर्ज वगैरा। इसके अलावा वे सब विषय भी केन्द्रीय विषयो की सूची में ही शुमार किये गये जिनका उल्लेख स्पष्टत किसी भी सूची में नही किया गया था।

केन्द्रीय सरकार

केन्द्रीय धारा-सभा के संगठन में सबसे मुख्य परिवर्तन यह किया गया कि एक भवन की जगह दो भवनो की स्थापना की गई। इनमें पहले भवन का नाम लेजिस्लेटिव असेम्बली रक्खा गया और दूसरे भवन का कौंसिल ऑफ स्टेट। धारा-सभा को गवर्नर-जनरल की एग्जीक्यूटिव कौंसिल का ही एक विस्तार न समझकर पृथक् अस्तित्व दिया गया। गवर्नर-जनरल की एग्जीक्यूटिव कौंसिल के सदस्यो को दोनो भवनो की कार्रवाई में भाग लेने का अधिकार दिया गया, लेकिन उन्हे मत देने का अधिकार उसी भवन मे दिया गया जिसके कि वे गवर्नर-जनरल द्वारा सदस्य नामजद किये जायें। लेजिस्लेटिव असेम्बली को गवर्नर-जनरल की मजूरी से अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार भी दिया गया। किन्तु कौंसिल ऑफ स्टेट का अध्यक्ष अब भी गवर्नर-जनरल द्वारा ही नामजद किया जाता है।

केन्द्रीय धारा-सभा

लेजिस्लेटिव असेम्बली के सदस्यो की संख्या १४५ नियत की गई, जिनमें कम-से-कम ५/७ का निर्वाचित गैर-सरकारी सदस्य होना आवश्यक

परिवर्तन का उद्देश्य यह था कि पार्लमेण्ट में जब उसके वेतन-सम्बन्धी माँग पेश की जाय तो पार्लमेण्ट के सदस्यो को भारत-सम्बन्धी मामलो पर विचार करने का एक और अवसर मिल जाय। लेकिन इण्डिया आफिस का और बहुत-सा खर्चा अब भी हिन्दुस्तान को ही भरना पडता है।

भारत-मन्त्री

मॉण्टफोर्ड-सुधारों के बाद

द्वैध-शासन-पद्धति मॉण्टफोर्ड-सुधारो का मुख्य आधार थी। लेकिन जिस रूप में यह प्रचलित की गई उससे किसी भी प्रान्त को सन्तोष नहीं हुआ। बगाल और मध्यप्रान्त में तो इस शासन-पद्धति की वह मट्टी पलीद हुई कि गवर्नरो को कई बार अपने विशेषाधिकारो से शासन चलाना पडा। प्रान्तीय कौंसिलो ने मिनिस्टरो के लिए वेतन तक मजूर करने से इकार कर दिया। बगाल में तो यहांतक नौबत पहुँची कि जब गवर्नर ने मिनिस्टर नियुक्त किये तो कौंसिल ने उनका वेतन मजूर नही किया, और जब कौंसिल ने वेतन मजूर किया तो गवर्नर को अर्से तक कोई मिनिस्टर नहीं मिला। द्वैध-शासन-पद्धति के प्रति असन्तोष होने के कई कारण थे, जिनमें मुख्य यह था कि मिनिस्टरो और प्रान्तीय धारा-सभाओ को किसी भी विषय में वास्तविक अधिकार देने का प्रयत्न नहीं किया गया। हस्तान्तरित और सुरक्षित विषयो का बँटवारा इस प्रकार किया गया कि मिनिस्टर किसी भी महकमे में कोई क्रियात्मक सुधार कर ही नहीं सकते थे। उदाहरणार्थ, उद्योग-धन्धे तो रक्खे गये हस्तान्तरित विषयो में, लेकिन कारखाने, खानें, मजदूर, बिजली वगैरा को सुरक्षित विषयो में डाल दिया गया। इसी प्रकार कृषि को तो हस्तान्तरित विषय बनाया गया, लेकिन आबपाशी (सिंचाई) को सुरक्षित विषयो में

द्वैध-शासन-पद्धति की असफलता

रक्खा। दूसरी बात यह थी कि मिनिस्टिरो को सरकारी अफसरो और कर्मचारियो के ऊपर शून्य के बराबर अधिकार दिये गये। लेजिस्लेटिव कौंसिलो में सरकारी सदस्यो के गुट ने मिनिस्टरो को अपने हाथ की कठपुतली बना लिया। अर्थ-विभाग एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के सदस्य के मातहत होने के कारण मिनिस्टरो को हस्तान्तरित विभागो के खर्च के लिए एग्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के सदस्यो का मुँह ताकना पडा। इन सब बातो के अलावा, हस्तान्तरित विभागो में भी भारत-मन्त्री और भारत-सरकार का हस्तक्षेप काफी मात्रा में चलता रहा। उदाहरणार्थ, कोई भी मिनिस्टर भारत-मन्त्री की स्वीकृति के बिना ३,०००) मासिक से ऊपर का अफ़सर नियुक्त नही कर सकता था। संक्षेप में कहे तो जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियो को वास्तविक अधिकार और ज़िम्मेदारी देने का कोई वास्तविक प्रयत्न नहीं किया गया। यही हाल केन्द्र में था। यद्यपि असेम्बली का विस्तार और प्रभाव बढ़ा दिया गया, लेकिन सरकार ने उसके निश्चयो पर अमल करने की कभी भी कोशिश नहीं की।

कॉंग्रेस मॉण्टफोर्ड-सुधारो की प्रारम्भ से ही विरोधी थी। गॉंधीजी के नेतृत्व में उसने असहयोग-आन्दोलन के रूप में नये सुधारो का बहिष्कार किया। लेकिन कॉंग्रेसियों का एक दल कौंसिल-प्रवेश के पक्ष में था। पण्डित मोतीलाल नेहरू और देशबन्धु चित्तरञ्जन दास इस दल के नेता थे। उन्होने कॉंग्रेस से बाहर स्वराज-पार्टी का संगठन करके कौंसिलो में सरकार से मोर्चा लेना शुरू किया। सन् १९२४ में केन्द्रीय लेजिस्लेटिव असेम्बली में पण्डित मोतीलाल नेहरू ने यह प्रस्ताव पेश किया कि भारतवर्ष को औपनिवेशिक स्वराज्य दिया जाय और एक गोलमेज़-परिषद् का आयोजन किया जाय, जिसमें भारत में पूर्ण उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए नये विधान का ख़ाका तैयार हो। यह प्रस्ताव भारी

बहुमत से पास हुआ, लेकिन फिर भी सरकार ने इसपर कोई ध्यान नहीं दिया। बाद में उसने सर अलेग्जैण्डर मुडीमैन की अध्यक्षता में एक कमेटी बिठाई, जो आमतौर पर शासन-सुधार-जांच-समिति या रिफार्म्स इनक्वायरी कमेटी (Reforms Enquiry Committee) के नाम से प्रसिद्ध है। लेकिन इस कमेटी की सिफारिशों का भी कोई विशेष परिणाम नहीं हुआ।

सरकार के इस असहानुभूतिपूर्ण रुख से दिन-प्रतिदिन देश में असन्तोष की भावना बढ़ने लगी। अन्त में विवश होकर नवम्बर सन् १९२७ में सरकार को एक शाही कमीशन की नियुक्ति की घोषणा करनी पड़ी। इस कमीशन के सब सदस्य अंग्रेज थे, भारतवासी इसमें एक भी नहीं रक्खा गया। इस अपमान से भारत क्षुब्ध होगया और भारत के एक कोने-से लेकर दूसरे कोने तक कमीशन का जोरों से बहिष्कार किया गया। इस कमीशन के चेयरमैन इंग्लैण्ड की लिबरल पार्टी के एक प्रमुख नेता सर जॉन-साइमन थे, जिसकी वजह से इस कमीशन का नाम साइमन-कमीशन पड़ा।

साइमन-कमीशन की नियुक्ति

साइमन-कमीशन के बहिष्कार का यह परिणाम हुआ कि ब्रिटिश सरकार को अपनी नीति में परिवर्तन करना पड़ा। साइमन-कमीशन की रिपोर्ट अभी प्रकाशित भी न हुई थी कि वाइसराय लॉर्ड अर्विन ने अक्तूबर १९२९ में ब्रिटिश सरकार की अनुमति से दो महत्त्वपूर्ण घोषणायें कीं। इनमें पहली तो यह थी कि सम्राट् की सरकार (अर्थात् ब्रिटिश सरकार) की सम्मति में सन् १९१७ की घोषणा में यह बात निहित है कि भारत का वैधानिक लक्ष्य औपनिवेशिक स्वराज्य की प्राप्ति है। दूसरी घोषणा यह

गोलमेज परिषद् की घोषणा

थी कि साइमन-कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित होजाने के बाद ब्रिटिश सरकार एक परिषद् का आयोजन करेगी, जिसमें वह ब्रिटिश भारत और देशी रियासतो के प्रतिनिधियो के साथ एकसाथ या अलग-अलग विचार-विनिमय करके यह निश्चय करेगी कि भारत के लिए किन-किन शासन-सुधारो की सिफारिश पार्लमेण्ट से की जाय।

मई सन् १९३० में साइमन-कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। इस रिपोर्ट का भी भारत में कमीशन जैसा ही विरोध हुआ। कमीशन ने मार्के की कोई ख़ास सिफारिश नही की। मार्के की सिफारिश सिर्फ एक थी; वह यह कि ब्रिटिश भारत के पुनस्संगठन का आधार फेडरल अथवा संघ-शासन हो, ताकि धीरे-धीरे सारा भारत ही एक कामनवेल्थ के रूप में सम्राट् की छत्र-छाया में आजाय।

कमीशन की रिपोर्ट

साइमन-कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित होजाने के बाद नवम्बर सन् १९३० से जनवरी सन् १९३१ तक लन्दन में गोलमेज परिषद् का अधिवेशन हुआ। कॉंग्रेस गोलमेज परिषद् के इस पहले अधिवेशन में शामिल नहीं हुई, क्योंकि सरकार की तरफ से इस बात का कोई आश्वासन नहीं दिया गया था कि इस परिषद् का एकमात्र उद्देश्य भारत के लिए औपनिवेशिक स्वराज्य का खाका तैयार करना होगा।

गोलमेज़ परिषद्

इस परिषद् में देशी नरेशो की तरफ़ से यह घोषणा की गई कि वे ब्रिटिश भारत और देशी रियासतो के संघ में इस शर्त पर शामिल होने के लिए तैयार है कि केन्द्रीय सरकार में उत्तरदायी शासन-पद्धति स्थापित की जाय। ब्रिटिश सरकार की तरफ़ से नरेशो की यह माँग इस शर्त पर स्वीकार करली गई, कि उत्तरदायी शासन-पद्धति के साथ कई प्रतिबन्धो और संरक्षणो का रक्खा जाना लाज़िमी होगा।

अप्रैल सन् १९३१ में कांग्रेस और सरकार में समझौता (गांधी-अर्विन पैक्ट) होजाने की वजह से कांग्रेस गोलमेज परिषद् के दूसरे अधिवेशन में शामिल हुई। गांधीजी कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि होकर लन्दन गये। कांग्रेस परिषद् में इस शर्त पर शामिल हुई, कि जो कुछ भी संरक्षण और प्रतिबन्ध रक्खे जायँगे वे भारत के हित में ही होंगे। लेकिन जब विलायत में परिषद् का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ, पार्लमेण्ट के आम चुनाव के फलस्वरूप मजदूर दल की सरकार हार गई थी और उसकी जगह 'राष्ट्रीय सरकार' कायम होचुकी थी, जिसमें अनुदार दल के प्रतिनिधियो का बहुमत था। इस राष्ट्रीय सरकार ने संरक्षणो और प्रतिबन्धों के बहाने सारे अधिकारो को ब्रिटेन के हित में ही सुरक्षित कर लिया।

सन् १९३२ के अन्त में ब्रिटिश सरकार ने छोटे पैमाने पर गोलमेज परिषद् का एक और अधिवेशन किया, लेकिन चूँकि कांग्रेस फिर सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू कर चुकी थी इसलिए वह उसमें शरीक नहीं हुई।

मार्च सन् १९३३ में ब्रिटिश सरकार ने भारत के भावी शासन-विधान के सम्बन्ध में अपने अन्तिम प्रस्ताव एक व्हाइट पेपर अथवा श्वेत-पत्र (सरकारी खरीता) के रूप में प्रकाशित किये। जितने भी प्रतिबन्ध और संरक्षण शासन-विधान की किसी योजना में ठूँसे जा सकते हैं उनको ब्रिटेन के हित में इस योजना में ठूँसने की कोशिश की गई। फलत., साइमन-कमीशन की रिपोर्ट की तरह, श्वेत-पत्र का भी भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक घोर विरोध किया गया।

श्वेत-पत्र या सरकारी खरीता

लेकिन सरकार श्वेत-पत्र के प्रस्तावो पर भी बाद में कायम न रही। लार्ड लिनलिथगो की अध्यक्षता में पार्लमेण्ट के लगभग ३० सदस्यों की एक

और कमेटी श्वेत-पत्र के प्रस्तावो पर विचार करने के लिए नियुक्त की गई, जो आमतौर पर ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी सिलेक्ट कमेटी के नाम से प्रसिद्ध है। लगभग १८ महीने के गुप-चुप विचार-विमर्श के बाद, अक्तूबर १९३४ में, इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की। इस रिपोर्ट का भारत के सब दलो ने तीव्र बहिष्कार किया, क्योंकि यह रिपोर्ट लौट-फिरकर उस साइमन-कमीशन की रिपोर्ट के प्रस्तावो पर ही वापस आ पहुँची थी जिसका कि भारत पहले ही एकस्वर से विरोध कर चुका था।

ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की नियुक्ति

५ फरवरी १९३५ को ब्रिटिश सरकार ने ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की योजना के आधार पर पार्लमेण्ट की कामन्स-सभा में एक बिल पेश किया। लगभग ४ महीने तक यह बिल कामन्स-सभा के विचाराधीन रहा। इस बीच में सरकार ने ब्रिटेन के अनुदार दल (कञ्जरवेटिवों) और भारत के देशी नरेशो को खुश करने की गरज से सैकडो आवश्यक-अनावश्यक संशोधन इस बिल में किये। अन्त मे ४ जून १९३५ को कामन्स-सभा में बिल का तृतीय वाचन पास हुआ और बिल लॉर्ड-सभा में पेश किया गया। लॉर्ड-सभा मे भी संशोधनो का वही सिलसिला जारी रहा जो कामन्स-सभा से शुरू हुआ था। आखिर २४ जुलाई को लॉर्ड-सभा में भी बिल का तृतीय वाचन समाप्त हुआ। इसके बाद बिल एकबार फिर कामन्स-सभा के सामने आया और कामन्स-सभा ने फिर कुछ संशोधन किये। इन संशोधनों के लॉर्ड-सभा द्वारा स्वीकृत होजाने पर २ अगस्त १९३५ को बिल पर सम्राट् की स्वीकृति मिली और बिल गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की शक्ल में कानून की किताब में आगया।

नया शासन-विधान

गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की योजना को पार्लमेण्ट ने आमतौर

पर दो भागो में बांटा है---(१)'प्रान्तीय स्वराज्य' और (२) 'फेडरेशन'। ब्रिटिश सरकार ने फिलहाल एक्ट की उन धाराओं को जारी किया है जिनका आमतौर पर 'प्रान्तीय स्वराज्य' से सम्बन्ध है। ये धारायें १ अप्रैल सन् १९३७ से अमल में लाई गई है। एक्ट का शेष भाग तब अमल में आयगा जब कि फेडरेशन की स्थापना की जायगी।

: १ :

नये विधान का 'प्रान्तीय स्वराज्य'

ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का दावा

नये शासन-विधान के मातहत १ अप्रैल १९३७ से ब्रिटिश भारत के ११ प्रान्तो में प्रान्तीय शासन की जो योजना अमल में आई है, ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का दावा है कि उसके द्वारा ब्रिटिश सरकार ने उन प्रान्तो को 'प्रान्तीय विषयो' के शासन में वास्तविक उत्तरदायित्व यानी जिम्मेदारी देने का प्रयत्न किया है और यही वास्तव में 'प्रान्तीय स्वराज्य' है। लेकिन यदि कोई भी निष्पक्ष व्यक्ति ब्रिटिश सरकार के इस 'प्रान्तीय स्वराज्य' के असली स्वरूप को पहचानने की थोडी भी कोशिश करे तो उसे फौरन ही पता चल जायगा कि ब्रिटिश सरकार के 'प्रान्तीय स्वराज्य' और सच्चे उत्तरदायी शासन में थोड़ा-बहुत नही बल्कि जमीन-आसमान का फर्क है।

प्रान्तीय स्वराज्य का वास्तविक अभिप्राय

प्रान्तीय स्वराज्य का वास्तविक अभिप्राय यह है कि प्रान्तीय विषयो के शासन के लिए एकमात्र जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि ही जिम्मेदार हो, और उन विषयो के शासन में किसी भी बाह्य सत्ता का हस्तक्षेप न हो। अर्थात् न तो केन्द्रीय सरकार और न ब्रिटिश सरकार ही किसी प्रकार का दख़ल दे सकें। दूसरी गोलमेज परिषद् के अवसर पर गाँधीजी ने जब इस बात की घोषणा की थी कि यदि ब्रिटिश सरकार इस समय भारत के प्रान्तों को प्रान्तीय स्वराज्य देने के लिए तैयार होजाय तो वह उसे

सहर्ष स्वीकार कर लेंगे, तब उनका तात्पर्य यही था कि जो भी विषय प्रान्तीय ठहराये जाकर शासन के लिए प्रान्तों के सुपुर्द किये जायें उनके शासन में केन्द्रीय सरकार, ब्रिटिश सरकार या ब्रिटिश पार्लमेण्ट का कोई हस्तक्षेप बाकी न रहे और एकमात्र जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि ही उनके शासन के लिए उत्तरदायी हो। लेकिन ब्रिटिश सरकार ने भारत के प्रान्तों को इन अर्थों में प्रान्तीय स्वराज्य देने से साफ इकार कर दिया।

ब्रिटिश राजनीतिज्ञों की परिभाषा

ब्रिटिश राजनीतिज्ञों की प्रान्तीय स्वराज्य की जो परिभाषा है वह वास्तव में बहुत ही विचित्र है। ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी प्रान्तीय स्वराज्य की व्याख्या करते हुए अपनी रिपोर्ट में लिखती है, कि "प्रान्तीय स्वराज्य (Provincial Autonomy) से यह अभिप्राय है कि गवर्नर-वाले प्रत्येक प्रान्त में प्रान्तीय धारा-सभा और प्रान्तीय सरकार होगी, जिन्हे एक मर्यादित क्षेत्र में शासन का पूर्ण अधिकार होगा और उस क्षेत्र में वे किसी कदर केन्द्रीय सरकार तथा केन्द्रीय धारा-सभा के नियन्त्रण से मुक्त होगी।" [१]

ब्रिटिश पार्लमेण्ट इस रिपोर्ट को प्रस्ताव द्वारा मजूर कर चुकी है, जब हमें ब्रिटिश राजनीतिज्ञों की ओर से इस परिभाषा को प्रामाणिक ही समझना चाहिए। यदि प्रान्तीय स्वराज्य की इस परिभाषा का जरा भी विश्लेषण किया जाय, तो यह बात फौरन स्पष्ट होजाती है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञों की निगाह में प्रान्तीय स्वराज्य के लिए केवल इस बात की ही आवश्यकता है कि प्रान्तीय धारा-सभा और प्रान्तीय सरकारों को केन्द्रीय धारा-सभा और केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण से मुक्त कर दिया जाय। उनकी निगाह में प्रान्तीय स्वराज्य के लिए न तो

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ २९, पैरा ४८।

इस बात की आवश्यकता है कि प्रान्तीय शासन को ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश पार्लमेण्ट के नियन्त्रण से मुक्त कर दिया जाय, और न इस बात की कि प्रान्तों में जो शासन-पद्धति कायम की जाय उसका आधार उत्तरदायी शासन हो। ब्रिटिश राजनीतिज्ञो की इस परिभाषा में इस बात का तो कोई उल्लेख ही नही है कि प्रान्तीय स्वराज्य की योजना में प्रान्तीय धारा-सभा और प्रान्तीय सरकार का क्या रूप होगा, और उन्हे जहाँ एक ओर केन्द्रीय सरकार और केन्द्रीय धारा-सभा के नियन्त्रण से छुटकारा मिलेगा वहाँ ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश पार्लमेण्ट के नियन्त्रण से भी छुटकारा मिलेगा या नही ? यदि प्रान्तीय स्वराज्य की किसी योजना में प्रान्तीय शासन के ऊपर ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश पार्लमेण्ट का अंकुश लगभग उसी प्रकार चलता रहे जिस प्रकार कि अबतक चलता रहा है, और यदि प्रान्तीय सरकार और प्रान्तीय धारा-सभायें न तो जनता की प्रतिनिधि हो और न जनता के प्रति जिम्मेदार हो, तो कैसे कहा जा सकता है कि वह योजना प्रान्तीय स्वराज्य की योजना है? इसीलिए हमारा कहना है, और आगे के पृष्ठो में यथासम्भव इसी बात को दिखलाने का यत्न किया गया है, कि ब्रिटिश सरकार ने प्रान्तीय स्वराज्य की जो योजना १ अप्रैल १९३७ से जारी की है वह वास्तव में सच्चे प्रान्तीय स्वराज्य की योजना नही बल्कि उसकी एक नकल और छायामात्र है।

'प्रान्तीय स्वराज्य' की रूपरेखा

ब्रिटिश सरकार के इस 'प्रान्तीय स्वराज्य' की योजना पर विस्तार से विचार करने से पहले, हमें सरसरी तौर पर उसकी रूपरेखा को जान लेना जरूरी है। इस योजना की मुख्य रूपरेखा यह है कि प्रत्येक गवर्नर वाले प्रान्त में कानूनो का निर्माण करने के लिए एक धारा-

सभा होगी, जिसके सदस्य आमतौर पर जनता द्वारा निर्वाचित हुआ करेंगे। इस धारा-सभा को उन विषयो पर जो एक्ट में प्रान्तीय घोषित किये गये हैं, कानून बनाने का अधिकार होगा, लेकिन गवर्नर की स्वीकृति मिले बिना कोई भी बिल कानून की शक्ल न लेसकेगा। शासन का काम चलाने के लिए मिनिस्टरो की एक कौंसिल होगी, जिसके सदस्य आमतौर पर उस दल के सदस्यो में से चुने जाया करेंगे जिसका कि प्रान्तीय धारा-सभा में बहुमत होगा, लेकिन गवर्नर को अपनी 'खास जिम्मेदारियों' को पूरा करने के लिए अपने मिनिस्टरो की सलाह की अवहेलना करने का अधिकार होगा। इन 'खास जिम्मेदारियो' की व्याख्या करने का एकमात्र अधिकार गवर्नर, वाइसराय तथा भारत-मन्त्री को होगा और उसमें अदालतो, मिनिस्टरो या धारा-सभा को हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार न होगा। इसके अलावा गवर्नरो को एक्ट व आर्डिनेन्स बनाने, खर्चा मजूर करने और शासन विधान के असफल होने पर सारे अधिकार अपने हाथ में लेलेने का भी विशेषाधिकार होगा। धारा-सभाओ के कानून बनाने के अधिकारो पर भी तरह-तरह के प्रतिबन्ध होगे और गवर्नर को धारा-सभाओ की कार्रवाई में हस्तक्षेप करने के बहुत-से अधिकार होगे। गवर्नर की नियुक्ति यथावत ब्रिटिश सरकार के हाथ में ही रहेगी।

इण्डियन सिविल सर्विस, इण्डियन पुलिस और इण्डियन मेडिकल सर्विस (सिविल) के अफसरों की भर्ती यथापूर्व भारत-मन्त्री के ही हाथ में रहेगी और इनके ऊपर आमतौर पर मिनिस्टरो और धारा-सभाओ के अधिकार शून्य के बराबर होगे। प्रान्त के शेष अफसरो और कर्मचारियो की भर्ती के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक पब्लिक सर्विस कमीशन रहेगा, जिसके सदस्यो की नियुक्ति में मिनिस्टरो का कोई हाथ न होगा।

प्रान्त की सब अदालतो के ऊपर एक हाईकोट होगा, जिसके जजों की नियुक्ति यथापूर्व ब्रिटिश सरकार के हाथ में रहेगी। मिनिस्टरों को हाईकोट से सम्बन्ध रखनेंवाले मामलो में आमतौर पर कोई दखल देनें का अधिकार न होगा।

ब्रिटिश पार्लमेण्ट, भारत-मन्त्री और वाइसराय भी गवर्नरो के जरिये प्रान्त के शासन में उचित हस्तक्षेप कर सकेंगे।

प्रान्तों का नया क्रम

एक्ट की धारा ४६ के अनुसार प्रान्तीय स्वराज्य की यह योजना इन ११ प्रान्तो में जारी की गई है--(१) मद्रास,(२) बम्बई,(४) बंगाल, संयुक्तप्रान्त, (५) पंजाब,(६) बिहार, (७) मध्यप्रान्त व बरार, (८) आसाम, (९) पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, (१०) उडीसा और(११)सिन्ध। इन प्रान्तो को एक्ट में गवर्नर-प्रान्त का दर्जा दिया गया है।

इन प्रान्तों के अलावा ६ प्रान्त ब्रिटिश भारत में और है, जिनमें चीफ कमिश्नरियाँ कायम है और जिनमें शासन का काम केन्द्रीय सरकार चीफ कमिश्नरो के जरिये चलाती है। ये चीफ कमिनरियाँ इस प्रकार है—(१) ब्रिटिश बलूचिस्तान, (२)दिल्ली,(३) अजमेर-मेरवाड़ा,(४) कुर्ग, (५) अण्डमान-निकोबार और (६) पन्थ पीपलोदा। इन प्रान्तो में प्रान्तीय स्वराज्य की योजना अभीतक जारी नही कीगई है। कुर्ग के अलावा इनमें से किसी प्रान्त में कोई लेजिस्लेटिव कौसिल भी नही है।

बर्मा—बर्मा जो अभीतक ब्रिटिश भारत का ही एक अंग था, १ अप्रैल १९३७ से ब्रिटिश भारत से अलग कर दिया गया है। बर्मा के लिए जो शासन-विधान ब्रिटिश सरकार ने बनाया है उसके मूल सिद्धान्त भी लगभग वही है जो ब्रिटिश भारत और ब्रिटिश भारत के प्रान्तो के लिए ब्रिटिश सरकार ने निर्धारित किये है। अन्तर केवल इतना ही है कि

बर्मा में अब केन्द्रीय और प्रान्तीय दो सरकारे जुदा-जुदा न रहेगी और बर्मा भारतीय सघ (फेडरेशन) में शामिल न होगा। बर्मा-सरकार अब भारत-सरकार के मातहत न होकर सीधी ब्रिटिश सरकार और भारत-मन्त्री के (जो बर्मा के मामलो में बर्मा-मन्त्री कहलायगा) मातहत रहेगी।

अदन—बर्मा के साथ-साथ अदन भी १ अप्रैल सन् १९३७ से ब्रिटिश भारत से अलग कर दिया गया है और अब उसका शासन सीधा ब्रिटिश सरकार के कॉलोनियल आफिस के मातहत रहेगा।

: २ :

गवर्नर

गवर्नरों की नियुक्ति

गवर्नरो की नियुक्ति, एक्ट की धारा ४८ के अनुसार, कमीशन के जरिये सम्राट् द्वारा की जाती है। प्रत्येक गवर्नर को उसकी नियुक्ति पर जो नियुक्ति-पत्र मिलता है उसीका नाम कमीशन है। और चूंकि ब्रिटेन में सम्राट् हरेक मामले में अपने मिनिस्टरो की सलाह पर निर्भर रहते है, इसलिए गवर्नरो की नियुक्ति वास्तव में भारत-मंत्री के हाथ मे ही समझनी चाहिए, चाहे कमीशन सम्राट् के हस्ताक्षरो से ही क्यो न जारी किया जाय।

इस नियुक्ति-पत्र के अलावा, जो प्रत्येक गवर्नर को उसके नाम से जारी किया जाता है, दो और खरीतो से भी गवर्नर का सम्बन्ध रहता है। इनमें पहले को 'लेटर्स पेटेण्ट' अर्थात् 'खुला पत्र' और दूसरे को 'इन्स्ट्रूमेण्ट ऑफ इन्स्ट्रक्शन' यानी 'हिदायतनामा' या 'आदेश-पत्र' कहते हैं।

वाइसराय की नियुक्ति की भाँति गवर्नरो की भी नियुक्ति आमतौर पर ५ साल के लिए की जाती है, हालांकि ऐसा कोई कानूनी नियम नहीं है। मद्रास, बम्बई और बगाल इन तीन प्रान्तो के, जो पहले प्रेसिडेंसी कहलाते थे, गवर्नर आमतौर पर वे अंग्रेज होते है जो ब्रिटेन के सार्वजनिक या पार्लमेण्टरी जीवन में प्रमुख स्थान पा चुके हो। शेष प्रान्तो के गवर्नर आमतौर पर इण्डियन सिविल सर्विस के उन उच्च अंग्रेज अफसरों में से लिये जाते है जो किसी प्रान्तीय सरकार या केन्द्रीय

सरकार के सेक्रेटरी पद तक पहुँच गये हो या वाइसराय या किसी गवर्नर की एग्जीक्यूटिव कौंसिल के सदस्य हो। प्रान्तो में एग्जीक्यूटिव कौंसिलो के न रहने पर अब केवल प्रान्तीय सरकारो के सेक्रेटरी ही इस पद के लिए चुने जा सकते है। वैसे, जबतक गवर्नरो को प्रान्तीय शासन के कार्य में हस्तक्षेप करने के वास्तविक अधिकार मिले हुए है, यह किसी भी हालत में उपयुक्त नही मालूम पडता कि जो सेक्रेटरी मिनिस्टरो के मातहत काम कर चुके हो उन्हीको मिनिस्टरो के ऊपर गवर्नर नियुक्त किया जाय। हिज हाइनेस आगाखॉ के नेतृत्व में जो प्रतिनिधि-मण्डल ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी के सामने पेश हुआ था उसने इस बात पर जोर भी दिया था कि भविष्य में सिविल सर्विस के अफसरो को गवर्नरी का मौका न दिया जाय, लेकिन कमेटी ने आगाखॉ-प्रतिनिधि-मण्डल की मॉग की लापरवाही से अवहेलना करते हुए अपनी रिपोर्ट में लिखा है, कि "हम कोई कारण नही देखते कि सम्राट् के हाथो को इस प्रकार बांधने से क्या लाभ होगा। गवर्नरी के लिए यदि योग्य-से-योग्य व्यक्ति मिल सकते है तो केवल सिविल सर्विस के सदस्यो में से ही।"[१]

यह ध्यान रखने की बात है कि भारतीय नेता आमतौर पर सिविलियन गवर्नरो के बजाय उन गवर्नरो को ज्यादा पसन्द करते है जो सीधे विलायत के सार्वजनिक और पार्लमेण्टरी जीवन में से लिये जाते है, क्योकि उनके विचारो में अपेक्षाकृत कुछ उदारता होती है।

एक बात और। प्रान्त के निवासियो, प्रान्त की धारा-सभा या प्रान्त के मन्त्रि-मण्डल को गवर्नर की नियुक्ति के बारे में दखल देने का न तो कोई अधिकार दिया गया है और न ही उनसे इस बारे में कोई पूछ-ताछ की जायगी। इस भय से कि कही उपनिवेशो (डोमिनियन) की भाँति

१ ज्वाइन्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पैरा १०२।

भारत में भी यह माँग न उठाई जाय कि गवर्नर और गवर्नर-जनरल की नियुक्ति मिनिस्टरो की सलाह पर होनी चाहिए, पार्लमेण्टरी कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में इस बात का खुलासा कर दिया है कि गवर्नर-जनरल या गवर्नरो की नियुक्ति के बारे में किसीभी मन्त्रि-मण्डल को सलाह देने का अधिकार नही होगा।[1]

गवर्नरों का भारतीयकरण

उपनिवेशो की इस माँग के सिद्धान्त को कि गवर्नर उस उपनिवेश का ही कोई निवासी हो, ब्रिटिश सरकार कई वर्ष पहले स्वीकार कर चुकी है, और जहाँतक हमें मालूम है इसपर अमल भी होने लगा है, लेकिन हिन्दुस्तान में गवर्नरो के भारतीयकरण की ओर ब्रिटिश सरकार ने अभीतक कोई ध्यान नही दिया है। इसकी वजह है, और वह यह है कि जहाँ उपनिवेशो में ब्रिटिश सरकार ने उत्तरदायी शासन-पद्धति को यथासम्भव अक्षरशः जारी करनें का प्रयत्न किया है वहाँ भारत में उसका ऐसा कोई इरादा नहीं दिखाई देता; नही तो गवर्नरो को इतने अधिक अधिकारो और विशेषाधिकारो से क्यो विभूषित किया जाता? जबतक गवर्नरो को वास्तव में अपने अधिकारो और विशेषाधिकारों को प्रयोग में लाने का अवसर दिया जाता है और जबतक वे इनके प्रयोग में भारतीय जनता के प्रति उत्तरदायी न होकर ब्रिटिश जनता और ब्रिटिश पार्लमेण्ट के प्रति उत्तरदायी है, तबतक गवर्नरो का भारतीयकरण न तो सम्भव ही दिखाई देता है और न उससे कुछ विशेष लाभ ही है। हाँ, यदि गवर्नरो को भारतीय जनता के प्रति उत्तरदायी बना दिया जाय, या उन्हे केवल उपाधिधारी गवर्नर का स्थान दे दिया जाय, तो उनके भारतीयकरण से लाभ हो सकता है।

१. ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पैरे ९७ और १९५।

लेटर्स पेटेण्ट

प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर के ओहदे का निर्माण सम्राट् के 'लेटर्स पेटेण्ट' द्वारा किया गया है। नये विधान के अमल में आने से कुछ काल पूर्व ही ये लेटर्स पेटेण्ट जारी किये गये थे। इनके द्वारा प्रत्येक सरकारी अधिकारी और भारतवासी को यह आदेश किया गया है कि वे हर वक्त गवर्नर को सहायता देते रहे। इन लेटर्स पेटेण्ट के मातहत प्रत्येक गवर्नर को स्वास्थ्य सुधारने या अपने किसी प्राइवेट काम के लिए भारत से बाहर जाने के लिए भारत-मन्त्री से चार महीने तक की छुट्टी मांगने का अधिकार है। चार महीने से ज्यादा की छुट्टी देने के लिए भारत-मन्त्री को पार्लमेण्ट के दोनो भवनो में सफाई पेश करनी पडेगी।

आदेश-पत्र

गवर्नर को अपने अधिकारो के प्रयोग में किन-किन सिद्धान्तो पर चलना चाहिए और भिन्न-भिन्न परिस्थितियो में अपने अधिकारो का प्रयोग किस तरह करना चाहिए आदि बातो का उल्लेख सम्राट् के एक आदेश-पत्र यानी हिदायतनामे द्वारा गवर्नर को किया जाता है, जिसे एक्ट में 'इस्ट्रूमेण्ट ऑफ इंस्ट्रक्शन' कहा गया है। एक्ट द्वारा गवर्नरो को जितने भी अधिकार दिये गये है उनका प्रयोग गवर्नर कानून की निगाह में स्वतन्त्ररूप से नही बल्कि सम्राट् के प्रतिनिधि की हैसियत से ही करते है, अत· गवर्नरो को अपने नियंत्रण में रखने का यह एक सुगम मार्ग सम्राट् ने अपने हाथ में रक्खा है। नये विधान में इन आदेश-पत्रो का वास्तविक महत्त्व यह है कि ब्रिटिश सरकार इन आदेश-पत्रो के द्वारा गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट में परिवर्त्तन किये बिना भी भारत में उत्तरदायी शासन की मात्रा बहुत कुछ बढा सकती है, क्योकि एक्ट की कोई भी धारा सम्राट् को गवर्नरो को यह आदेश देने से नहीं

रोकती कि भविष्य में गवर्नर अपने सब अधिकारों का प्रयोग प्रान्त की धारा-सभा और मन्त्रि-मण्डल की मर्जी के माफिक ही किया करे। इन आदेश-पत्रों के बारे में यह बात भी अच्छी तरह जान लेना जरूरी है कि इनके द्वारा गवर्नरों को आमतौर पर कोई अधिकार सम्राट् द्वारा नहीं प्रदान किये जाते। इनके द्वारा तो गवर्नरों को केवल यह निर्देश किया जाता है कि वे अपने उन अधिकारों का, जो गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के अन्तर्गत उन्हें दिये गये हैं, प्रयोग किस प्रकार करें।

आदेश-पत्रों के बारे में पार्लमेण्टरी नीति में परिवर्तन

अभीतक जो आदेश-पत्र भारत के या अन्य उपनिवेशों के गवर्नर-जनरल या गवर्नरों को सम्राट् द्वारा जारी किये जाते थे उनमें पार्लमेण्ट कोई दखल नहीं देती थी। लेकिन गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट ने इस पुराने नियम को एकदम उठाकर ताक पर रख दिया है। एक्ट की धारा ५३ के अनुसार अब सम्राट् द्वारा जारी किये प्रत्येक आदेश-पत्र के लिए पार्लमेण्ट के दोनों भवनों की मंजूरी भी लेनी पड़ेगी। आदेश-पत्रों के मामले में इस प्रकार पार्लमेण्ट के दोनों भवनों को और खासकर लॉर्ड-सभा को अधिकार देने का एकमात्र कारण यही दिखाई देता है कि ब्रिटेन का अनुदार-दल, जिसका आजकल कामन्स-सभा में बहुमत है, यह नहीं चाहता कि भविष्य में भारतीय आकांक्षाओं से सहानुभूति रखनेवाले किसी दल का कामन्स-सभा में बहुमत होजाय तो वह दल लॉर्ड-सभा की मर्जी के बिना ही गवर्नरों के आदेश-पत्रों में परिवर्तन कर सके और भारत में उत्तरदायी शासन की मात्रा बढ़ा सके।

आदेश-पत्रों के अन्तर्गत गवर्नरों के कर्तव्य

प्रान्तीय स्वराज्य के प्रारम्भ होने पर भिन्न-भिन्न प्रान्तों के गवर्नरों को जो नये आदेश-पत्र जारी किये गये हैं वे एक-दूसरे से लगभग मिलते-जुलते

है। केवल पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और मध्यप्रान्त व वरार के गवर्नरो के आदेश-पत्रो में एक-दो धारायें विशेष है। यहाँ हम इन आदेश-पत्रो की कुछ ऐसी धाराओ का ही वर्णन करेगे जिनका गवर्नर के किसी अधिकार-विशेष से कोई सम्वन्ध नहीं है वल्कि जिनके द्वारा गवर्नरो को कुछ ख़ास कर्त्तव्यो को पूरा करने का जिम्मा दिया गया है।

आदेश-पत्रो की दूसरी धारा के अनुसार गवर्नरो को यह आदेश किया गया है कि वे अपने नियुक्ति-पत्र को पूर्ण गम्भीरता के साथ प्रान्त के हाई-कोर्ट के चीफ जस्टिस के सामने, या उसकी अनुपस्थिति में उसी हाईकोर्ट के किसी और जज के सामने, किसी के ज़रिये पढ़वायें और प्रकाशित करे।

तीसरी धारा के अनुसार प्रत्येक गवर्नर को यह आदेश किया गया है कि वह प्रान्त के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस या अन्य किसी जज के सामने पहले सम्राट् के प्रति वफादारी यानी राजभक्ति की शपथ ले और फिर इस वात की शपथ ले कि वह अपने ओहदे का काम ठीक तरह से निवाहेगा और निष्पक्ष रहकर न्यायपूर्वक शासन करेगा।

चौथी धारा के अनुसार गवर्नर को यह अधिकार और आदेश दिया गया है कि वह या तो स्वय या किसी और व्यक्ति द्वारा प्रत्येक मिनिस्टर को, जिसे वह नियुक्त करे, पहले तो इस आशय की शपथ खिलावे कि वह अपने सम्राट् की सचाई के साथ नौकरी वजावेगा और निष्पक्ष होकर देश के कानून व रिवाजो के माफिक हरेक व्यक्ति के साथ न्याय करेगा, और दूसरे यह कि मिनिस्टरी के ओहदे के कारण ज्ञात हुई किसी भी बात को वह किसीके सामने तवतक ज़ाहिर न करेगा जवतक कि ऐसा करना मिनि-स्टरी के ओहदे के फर्ज़ को अदा करने के लिए ज़रूरी न हो, या जवतक कि गवर्नर—जहाँतक गवर्नर के विशेषाधिकारो से सम्वन्ध रखने वाले किसी मामले से वह वात सम्वन्ध रखती हो—ख़ासतौर पर अनुमति न देदे।

छठी धारा के अनुसार गवर्नर को इस बात की याद दिलाई गई है कि चूँकि गवर्नर के भारत से गैरहाजिर रहने में बहुत हानि होने की सम्भावना है, हमारा गवर्नर भारत छोड़कर तबतक बाहर नही जायगा जबतक कि वह हमसे या हमारे भारत-मन्त्री के जरिये छुट्टी न लेले।

बीसवी धारा के अनुसार गवर्नर को यह आदेश दिया गया है कि वह (१) सुशासन जारी रखने की हरचन्द कोशिश करे; (२) नैतिक, सामाजिक और आर्थिक हित को बढ़ानेवाले उपायो को जारी करने और प्रान्त के सार्वजनिक जीवन एवं शासन मे जनता के प्रत्येक वर्ग को उचित स्थान दिलानेवाले उपायो को जारी करने की हरचन्द कोशिश करे; और (३) हरेक वर्ग एवं धर्म के अनुयायियो में सहयोग एवं सद्भावना और धार्मिक विश्वासो एवं भावनाओ के प्रति सहिष्णुता उत्पन्न करने की हरचन्द कोशिश करे और इन आदेशो का वह, जब भी कभी उसे अपने अधिकारो का प्रयोग करने का मौका हो, हर समय खयाल रक्खे।

गवर्नरों के खर्चे

एक्ट के तीसरे परिशिष्ट में उन खर्चो का जिक्र किया गया है जो प्रत्येक प्रान्त में उस प्रान्त के गवर्नर के वेतन और उसकी आन-बान व शान को बनाये रखने के लिए करने पड़ेंगे। इस परिशिष्ट की धारा १ के अनुसार गवर्नरो को निम्न प्रकार वार्षिक वेतन दिया जाया करेगा :—

वेतन

मद्रास, बम्बई, बगाल और संयुक्तप्रान्त मे	१,२०,००० रु०
पंजाब और बिहार में	१,००,००० ,,
मध्यप्रान्त व बरार में	७२,००० ,,
आसाम, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और सिन्ध में उड़ीसा और सिंध में।	६६,००० ,,

छुट्टी जाने पर उन्हे निम्न प्रकार मासिक वेतन मिला करेगा —

मद्रास, बगाल, बम्बई, सयुक्तप्रान्त, पजाव और बिहार के गवर्नरो को	४,००० रु०
मध्यप्रान्त व बरार के गवर्नर को	३,००० ,,
शेष प्रान्तो के गवर्नरो को	२,७५० ,,

परिशिष्ट की धारा २ के अन्तर्गत सम्राट् को यह अधिकार दिया गया है कि वह उन भत्तो की रकमें समय-समय पर आर्डर-इन-कौंसिलो[1] द्वारा नियत करते रहे जिनका गवर्नरो को दिया जाना उनकी आन-बान व शान के लिए जरूरी हो।

भत्ते

इसी प्रकार धारा ४ के अनुसार सम्राट् को आर्डर-इन-कौंसिल द्वारा यह निश्चय करने का अधिकार दिया गया है कि गवर्नरो को चुंगी वगैरा के मामले में क्या-क्या रिआयते प्राप्त होगी। गवर्नरो को दिये जानेवाले इन विभिन्न भत्तो और चुंगी-सम्बन्धी रिआयतो के बारे में जो आर्डर-इन-कौंसिल सम्राट् ने जारी किया है, वह बडा मनोरजक है। इसके अनुसार प्रत्येक गवर्नर को नियुक्ति के समय सरञ्जाम (equipment) और सफर-खर्च के लिए कई सौ पौण्ड भत्ते लेने का अधिकार होगा। भिन्न-भिन्न प्रान्तो के गवर्नरो के लिए भिन्न-भिन्न रकमें नियत की गई है। उदाहरण के लिए उन भत्तो को देखिए, जो सयुक्तप्रान्त के गवर्नर को नियुक्ति के समय मिला करेगे। सयुक्तप्रान्त का गवर्नर नियुक्ति के समय

[1] आर्डर-इन-कौंसिलो से अभिप्राय सम्राट् के उन आज्ञा-पत्रो से है जो प्रिवी कौंसिल की सलाह से जारी किये जाते है। चूँकि प्रिवी कौंसिल की बैठक के लिए किसी खास कोरम की जरूरत नही होती, भारत-सम्बन्धी सब आर्डर-इन-कौंसिल भारत-मन्त्री की सलाह पर ही जारी होते है। नये एक्ट मे भारत-सम्बन्धी सब आर्डर-इन-कौंसिलो को पार्लमेण्ट के दोनो भवनो से मजूर कराना भी लाजिमी करदिया गया है।

यूरोप मे निवास करता हो तो उसे एकमुश्त १,८०० पौण्ड लेने का अधिकार होगा, जबकि भारत या सीलोन में निवास करता हो और भारत का सरकारी नौकर न हो तो वह एकमुश्त ६५० पौण्ड लेने का अधिकारी होगा। लेकिन यदि वह भारत मे सरकारी नौकर हो (गवर्नर के अलावा), तो उसे एकमुश्त ४०० पौण्ड मिलेगे। और यदि वह किसी दूसरे प्रान्त का पहले से गवर्नर हो, तो उसे २०० पौण्ड सरञ्जाम के लिए मिलेगे और अपना, अपने परिवार का तथा अपने सारे अमले का असली सफर-खर्च (मय असबाब के लेजाने के खर्च के) उसे मिलेगा। यदि नियुक्ति के समय वह यूरोप, भारत या सीलोन के अलावा और कही रहता हो तो उसे ९०० पौण्ड सरजाम के लिए और अधिक-से-अधिक ३०० पौण्ड सफर-खर्च के लिए मिलेगे, जिसकी असली रकम हरेक मर्तबा भारत-मत्री द्वारा निर्धारित की जाया करेगी।

इन भत्तों के अलावा भारत-मंत्री को समय-समय पर हरेक गवर्नर के लिए यह निश्चय करने का भी अधिकार होगा कि उसे अपने लिए मोटरे खरीदने, उन्हे अपने प्रान्त मे लेजाने और उनका बीमा कराने के लिए प्रान्त का कितना रुपया खर्च करने का अधिकार होगा।

सरकारी कोठियाँ

प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर को प्रान्त की उन सरकारी कोठियो में बिना कोई भाड़ा दिये रहने का अधिकार होगा जो उपर्युक्त आर्डर-इन-कौंसिल के एक परिशिष्ट में दी हुई है। ये सरकारी कोठियाँ इस प्रकार है :—

मद्रास के गवर्नर के लिए—मद्रास, ग्विण्डी और उटकमण्ड की सरकारी कोठियाँ।

बम्बई के गवर्नर के लिए—बम्बई, महाबलेश्वर और गणेशखिण्ड की सरकारी कोठियाँ।

बगाल के गवर्नर के लिए—कलकत्ता, ढाका, दार्जिलिंग और बारकपुर की सरकारी कोठियाँ।

सयुक्तप्रान्त के गवर्नर के लिए—इलाहाबाद, लखनऊ और नैनीताल की सरकारी कोठियाँ।

पजाब के गवर्नर के लिए—लाहौर की सरकारी कोठी और शिमला का बार्न्स कोर्ट।

विहार के गवर्नर के लिए—पटना और राची की सरकारी कोठिया और नटेरहाट की शैले (Chalet at Naterhat)।

मध्यप्रान्त व वरार के गवर्नर के लिए—नागपुर, पचमढ़ी और जबलपुर की सरकारी कोठियाँ।

आसाम के गवर्नर के लिए—शिलॉग की सरकारी कोठी मय पीक-काटेज के।

पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के गवर्नर के लिए—पेशावर और नथियागली की सरकारी कोठियाँ।

सिन्ध के गवर्नर के लिए—कराची की सरकारी कोठी।

उडीसा के गवर्नर के लिए—पुरी की सरकारी कोठी और प्रान्त की नई राजधानी में गवर्नर के लिए बनाई जानेवाली नई सरकारी कोठी।

इसका तात्पर्य्य यह हुआ कि यदि प्रान्तीय सरकार खर्चे की बचत के लिहाज से प्रान्त में केवल एक ही राजधानी रखने का निश्चय कर भी ले, तब भी गवर्नर इस वात के लिए वाधित नही कि वह भी प्रान्तीय सरकार के निश्चय के साथ चले। भारत-मन्त्री ने यह अधिकार भी अपने हाथ में सुरक्षित रक्खा है कि यदि गवर्नरो के लिए और सरकारी कोठियो की जररत हो, या उनमें रद्दोवदल करने की जरूरत पडे, तो ऐसा करने के लिए गवर्नर को प्रान्तीय खजाने से रुपया खर्च करने का अधिकार देदें।

उपर्युक्त आर्डर-इन-कौंसिल की ५ वी और ७ वी धाराओ के अनुसार प्रत्येक गवर्नर को बिना किसी प्रकार का भाड़ा दिये हुए प्रान्त के उन सब सरकारी रेलवे सैलूनो, मोटरो, नावो, मोटर-बोटो और हवाई जहाजो को अपने काम में लाने का अधिकार होगा जो उसके या उसके किसी पूर्वाधिकारी के काम के लिए भारत-मंत्री की स्वीकृति से अलग रक्खे या ख़रीदे गये हो। भारत-मंत्री को यह भी अधिकार होगा कि वह उचित समझे तो किसी भी प्रान्त के गवर्नर को प्रान्तीय सरकार के ख़र्चे से और हवाई जहाज खरीदने का अधिकार देदे।

सवारी-खर्च

इन सब सवारियो को बाकायदा चालू रखने और इनमे रद्दोबदल व मरम्मत आदि करने में जो खर्चा होगा वह सब सरकारी खजाने से दिया जायगा और भारत-मन्त्री को उनकी रकमें वगैरा नियत करनें का अधिकार होगा।

उपर्युक्त सब खर्चे के अलावा प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर को सफर-ख़र्च के लिए हर साल नीचे लिखे अनुसार सरकारी खजानें से और भी रुपया लेने का अधिकार होगा :—

सफर-खर्च

मद्रास १,१३,०००); बम्बई ६५,०००); बंगाल १,१२,०००); सयुक्तप्रान्त १,२५,०००); पंजाब ६०,०००); बिहार ६०,०००); मध्यप्रान्त व बरार २६,०००); आसाम ५५,०००); पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त १८,०००); सिन्ध ३०,०००); उडीसा ३५,०००)।

प्रत्येक गवर्नर को हर साल अपनी कोठियों के लिए नीचे दी हुई तालिका के अनुसार नया फर्नीचर खरीदने का अधिकार होगा :—

फर्नीचर व उसकी मरम्मत

मद्रास १४,०००); बम्बई २३,०००); बंगाल २०,५००); संयुक्त-

प्रान्त ४,०००), पजाव ३,०००), बिहार ४,५००); मध्यप्रान्त व बरार २,९००), आसाम १,०००), पश्चिमोत्तर सीमप्रान्त १,७५०), उडीसा २,५००), सिन्ध १,०००)।

और पुराने फर्नीचर की मरम्मत वगैरा के लिए प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर को हर साल नीचे लिखे अनुसार रुपया खर्च करने का अधिकार होगा —

मद्रास २१,५००), बम्बई २५,०००), बगाल ३४,०००), सयुक्त-प्रान्त १४,५००); पञ्जाब १०,५००), बिहार १३,०००); मध्यप्रान्त व बरार ९,८००), आसाम ४,०००), पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त ५,०००); सिन्ध ४,०००), उडीसा ८,०००)।

भोजन-खर्च

गवर्नरो के भोजन के लिए इस प्रकार रुपया खर्चा किया जा सकेगा—मद्रास १८,०००), बम्बई २५,०००), बगाल २५,०००); सयुक्तप्रान्त १५,०००), पजाब १२,०००), बिहार ६,०००), मध्यप्रान्त व बरार ६,०००); आसाम ६,०००), पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त ६,०००), सिन्ध ८०००); उडीसा ६०००)।

मिलिटरी-सेक्रेटरी

प्रत्येक गवर्नर को एक सेक्रेटरी के अलावा, जिसका ज़िक्र हम आगे करेंगे, एक मिलिटरी सेक्रेटरी या ए०डी०सी० रखने का भी अधिकार होगा। इस मिलिटरी-सेक्रेटरी और उनके दफ्तर वगैरा के लिए विभिन्न प्रान्तो में गवर्नर इतना रुपया खर्च कर सकेंगे—मद्रास ९१२,०००), बम्बई १,३६,०००), बगाल १,२१,०००); सयुक्तप्रान्त १,१६,०००), पजाब ८८,०००), बिहार ७५,०००); मध्यप्रान्त व बरार ६१,०००); आसाम ६३,०००); पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त ६८,०००), सिन्ध ५९,०००), उडीसा ४०,०००)।

मिलिटरी-सेक्रेटरी के खर्च के अलावा मद्रास, बम्बई और बंगाल के गवर्नरों को बैण्ड, बॉडीगार्ड और अपने अलग अस्पताल के लिए इतना रुपया और खर्च करने का अधिकार होगा:——

	बैण्ड	बॉडीगार्ड	अस्पताल
मद्रास	४३,०००)	१,२६,०००)	३६,०००)
बम्बई	४५,०००)	७८,०००)	३३,६००)
बंगाल	५०,०००)	१,००,०००)	३४,८००)

ऊपर दिये हुये सब खर्चों के अलावा गवर्नरों को मुतफर्रिक खर्च

मुतफर्रिक खर्च

के लिए भी भारी-भारी रकमें दी जाया करेंगी, जो विभिन्न प्रान्तों में इस प्रकार होंगी:——

मद्रास ९२,०००); बम्बई १,०८,०००); बंगाल १,००,०००); संयुक्तप्रान्त २३,०००); पंजाब २१,७००); बिहार २१,७००); मध्यप्रान्त व बरार १६,६००); आसाम १४,१००); पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त १४,१००); सिन्ध १७,८००); उडीसा ~~३५,०००)~~। ११ ५००)

गवर्नरों को अपने माल के लिए चुंगी की भी रिआयत रहेगी।

चुंगी की रिआयतें

उनके नीचे लिखे माल पर कोई चुंगी नहीं लगेगी:——

(अ) गवर्नर और उसके परिवार के काम में आनेवाली सब चीजें;

(ब) गवर्नर के परिवार और उसके मेहमानों के लिए मँगाये जानेवाले खाद्य पदार्थ एवं मादक द्रव्य;

(स) गवर्नर की कोठियों के लिए मँगाया जानेवाला फ़र्नीचर; और

(द) गवर्नर की मोटरें।

प्रान्तीय धारा-सभा को उपर्युक्त सब खर्चों में न तो काट-छाँट करने का और न उनमें और किसी प्रकार के हस्तक्षेप का कोई अधिकार होगा। इन विषयों पर धारा-सभा में कोई वादविवाद भी न हो सकेगा।

गवर्नरों के सेक्रेटरी

प्रान्तीय स्वराज्य से पूर्व गवर्नरो के जो प्राइवेट सेक्रेटरी होते थे, उनका आमतौर पर गवर्नर के सरकारी कर्त्तव्यो और गवर्नर के सरकारी पत्र-व्यवहार से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रहता था। गवर्नर का सरकारी पत्र-व्यवहार आमतौर पर उन सेक्रेटरियो द्वारा किया जाता था, जो प्रान्तीय सरकार के सेक्रेटरी कहलाते है। प्राइवेट सेक्रेटरी आमतौर पर गवर्नर के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली बातो में गवर्नर की मदद करते थे। लेकिन प्रान्तीय स्वराज्य के प्रारम्भ होने पर गवर्नर के इस प्राइवेट सेक्रेटरी को मिलिटरी सेक्रेटरी या ए० डी० सी० का नाम दिया गया है और गर्वनर को उसके सरकारी काम-काज में मदद देने के लिए एक नये सेक्रेटरी की जगह कायम की गई है, जिसका ओहदा होगा 'सेक्रेटरी टू दी गवर्नर'। यह उन सेक्रेटरियो से भिन्न होगा जो आमतौर पर सारी प्रान्तीय सरकार के सेक्रेटरी कहलाते है।

एक्ट की धारा ३०५ के अनुसार प्रत्येक गवर्नर को अपना सेक्रेटरी नियुक्त करने और उस सेक्रेटरी की सहायता के लिए अन्य कर्मचारी और क्लर्क वगैरा नियुक्त का अधिकार होगा। ये सेक्रेटरी और क्लर्क वगैरा सीधे गवर्नर के मातहत रहेगे और प्रान्तीय मंत्रि-मण्डल या किसी मिनिस्टर को इन्हे किसी प्रकार का हुक्म देने का कोई अधिकार न होगा। इनके वेतन वगैरा पर जो खर्च होगा उसे नियत करने और इनके दफ्तर वगैरा के प्रबन्ध का एकमात्र अधिकार गवर्नर को होगा। प्रान्तीय धारा-सभा को इनके वेतन और दफ्तर के अन्य खर्च में काट-छाँट करने का कोई अधिकार न होगा।

ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि इस सेक्रेटरी का काम बहुत जिम्मेदारी का होगा, "इसलिए वह ऐसा व्यक्ति

होना चाहिए जो प्रान्त के मामलो से खूब वाकिफ़ हो और जिसका शासन से खूब घनिष्ठ सम्बन्ध रहा हो।"[१] इससे साफ़ जाहिर होता है कि इस नई जगह के निर्माण का मुख्य उद्देश्य है गवर्नर को उसके उन अधिकारों के प्रयोग मे मदद देना जिनको वह नये विधान के अन्तर्गत मिनिस्टरो और धारा-सभा के विरुद्ध काम मे लासकेगा। ऐसी हालत मे निश्चय ही गवर्नर के सेक्रेटरी का पद बहुत महत्त्व का है। यह तो निश्चय है कि आमतौर पर यह सेक्रेटरी अंग्रेज सिविलियनो में से ही चुना जायगा। इसलिए उससे यह उम्मीद करना कि विशेषाधिकारो के प्रयोग मे वह गवर्नर को भारतीय जनता के हितो के अनुकूल सलाह देगा, व्यर्थ ही है।

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पैरा १०१।

: ३ :

गवर्नरों के अधिकार

गवर्नरो के अधिकार त्रिविध है, और एक्ट में उनका वर्णन भी तीन प्रकार की भाषा में किया गया है। पहली श्रेणी में वे अधिकार आते हैं जिनका प्रयोग गवर्नर 'अपनी मर्जी' से करेगा (i e those powers in which he will exercise 'his discretion'), दूसरी श्रेणी के अधिकार वे है जिनमें वह 'अपने विवेक' से काम लेगा (i e those powers in which he will exercise 'his individual judgment'); और तीसरी श्रेणी में वे अधिकार है जिनके बारे में एक्ट में केवल गवर्नर शब्द का प्रयोग किया गया है।

त्रिविध अधिकार

एक्ट में किसी जगह इस बात की व्याख्या नही की गई है कि गवर्नरो के अधिकारो के बारे में तीन प्रकार की भाषा का प्रयोग करने का क्या अभिप्राय है। लेकिन गवर्नरो को एक्ट की धारा ५३ के अन्तर्गत जो आदेश-पत्र जारी किये गये है उनकी धारा ८ से इसपर बहुत-कुछ प्रकाश पड़ता है। इस धारा में कहा गया है, कि "उन अधिकारो को छोड-कर जिनके प्रयोग में उसे 'अपनी मर्जी' काम में लाने को कहा गया है, गवर्नर अपने सब अधिकारो के प्रयोग में अपने मिनिस्टरो की सलाह पर चलेगा, बशर्ते कि ऐसा करने से उसे अपनी 'खास जिम्मेदारियों' का पालन करने में और अपने उन अधिकारो का ठीक-ठीक प्रयोग करने में, जिनमें उसे 'अपने विवेक' से काम लेने के लिए कहा गया है, कोई

बाधा न पडे। इन दोनो हालतो मे अपने मिनिस्टरो की सलाह के बावजूद गवर्नर को यह अधिकार होगा कि वह अपने अधिकारो का प्रयोग ठीक उसी प्रकार करे जिस प्रकार कि उपर्युक्त जिम्मेदारियो और अधिकारों का पालन करने के लिए उसे ठीक प्रतीत हो।"

मिनिस्टरो की सलाह

आदेश-पत्रो की इस धारा से स्पष्ट है कि दूसरी और तीसरी श्रेणी के अधिकारो के प्रयोग के बारे मे, अर्थात् एक तो उन अधिकारो के प्रयोग के बारे में जिनके प्रयोग के लिए गवर्नर को 'अपना विवेक' काम मे लाने के लिए कहा गया है और दूसरे उन अधिकारों के प्रयोग के बारे में जिनमे केवल गवर्नर शब्द का प्रयोग किया गया है, मिनिस्टर गवर्नरो को अपनी सलाह देने के अधिकारी होगे और गवर्नरो के लिए भी आमतौर पर यह लाज़िमी होगा कि वे पहले अपने मिनिस्टरो की सलाह ले; लेकिन पहली श्रेणी के अधिकारो के प्रयोग के बारे में, अर्थात् उन अधिकारो के प्रयोग मे जिनके लिए गवर्नर को 'अपनी मर्ज़ी' काम मे लाने के लिए कहा गया है, न तो एक्ट मे ही यह कहा गया है कि मिनिस्टर उनके बारे में गवर्नरो को सलाह दे सकेगे या नही और न आदेश-पत्रो मे ही। मगर जहाँ एक ओर एक्ट और आदेश-पत्रो मे यह बात नही कही गई कि मिनिस्टर इन मामलो मे गवर्नर को सलाह दे सकेगे या नही, एक्ट और आदेश-पत्रो में न तो ऐसी कोई बन्दिश है कि मिनिस्टर इन मामलो मे गवर्नर को सलाह नही दे सकते और न ही इस बात की कोई बन्दिश है कि गवर्नर इन मामलो में अपने मिनिस्टरो से सलाह नही ले सकते। इसका यह मतलब हुआ कि पहली श्रेणी के अधिकारो के बारे मे भी अगर गवर्नर चाहे तो मिनिस्टरो से सलाह ले सकते है, और मिनिस्टर गवर्नर को सलाह दे सकते है; अर्थात्, उनके रास्ते में कोई कानूनी बन्दिश नहीं है।

रही मिनिस्टरो की सलाह पर अमल करने न करने की बात। तो जहाँतक प्रथम श्रेणी के अधिकारो का सवाल है, ब्रिटिश सरकार की ओर से जब इसी बात का कोई संकेत नही हुआ कि गवर्नरो को इन मामलो में भी अपने मिनिस्टरो से सलाह लेलेना आवश्यक है, तब यह तो कहा ही कैसे जा सकता है कि यदि मिनिस्टर इन मामलो में कोई सलाह गवर्नरो को दें भी तो गवर्नर उस सलाह को मानने के लिए वाध्य होगे ? इसलिए प्रथम श्रेणी के अधिकारो के बारे में ब्रिटिश सरकार की फिलहाल यही नीति समझनी चाहिए कि पहले तो गवर्नर उनके प्रयोग के बारे में आमतौर पर मिनिस्टरो से सलाह लेगे ही नही, और यदि लेगे भी तो वे उसे मानने के लिए वाध्य न होगे। दूसरी श्रेणी के अधिकारो के बारे में, अर्थात् उन अधिकारो के बारे में जिनमें गवर्नरो को 'अपने विवेक' से काम लेने के लिए कहा गया है, यह तो निश्चित ही है कि गवर्नर मिनिस्टरो से सलाह लेने के लिए वाध्य है और मिनिस्टरो को भी सलाह देने का अधिकार है, लेकिन, जहाँतक उस सलाह के मानने न मानने का सवाल है, आदेश-पत्रो द्वारा यह स्पष्ट कर दिया गया है कि यदि गवर्नर उपयुक्त समझें तो वे उस सलाह के खिलाफ भी काम कर सकेगे। शेष सब अधिकारो के बारे में भी, अर्थात् उन अधिकारो के बारे में जिनमें केवल 'गवर्नर' शब्द का प्रयोग किया गया है, यह बात स्पष्ट ही है कि गवर्नर अपने मिनिस्टरो से सलाह लेने के लिए वाध्य है और मिनिस्टरो को सलाह देने का अधिकार है। जहाँतक उस सलाह को मानने न मानने का सवाल है, एक्ट और आदेश-पत्रो को पढकर यही निष्कर्ष निकलता है कि आमतौर पर गवर्नर इन मामलो में अपने मिनिस्टरो की सलाह पर चलने के लिए वाध्य होगे, लेकिन जब वे यह समझें कि मिनिस्टरो की सलाह पर चलने से वे अपनी 'खास जिम्मेदा-

रियो' का पालन करने में समर्थ न होसकेगे, तब वे अपने मिनिस्टरो की सलाह के खिलाफ भी काम कर सकेगे।

इस सिलसिले में यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि इस बात का फ़ैसला करने का कि अपने अधिकारो के प्रयोग में किस समय गवर्नर अपने मिनिस्टरो की सलाह पर अमल करेगा और किस समय नही, एकमात्र अधिकार गवर्नर को ही दिया गया है और उसका निर्णय इस विषय मे अन्तिम होगा।[1] इसका मतलब यह हुआ कि यदि मिनिस्टर, धारा-सभा या जनता यह समझें कि गवर्नर अपने मिनिस्टरो की सलाह के खिलाफ अमल करके अपने अधिकारो का दुरुपयोग कर रहा है, तो उनके हाथ में कोई ऐसा जरिया नही जिससे वे गवर्नर को मिनिस्टरो की सलाह पर अमल करने के लिए वाध्य कर सके। फेडरल कोर्ट, हाईकोर्ट या और कोई अदालत इस मामले में कोई दखल नही देसकती। एक्ट में तो यहाँतक कहडाला गया है कि कोई भी अदालत इस बात की तहकीकात तक नही कर सकती कि मिनिस्टरो ने किसी मामले में गवर्नर को क्या सलाह दी।[2]

अदालतों का दखल

एक्ट की धारा ५४ में गवर्नर को अपनी 'मर्ज़ी' और 'विवेक' वाले अधिकारो के प्रयोग में यदि किसीके मातहत किया गया है तो केवल वाइसराय के। एक्ट की धारा ५४ के अनुसार, "जहाँतक गवर्नर के 'अपनी मर्जी' के और 'अपने विवेक' के अधिकारो का सवाल है, प्रत्येक प्रान्त का गवर्नर वाइसराय के मातहत रहेगा और उसे वाइसराय की उन सब आज्ञाओ का पालन करना पडेगा जो उसे वाइसराय 'अपनी मर्जी' से दे; लेकिन वाइसराय

हस्तक्षेप का हक

१. गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट, धारा ५० उपधारा ३।

२. गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट, धारा ५१, उपधारा ४।

कोई भी आज्ञा देते समय इस बात की तहक़ीक़ात कर लेगा कि वह सम्राट् द्वारा जारी किये हुए किसी आदेश-पत्र के खिलाफ़ तो ऐसी आज्ञा नहीं दे रहा है।" और चूँकि एक्ट की धारा १४ और ३१४ के अन्तर्गत वाइसराय अपने अधिकारों के प्रयोग में स्वयं भारत-मन्त्री के मातहत होगा, ब्रिटिश सरकार प्रान्तीय मामलों में जब चाहे तब भारत-मन्त्री, वाइसराय और गवर्नरों के ज़रिये आसानी से हस्तक्षेप कर सकेगी।

गवर्नर, वाइसराय, भारत-मन्त्री और ब्रिटिश सरकार के अधिकारों के उपर्युक्त कानूनी विश्लेषण से यह बात स्पष्ट है कि ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने 'प्रान्तीय स्वराज्य' का जो ढाँचा नये एक्ट के द्वारा तैयार किया है उसकी सफलता एकमात्र इस बात पर निर्भर है कि गवर्नर, वाइसराय, भारत-मन्त्री और ब्रिटिश सरकार मिनिस्टरों को वास्तव में किस हद तक जनता की मर्ज़ी के माफ़िक़ काम करने देते हैं। अगर ब्रिटिश सरकार चाहे तो गवर्नरों के सारे अधिकारों का प्रयोग मिनिस्टरों पर ही छोड़ दे और अगर वह चाहे तो मिनिस्टरों के मार्ग में पग-पग पर रोड़ा अटकाने के लिए गवर्नरों को आदेश दे दे। चूंकि प्रान्तों में गवर्नरों को ही सारे कानूनी अधिकारों का केन्द्र बनाया गया है और मिनिस्टर केवल उसके सलाहकार हैं, और चूँकि गवर्नर अपने अधिकारों के प्रयोग में वाइसराय और भारत-मन्त्री के मातहत हैं, इसलिए ब्रिटिश सरकार के प्रान्तीय मामलों में हस्तक्षेप करने के अधिकारों में कोई कानूनी अड़चन किसी हालत में पड़ ही नहीं सकती। किस समय मिनिस्टरों को कितने अधिकारों को अमल में लाने का अधिकार और अवसर प्राप्त होगा, इसका फ़ैसला एकमात्र ब्रिटिश सरकार, भारत-मन्त्री, वाइसराय और गवर्नरों की मर्ज़ी पर निर्भर है। एक्ट में मिनिस्टरों के अधिकारों का तो कहीं वर्णन ही नहीं है, उसमें जहाँ-कहीं वर्णन है वहाँ गवर्नरों के अधिकारों का ही

है। मिनिस्टरों को जो कुछ भी स्थिति प्राप्त है वह केवल गवर्नर के सलाहकार होने की वजह से ही है।

शासन-कार्य को आजकल आमतौर पर तीन मुख्य विभागों में बाँटा जाता है—(१) कानून-निर्माण, (२) शासन, और (३) न्याय। इनमे पहला विभाग कानून बनाता है, दूसरा उनपर अमल करता और कराता है, और तीसरा उनका भंग करनेवालो यानी अपराधी के दण्ड का निर्णय और कानून की व्याख्या करता है।

शासन-कार्य के तीन विभाग

इनमे जहाँतक प्रान्त के शासन और कानून-निर्माण विभागो का सम्बन्ध है, गवर्नर को उनके ऊपर अकथनीय और अवर्णनीय अधिकार दिये गये है; लेकिन जहाँतक प्रान्त के न्याय-विभाग का सम्बन्ध है, वह आमतौर पर गवर्नर के हस्तक्षेप से मुक्त होगा। प्रान्तीय हाईकोर्ट ज्यादातर गवर्नर-जनरल और ब्रिटिश सरकार के मातहत होगे। अतः हम पहले गवर्नर के उन अधिकारो का ही वर्णन करेगे जिनको वह प्रान्त के रोजमर्रा के शासन मे प्रयोग कर सकेगा और साथ ही उसके न्याय-विभाग सम्बन्धी कुछ अधिकारो पर भी प्रकाश डालेगे। गवर्नर के उन अधिकारों का वर्णन जिनका प्रयोग वह प्रान्त के कानून-निर्माण विभाग यानी प्रान्तीय धारा-सभाओ के सम्बन्ध में कर सकेगा, इसके बाद किया जायगा। और सबसे अन्त में गवर्नर के कुछ ऐसे कानून-निर्माण सम्बन्धी तथा अन्य अधिकारो का वर्णन करेगे, जिनका प्रयोग वह केवल विशेष परिस्थितियो मे कर सकेगा।

रोजमर्रा के शासन में गवर्नर का स्थान

एक्ट की धारा ४९ में गवर्नर को प्रान्त के रोजमर्रा के शासन का केन्द्र बताया गया है। प्रान्तीय शासन से सम्बन्ध रखनेवाले जितने

भी अधिकार है उनका प्रयोग गवर्नर के नाम पर ही होगा। लेकिन इसी धारा में साथ ही यह भी कहा गया है कि यदि प्रान्तीय धारा-सभा चाहे तो एक्ट पास करके मातहत अधिकारियो, अदालतो और म्यूनिसिपल संस्थाओ को भी प्रान्तीय शासन-सम्बन्धी अधिकार दे सकती है। मगर प्रान्तीय धारा-सभा के प्रत्येक एक्ट के लिए गवर्नर या वाइसराय की मंजूरी आवश्यक है, इसलिए अगर गवर्नर या वाइसराय यह समझें कि मातहत अधिकारियो को अमुक अधिकार देना उपयुक्त नही है तो वे धारा-सभा के उस एक्ट को नामंजूर कर सकते है।

रोजमर्रा के शासन का केन्द्र

प्रान्त के रोजमर्रा के शासन में आमतौर पर गवर्नर के ऐसे अधिकार बहुत कम है जिनमें वह 'अपनी मर्जी' से काम कर सके और अपने मिनिस्टरो की सलाह लेने के लिए बाध्य न हो। लेकिन प्रान्त के रोजमर्रा के शासन में ऐसे अधिकारो का नम्बर काफी ज्यादा है जिनमें उसे 'अपने विवेक' से काम लेने के लिए कहा गया है, अर्थात् वे अधिकार जिनमें वह अपने मिनिस्टरो की सलाह लेने के लिए तो बाध्य होगा लेकिन मानने के लिए नही। और सबसे ज्यादा नम्बर गवर्नर के उन अधिकारो का है जिनमें केवल गवर्नर शब्द का प्रयोग किया गया है और जिनमें वह न केवल अपने मिनिस्टरो की सलाह लेने के लिए बल्कि उसे मानने के लिए भी बाध्य होगा, बशर्ते कि वह यह न समझे कि ऐसा करने मे उसकी 'खास जिम्मेदारियो' के पालन में बाधा पड़ती है।

खास जिम्मेदारियां

पहले हम गवर्नरो की उन 'खास जिम्मेदारियों' का वर्णन करेंगे जो प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर के लिए एकसी है। एक्ट की धारा ५२ के अनुसार, ये 'खास जिम्मेदारियां' इस प्रकार है —

"(१) प्रान्त या उसके किसी भाग के अमन व चैन को हर भयकर खतरे से बचाना ।

(२) अल्पसख्यक जातियो के वाजिब हितो की रक्षा करना ।

(३) वर्तमान तथा भूतपूर्व सरकारी नौकरो और उनके आश्रितो के उन अधिकारो की जो एक्ट द्वारा या एक्ट के अन्तर्गत उनको दिये गये है या उनके लिए कायम रक्खे गये है, और उनके वाजिब हितो की रक्षा करना ।

(४) ब्रिटिश हितो के प्रति भेदभाव-पूर्ण व्यवहार को रोकना ।

(५) प्रान्त के उन क्षेत्रो के अमन व सुशासन की रक्षा करना जो एक्ट के अन्तर्गत अर्ध-बहिर्गत क्षेत्र घोपित किये गये है ।

(६) किसी भी भारतीय रियासत के अधिकारो की और उसके नरेश के अधिकारो व शान-शौकत की रक्षा करना ।

(७) उन आज्ञाओ का पालन करना जो वाइसराय कानूनन '**अपनी मर्ज़ी**' से गवर्नर को दे ।"

इनके अलावा मध्यप्रान्त और बरार के गवर्नर की यह एक और खास जिम्मेदारी होगी कि प्रान्त की आय का एक उचित भाग बरार मे या बरार के लिए व्यय हो । इसी प्रकार सिन्ध के गवर्नर की यह एक और खास जिम्मेदारी होगी कि सक्खर की नहर-योजना पर ठीक तरह से अमल होता रहे ।

जिन-जिन प्रान्तो मे बहिर्गत-क्षेत्र कायम किये गये है उन प्रान्तो के गवर्नरो की एक और ख़ास जिम्मेदारी इस बात को देखने की होगी कि बहिर्गत-क्षेत्रो के शासन मे, जो आमतौर पर मिनिस्टरो के अधीन न होगे, मिनिस्टरो के और किसी काम की वजह से बाधा तो नही पडती । ब्रिटिश सरकार को इन क्षेत्रो के शासन की इतनी फिक्र है कि उसने केवल इन क्षेत्रो के शासन को ही मिनिस्टरो के अधिकार-क्षेत्र

से वाहर नहीं कर दिया, वल्कि गवर्नर को खास जिम्मेदारी के रूप मे यह अधिकार भी दिया है कि शेष प्रान्त के शासन में मिनिस्टरो की किसी कार्रवाई से इन क्षेत्रो के शासन में कोई वाधा पडे तो वह मिनिस्टरो की सलाह पर अमल न करे। इसी प्रकार जिन प्रान्तो के गवर्नरो को खास गवर्नर-जनरल के एजेण्ट की हैसियत से कुछ फर्ज अदा करने पडेंगे उन प्रान्तो के गवर्नरो की इस वात के देखने की एक और खास जिम्मेदारी होगी कि उन फर्जों के अदा करने में मिनिस्टरो के किसी काम से कोई वाधा तो नहीं पडती। उदाहरणार्थ, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के गवर्नर को गवर्नर-जनरल के एजेण्ट की हैसियत से कवीली इलाको (Tribal areas) के वारे में कई फर्ज अदा करने होंगे और इन मामलो में मिनिस्टरो का कोई दखल न होगा। लेकिन अगर सीमाप्रान्तीय मिनिस्टर अपने अधिकार-क्षेत्र में रहते हुए भी कोई ऐसी कार्रवाई करने लगें जिससे गवर्नर को इन इलाको-सम्वन्धी अपने फर्ज अदा करने में कोई वाधा पडे, तो उसे मिनिस्टरो की कार्रवाई पर प्रतिवन्ध लगा देनें का अधिकार होगा।

इन खास जिम्मेदारियो के वारे में यह वात जानना आवश्यक है कि ये इतनी अस्पष्ट भाषा में हैं और इनका क्षेत्र इतना व्यापक रक्खा गया है कि गवर्नर जव चाहे तव इनके वहाने मिनिस्टरो के काम में रोडे अटका सकता है, क्योंकि वह अपनी इन खास जिम्मेदारियो के पालन में भारतीय या प्रान्तीय जनता के प्रति उत्तरदायी न होकर गवर्नर-जनरल और भारत-मन्त्री के जरिये ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश पार्लमेण्ट के प्रति उत्तरदायी होगा और इसलिए ब्रिटेन के हितो में ही इनका प्रयोग करेगा। इनकी योजना का वास्तविक उद्देश्य भी यही मालूम पडता है। स्पष्टत: इनके जरिये ब्रिटिश सरकार ने विभिन्न हितो

को संरक्षण देने का प्रयत्न किया है, ताकि मिनिस्टर उन हितो को कुछ नुकसान न पहुँचा सके। रोजमर्रा के शासन में यही उद्देश्य गवर्नर के उन अधिकारो का है जिनको एक्ट में गवर्नर की 'मर्जी' और 'विवेक' पर छोड़ा गया है। लेकिन जहाँ गवर्नर की खास जिम्मेदारियो का उद्देश्य विभिन्न हितो को एक प्रकार का आम सरक्षण देना है, गवर्नर के इन विशेषाधिकारो का उद्देश्य कुछ खास हितो को और भी खासतौर से संरक्षण देना है। हम अब इन्ही अधिकारो और सरक्षणो का वर्णन करेगे।

गवर्नर पर सरकारी कर्मचारियो के अधिकारो और हितो की रक्षा करने की जो 'खास जिम्मेदारी' रक्खी गई है, उसके सहारे गवर्नर आल-इण्डिया सर्विस के अफसरो[1] के अधिकारो और हितो की पूर्ण रूप से रक्षा कर सकता है; लेकिन ब्रिटिश सरकार और पार्लमेण्ट को इन अफसरो के अधिकारो, प्रभाव और स्थिति को पहले के ही समान बनाये रखने की इतनी फिक्र है कि उसने एक्ट में गवर्नरो को और स्पष्ट रूप से यह आदेश दिया है कि जब कभी इनका कोई मामला पेश हो तब गवर्नर खुद भी अपने 'विवेक' का उपयोग करे। इसका अर्थ यह हुआ कि इन अफसरो से सम्बन्ध रखनेवाले मामलो मे मिनिस्टरों को गवर्नर की स्वीकृति के बगैर कोई हुक्म जारी करने का अधिकार न होगा, जैसा कि एक्ट की धाराओ से स्पष्ट है।

आल-इण्डिया सर्विस

धारा २४६ (२) के अनुसार इन अफ़सरो की नियुक्ति और तबा-

१. आल-इण्डिया सर्विस के अफसरो से तात्पर्य्य उन अफसरो से है जिनकी नियुक्ति सीधी भारत-मन्त्री द्वारा होती है। यह ध्यान रहे कि 'प्रान्तीय स्वराज्य' के अन्तर्गत भी इण्डियन सिविल सर्विस, इण्डियन पुलिस सर्विस और इण्डियन मेडिकल सर्विस के अफसरो की भर्ती यथावत् भारत-मन्त्री द्वारा ही होती रहेगी।

देने के लिए गवर्नर को 'अपने विवेक' से काम लेने का अधिकार होगा। इसका साफ अर्थ यह हुआ कि इन अफसरो की नियुक्ति और तबादलो के हरेक मामले में मिनिस्टरो को गवर्नर से मजूरी लेनी पडेगी। धारा २४७ (२) के अनुसार इन अफसरो की तरक्की वगैरा के कागजात और तीन महीने से ज्यादा की छुट्टी की दरख्वास्तो को गवर्नर के पास भेजना पडेगा। उदाहरणार्थ, यदि मिनिस्टर किसी सिविलियन की तीन महीने से अधिक की छुट्टी मजूर न करे तो उन्हे इसके लिए गवर्नर को राजी करना पडेगा। इसी धारा के अन्तर्गत मिनिस्टर ऐसे किसी अफसर को बिना गवर्नर की मजूरी के मोअत्तिल भी न कर सकेगे। मोअत्तिल होजाने की हालत में उस अफसर को कितना वेतन मिलेगा, इसका फैसला भी गवर्नर 'अपने विवेक' से ही करेगा। इसी प्रकार धारा २४८ (२) के अनुसार यदि इन अफसरो को मोअत्तिली के अलावा कोई और हलका दण्ड देना हो, या केवल ताकीद ही करनी हो, तो भी मिनिस्टरो को गवर्नर से मजूरी लेनी पडेगी। वेतन, भत्तो और पेंशनो में कमी भी बिना गवर्नर की मजूरी के नही की जा सकेगी। यही नही बल्कि प्रान्तीय सरकार को भेजे जानेवाले आवेदन-पत्रो पर कोई प्रतिकूल आज्ञा भी मिनिस्टर गवर्नर की मजूरी बिना नही दे सकेगे।

ये सब नियम उन अफसरो पर भी लागू होगे (१) जो फौज के अफसर हो लेकिन प्रान्तीय सरकार के मातहत काम करते हो या (२) जो उन जगहो पर नियुक्त किये जायें जो आमतौर पर आल-इण्डिया सर्विस के अफसरो के लिए ही सुरक्षित समझी जाती है।

आल-इण्डिया सर्विस के अफसरो के बाद प्रान्त में दूसरा नम्बर उन अफसरो का आता है जो प्रान्तीय यानी प्राविंशल सर्विस के अफसर कहलाते है। इनकी भर्ती भविष्य में प्रान्तीय सरकारो के हाथ में

ही रहेगी, लेकिन प्रान्तीय स्वराज्य से पहले भर्ती किये गये प्राविशल सर्विस के अफसरो के लिए भी कुछ सरक्षण एक्ट में मौजूद है। जैसे, धारा २५८ (१) के अनुसार प्रान्तीय सर्विस के अफसरो की कोई भी जगह तबतक नही तोडी जायगी जबतक कि मिनिस्टर गवर्नर से मजूरी न लेले। दूसरे शब्दो में, १ अप्रैल १९३७ से पहले नौकर हुए प्रान्तीय सर्विस के अफसरो को कमी में तबतक नही लाया जा सकेगा जबतक कि खुद गवर्नर मजूरी न देदे। और, धारा २५८ (२) के अनुसार इन अफसरो के वेतन, भत्तो व पेशनो में कोई कमी मिनिस्टर बिना गवर्नर की मजूरी के न कर सकेंगे और इनके आवेदन-पत्रो पर भी कोई प्रतिकूल आज्ञा मिनिस्टरो द्वारा विना गवर्नर की मंजूरी के नही सुनाई जा सकेगी।

प्रान्तीय सर्विस

पुलिस के अधिकारो और हितो की रक्षा के लिए पुलिस-विभाग के ऊपर मिनिस्टरो के अधिकारो और उत्तरदायित्व को और भी कम कर दिया गया है। उदाहरणार्थ, धारा ५६ के अन्तर्गत गवर्नर को यह आदेश दिया गया है कि जब कभी पुलिस-विभाग सम्बन्धी कायदो में, जो पुलिस से सम्बन्ध रखनेवाले भिन्न-भिन्न एक्टो के अन्तर्गत प्रान्तीय सरकार द्वारा जारी किये जाते है, तब्दीली करने का प्रस्ताव किया जाय तो, जहॉतक उन कायदो का पुलिस के संगठन और अनुशासन से ताल्लुक हो, गवर्नर अपने विवेक से काम ले। दूसरे शब्दो में इसका स्पष्ट अभिप्राय यह हुआ कि जब कभी पुलिस के सगठन और अनुशासन से सम्बन्ध रखनेवाले कायदो में मिनिस्टरों द्वारा तब्दीली की जायगी, तो गवर्नर स्वभावतः अपने मिनिस्टरो की बनिस्बत पुलिस के इन्सपेक्टर-जनरल की सलाह की, जो सम्भवत: एक अंग्रेज होगा, ज्यादा कद्र करेगा।

पुलिस

धारा १०८ के अनुसार प्रान्तीय धारा-सभा पुलिस के संगठन, नियन्त्रण, और अनुशासन वगैरा से सम्बन्ध रखनेवाले एक्ट में कोई भी संशोधन तबतक न कर सकेगी जबतक कि गवर्नर पहले 'अपनी मर्जी' से उसके लिए पूर्व-अनुमति न देदे। इन पुलिस-एक्टो में, जिनमें संशोधन का होना एकमात्र गवर्नर की मर्जी पर निर्भर है, यह एक सिद्धान्त रक्खा गया है कि डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट के ओहदे से नीचे के जितने भी पुलिस-कर्मचारी हैं——जैसे इन्स्पेक्टर, थानेदार, हेडकान्सटेबल और कान्सटेबल आदि——उनको बर्खास्तगी व मोअत्तिली या और किसी प्रकार के दण्ड का हुक्म या तो पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट द्वारा सुनाया जा सकता है या इन्सपेक्टर-जनरल द्वारा। इसलिए यदि मिनिस्टरो को एक मामूली-से कान्सटेबल की बर्खास्तगी या मोअत्तिली का भी हुक्म सुनाना होगा तो उन्हे या तो इन्सपेक्टर-जनरल को लिखना पडेगा या सुपरिण्टेण्डेण्ट को। यही नहीं बल्कि यदि मन्त्रि-मण्डल, या प्रान्तीय धारा-सभा का कोई सदस्य, इस सिद्धान्त को बदलने के लिए पुलिस-एक्ट में संशोधन करना चाहे तो उसे पहले गवर्नर से मंजूरी लेनी होगी। बिना गवर्नर की पूर्व-अनुमति के इस प्रकार के किसी बिल पर धारा-सभा में कोई विचार भी नहीं हो सकेगा।

धारा ५७ के अन्तर्गत गवर्नर को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह किसी भी समय यह समझे कि प्रान्त में आतंकवादी प्रवृत्तियो का

आतंकवाद

जोर इतना बढ गया है कि खास उसे उनके दमन का बीडा उठाना चाहिए, तो वह प्रान्त के किसी भी विभाग को मिनिस्टरो की अधीनता से निकालकर अपने कब्जे में ले सकता है और फिर स्वयं 'अपनी मर्जी' से उस विभाग का संचालन कर सकता है। इस हालत में वह फिर उस विभाग के संचालन में अपने मिनिस्टरों से कोई सलाह पूछने के लिए भी बाध्य न होगा।

इस मामले में बिल्कुल अँधेरे में रक्खा जायगा। स्पष्ट ही यह बडी विचित्र बात है। क्योंकि मिनिस्टरो से जहाँ एक ओर कानून और व्यवस्था को कायम रखने और आतकवादी प्रवृत्तियो का दमन करने की आशा की जायगी, वहाँ यदि आतकवाद के दमन के लिए वे यह जानना चाहे कि उनको आतकवादी प्रवृत्तियो के बारे मे जो खबरे मिलती है वे विश्वस्त भी है या नहीं, तो उनको यह भी न बताया जायगा कि इन खबरो का देनेवाला कौन है, हालाँकि उनका ही मातहत अफसर इस्पेक्टर-जनरल पुलिस सब जान सकेगा।

धारा २७१ के द्वारा जज व मजिस्ट्रेट और दूसरे ऐसे उच्चाधिकारियो के लिए जो प्रान्तीय सरकार या प्रान्तीय सरकार से भी ऊँची किसी सत्ता (जैसे कि भारत-सरकार या भारत-मन्त्री) की स्वीकृति बिना अपनी जगहो से नही हटाये जा सकने, यह एक विशेष सरक्षण और रक्खा गया है कि यदि सरकारी काम के दौरान में वे कोई जुर्म या अपराध करे तो उनपर कोई भी फौजदारी मुकदमा तबतक नही चलाया जा सकता जबतक कि गवर्नर 'अपने विवेक' द्वारा उसकी मजूरी न देदे। 'अपने विवेक' से ही गवर्नर यह भी निश्चय करेगा कि यदि मुकदमा चलाने की अनुमति दी जाय तो मुकदमा किस अदालत में और किस प्रकार चलेगा। और यदि किसी सरकारी काम के सिलसिले में इन अधिकारियो पर कोई दीवानी दावा दायर होजाय और उस दावे में इन्हे हर्जाना देना पडे, तो गवर्नर 'अपने विवेक' द्वारा सरकारी खजाने से वह हर्जाना दिला सकता है।

उच्चाधिकारी

जबसे ब्रिटिश सरकार का भारत पर अधिपत्य हुआ है, तभीसे उसने भारत के बडे-बडे अमीर-उमरावो को अग्रेजी सत्ता के प्रति खैर-ख्वाही दिखाने और गदर आदि को दबाने में मदद देने की वजह से बहुत-

सी जागीरे वगैरा इनाम में दी थी। इन जागीरो को पानेवाले ब्रिटिश भारत में भिन्न-भिन्न नामो से जाने जाते है। कही वे जागीरदार कहलाते है तो कही ताल्लुकेदार, इनामदार, वतनदार या माफीदार। इनके अधिकारो की रक्षा के लिए एक्ट की धारा ३०० के अन्तर्गत यह नियम बनाया गया है कि ऐसा कोई भी हुक्म जो इन व्यक्तियो के जागीर-सम्बन्धी अधिकारो और रिआयतो के विरुद्ध हो, तवतक नही दिया जायगा जबतक कि गवर्नर 'अपने विवेक' से ऐसा करने की इजाजत न देदे। संक्षेप मे, अकेले मिनिस्टरो को यह अधिकार न होगा कि वे गवर्नर की मंजूरी के विना जागीरदारो और ताल्लुकेदारो आदि का थोड़ा भी बाल बॉका कर सके या उनसे उनकी जागीरे वगैरा छीन सके।

जागीरदार और ताल्लुकेदार

पुराने महाराजाओ और नवाबो व उनके वारिसो को जो पेंशने प्रान्तीय सरकारो द्वारा अभीतक दी जाती रही है उनके लिए भी धारा ३०० के अन्तर्गत यह नियम बनाया गया है कि उनमें न तो कोई कमी की जा सकेगी और न ही वे बन्द की जा सकेगी, जबतक कि गवर्नर 'अपने विवेक' से अनुमति न दे दे।

नवाबो की पेंशने

सरकारी खजानो मे सरकारी रुपया किस प्रकार जमा किया जाय, किस प्रकार निकाला जाय और रुपये की हिफाजत वगैरा के लिए किन नियमो का पालन किया जाय, आदि सब बातो के बारे में कानून-कायदे बनाने का अधिकार भी मिनिस्टरो और धारा-सभाओ को नही दिया गया है। इन मामलो के लिए भी गवर्नर को 'अपना विवेक' काम में लाने का अधिकार होगा।

सरकारी खजाने

हाईकोर्टो का खर्चा मंजूर करने के लिए भी गवर्नर को 'अपने

विवेक' से काम लेने का अधिकार होगा। इसमें जजो के वेतन, भत्ते और हाईकोर्ट के अन्य अफसरो व कर्मचारियो के वेतन, भत्ते तथा पेंशने शामिल है।

हाईकोर्टों का खर्चा

जिन-जिन प्रान्तो में वहिर्गत-क्षेत्र कायम किये गये है उन-उन प्रान्तो में वहिर्गत-क्षेत्रो का शासन एकमात्र गवर्नरो के अधिकार में होगा। इनके शासन में गवर्नर को 'अपने विवेक' से ही नही वल्कि 'अपनी मर्जी' से काम करनें का अधिकार होगा। अर्थात् इन क्षेत्रो के शासन में मिनिस्टरो को दखल देने का कोई अधिकार न होगा। यही नही वल्कि इनके वारे में धारा-सभाये भी कोई कानून नही वना सकेगी।

वहिर्गत क्षेत्र

धारा १२३ के अन्तर्गत यदि वाइसराय कवीलो के इलाके, सेना-विभाग, वैदेशिक विभाग या ईसाई गिरजाघरो से सम्वन्ध रखनेवाले अपने अधिकारो और कर्त्तव्यो को किसी प्रान्त के गवर्नर को अपने एजेण्ट की हैसियत में सोप दे, तो इन अधिकारो का प्रयोग और कर्त्तव्यो का पालन गवर्नर 'अपनी मर्जी' से ही करेगा। अर्थात् मिनिस्टरो को इन मामलो में दखल देनें का कोई अधिकार न होगा।

ग० जी० जी०

एक्ट की धारा ३०६ के द्वारा प्रान्तीय गवर्नरो को भारतीय अदालतो के अधिकार-क्षेत्र से विलकुल मुक्त कर दिया गया है। उनके खिलाफ किसी अदालत में न तो कोई कार्रवाई की जा सकती है और न उनके खिलाफ कोई सम्मन, वारण्ट या और किसी तरह का कोई हुक्मनामा जारी किया जा सकता है। इस प्रकार कोई गवर्नर भयकर-से-भयकर अपराध भी करे तव भी उसके खिलाफ कोई कानूनी कार्रवाई भारत की अदालतो

गवर्नर और अदालत

में नहीं की जासकती और न उसे गिरफ़्तार ही किया जासकता है। हाँ, भूतपूर्व गवर्नरो के लिए यह गुंजाइश जरूर रक्खी गई है कि सम्राट् की प्रिवी कौसिल की अनुमति से—या यो कहिए कि भारत-मन्त्री या ब्रिटिश सरकार की अनुमति से—उनपर भारतीय अदालतो में मुकदमा चलाया जा सकेगा। गवर्नर की स्थिति को अदालतो के सामने इतना सुरक्षित कर देने का एकमात्र परिणाम यह होगा कि यदि गवर्नर अपने अधिकारो का दुरुपयोग भी करे या वह अपने अधिकारो की सीमा के बाहर निकल जाय तो भी ऐसी कोई कानूनी तरकीब नही कि उसे भारत मे ऐसा करने से रोका जा सके या कोई दण्ड दिया जाय।

इस प्रकार रोजमर्रा के शासन में गवर्नरो को ऐसे अधिकार प्राप्त है जिनके द्वारा वे अपने मिनिस्टरो की सलाह लिये बगैर या उनकी उपेक्षा करके अपनी मनमानी कर सकते है। इसी प्रकार कानून-निर्माण विभाग यानी प्रान्तीय धारा-सभाओ के सम्बन्ध में भी उन्हे ऐसे अधिकार मिले हुए है कि गवर्नरों के सहयोग के बगैर धारा-सभाओ के अधिकार शून्यवत हो जाते है, जैसा कि धारा-सभाओ सम्बन्धी आगे के विवेचन से मालूम होगा।

गवर्नर और धारा-सभाये

एक्ट की धारा ६२ के अनुसार प्रान्तीय धारा-सभाओ के अधिवेशन बुलाना या समाप्त करना और अधिवेशन का स्थान निश्चित करना एकमात्र गवर्नर की 'मर्ज़ी' पर है। यदि वह चाहे तो इस सम्बन्ध में अपने मिनिस्टरो की सलाह तक न ले, और सलाह ले भी तो वह उसे मानने के लिए बाध्य न होगा। यह तो हुई कानूनी स्थिति; लेकिन व्यवहार में गवर्नर के लिए यह अक्सर सम्भव न होगा कि इन मामलो मे वह अपने

धारा-सभाओ के अधिवेशन

मिनिस्टरो की सलाह न ले या उनकी सलाह के खिलाफ काम करे। फिर भी यदि किसी वक़्त वह यह निश्चय करले कि इस मौके पर मिनिस्टरो की सलाह मानना उचित नहीं है तो उसे अपनी मनमानी करने का पूर्ण अधिकार होगा। इसी तरह किसी समय धारा-सभा के अधिकाश सदस्य यह चाहे कि इस समय धारा-सभा का अधिवेशन बुलाया जाय तो भी वह उनकी प्रार्थना मानने के लिए वाध्य न होगा।

गवर्नर के धारा-सभा का अधिवेशन बुलाने न बुलाने के अधिकार पर एक पावन्दी जरूर है, वह यह कि हरसाल कम-से-कम एक-वार तो धारा-सभा के दोनो भवनो के अधिवेशन बुलाने ही पडेंगे और किसी भवन का एक अधिवेशन समाप्त होने के वाद साल-भर के अन्दर-अन्दर फिर उसी भवन का दूसरा अधिवेशन बुलाना भी जरूरी होगा।

६२ वी धारा के अन्तर्गत प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर को अपने प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्वली को उसकी अवधि से पहले भग करने का

अमेम्बली को भग करने का अधिकार

भी अधिकार होगा, यद्यपि मॉण्टफोर्ड-युग की भाँति अब गवर्नर उसकी अवधि को वढा नही सकते। हाँ, लेजिस्लेटिव कौंसिलो के वारे में नियम भिन्न है। उन्हे गवर्नर भग नही कर सकेगे। धारा-सभा को भग करने के अधिकार को हिन्दुस्तान में किस प्रकार अमल में लाया जायगा, यह अभी ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। कांग्रेस के मत्रि-पद ग्रहण करने से पूर्व कांग्रेम और सरकार में गवर्नरो के विशेपाधिकारो के वारे में जो वाद-विवाद चला था, उसमें कांग्रेस की ओर से यही कहा गया था कि यद्यपि पार्लमेण्ट ने गवर्नरो को वेगिनती विशेपाधिकार दिये है लेकिन इस वात का कोई भी वन्दोवस्त नहीं किया गया कि यदि गवर्नर प्रान्त के मत्रि-मण्डल और धारा-सभा की मर्जी के विरुद्ध अपने विशेपाधिकारो

का प्रयोग करे तो इस बात का फैसला कैसे हो कि गवर्नरों का ऐसा करना उचित है या नहीं ? कॉंग्रेस ने इसका यह हल पेश किया था कि गवर्नर अपने विशेषाधिकारों को मिनिस्टरो की सलाह के विरुद्ध काम में लाने का निश्चय उसी हालत में करे जब कि धारा-सभा मिनिस्टरो के विरुद्ध हो; और यदि धारा-सभा मिनिस्टरो का साथ देती हो, तो वे अपने विशेषाधिकारो का प्रयोग तभी करे जब कि उन्हे यह विश्वास हो कि धारा-सभा को भंग करके और नया चुनाव करके जो नई धारा-सभा बनेगी वह गवर्नर का साथ देगी । ब्रिटिश सरकार और भारत-मंत्री ने कॉंग्रेस की इस सीधी-सी मॉग को न मानकर इस बात को प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया है कि वह भारत के मिनिस्टरो और धारा-सभाओं को वास्तविक जिम्मेदारी सौपने के लिए तैयार नही है ।

भाषण और सन्देश

धारा ६३ उपधारा १ के अनुसार, "गवर्नरो को 'अपनी मर्जी' से प्रान्तीय धारा-सभा के दोनो भवनो में या उनकी सयुक्त वैठक में, और यदि उस प्रान्त में केवल एक भवन है तो उस भवन मे, भाषण देने का अधिकार होगा और इस उद्देश्य से वह सदस्यो को उपस्थित होने का आदेश भी दे सकेगे ।" और धारा ६३ उपधारा २ के अनुसार, "गवर्नर को 'अपनी मर्जी' से धारा-सभा के दोनो भवनो को, और यदि उस प्रान्त में केवल एक भवन है तो उस भवन को, ऐसे बिलो के बारे में जो उन भवनों में पेश है या और किसी बात के बारे में, सन्देश भेजने का अधिकार होगा और जिस भवन को इस प्रकार का सन्देश भेजा जायगा उस भवन का यह फर्ज होगा कि वह जल्दी-से-जल्दी उस बात पर विचार करे जिसके लिए कि सन्देश में निर्देश किया गया हो ।"

धारा-सभा के भवनो को सन्देश भेजने के अधिकार का प्रयोग किस

तरह किया जायगा, यह ठीक-ठीक कहना अभी सम्भव नहीं है, लेकिन इसका कुछ उल्लेख ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट में मिलता है, जिसमें कहा गया है कि "यदि धारा-सभायें ऐसा कानून पास करने की कोशिश करे जिससे हिन्दुस्तानी ईसाई आदि अल्पसख्यक जातियो के हितो को नुक़सान पहुँचने की सम्भावना हो, तो गवर्नर धारा-सभा को सन्देश भेजकर पहलेसे ही यह जता देने का अधिकारी होगा कि धारा-सभा उस कानून को पास भी कर देगी तो भी वह उस बिल को अपनी मजूरी नहीं देगा।"[१]

धारा-सभा के भवनो को सन्देश द्वारा आदेश भेजने के अलावा एक्ट की धारा ८६ उपधारा २ के अनुसार, "यदि गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से यह तसदीक करदे कि ऐसे किसी बिल पर धारा-सभा में वाद-विवाद होने से, जो धारा-सभा में या तो पेश होचुका हो या जो पेश किया जानेवाला हो, या किसी बिल की किसी ख़ास धारा पर वाद-विवाद होने से, या किसी बिल में किये जानेवाले किसी ख़ास सशोधन पर वाद-विवाद होने से, गवर्नर की उस 'ख़ास जिम्मेदारी' के पालन में बाधा पडती है जो उसे प्रान्त के अमन व चैन को बनाये रखने के लिए दीगई है, तो उसे 'अपनी मर्ज़ी' से उस बिल, धारा या सशोधन पर वाद-विवाद को रोक देने का अधिकार होगा और उसकी आज्ञा को मानना सबका फर्ज़ होगा।"

वादविवाद रोकने का अधिकार

आमतौर पर इस अधिकार का प्रयोग उन मौको पर किया जायगा जबकि प्रान्त में साम्प्रदायिक विद्वेष की अग्नि जोरो पर होगी। आदेश-पत्रो के १८वे पैरे के अनुसार, "गवर्नर अपने इस अधिकार का प्रयोग तब-

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ ७८, पैरा १४१।

तक नहीं करेगा जबतक कि उसे इस बात का विश्वास न होजाय कि उस बिल, धारा या संशोधन पर सार्वजनिक रूप से वाद-विवाद होने मात्र से ही प्रान्त के अमन व चैन में खलल पड़ने की आशंका होगी।" लेकिन राजनैतिक उथल-पुथल के समय राजनैतिक प्रश्नो पर वाद-विवाद रोकने की दृष्टि से इस अधिकार का प्रयोग नहीं किया जायगा, इसकी कोई गारण्टी नही है।

प्रान्तीय धारा-सभा द्वारा पास किये गये प्रत्येक बिल के एक्ट बनने के लिए पहले गवर्नर की मंजूरी की जरूरत होती है। गवर्मेण्ट ऑफ़ इण्डिया एक्ट की धारा ७५ के अनुसार, धारा-सभा के बिलों को मंजूर या नामंजूर करना गवर्नर की 'मर्ज़ी' पर है, या वह चाहे तो उसे वाइसराय की मंजूरी के लिए भी रख सकता है। अलबत्ता, अब गवर्नर द्वारा मंजूरी मिल जाने पर फिर वाइसराय की मंजूरी की जरूरत नहीं होगी, जैसा कि मॉण्टफोर्ड-युग में होता था। इन अधिकारो के अलावा गवर्नर को 'अपनी मर्ज़ी' से किसी भी बिल को प्रान्तीय धारा-सभा के भवनो में इस प्रार्थना के साथ वापस भेज देने का भी अधिकार होगा कि धारा-सभा के भवन उस बिल पर या उसकी ख़ास-ख़ास धाराओ पर पुर्नविचार करे या उसमें सुझाये गये संशोधन मंजूर करले। बिल जब इस प्रकार वापस होजायगा, तो धारा-सभा के भवनो को उसपर गवर्नर के सन्देश के मुताबिक विचार करना लाजिमी होगा।

धारा-सभा के बिलो की मजूरी

बिलो को मंजूर या नामंजूर करने के बारे में गवर्नरो को आदेश-पत्रो के द्वारा भी कुछ ख़ास हिदायते दी गई हैं। आदेश-पत्रों के १६वे पैरे में कहा गया है, कि "इस बात का निर्णय करनें में कि हमारा गवर्नर हमारे नाम पर किसी बिल को मंजूर करेगा या नामंजूर, हमारा

गवर्नर इस बात को देखने का ख़ास ख़याल रक्खेगा कि उस बिल का उन 'ख़ास ज़िम्मेदारियों' पर, जो एक्ट द्वारा उसको दी गई है, कैसा असर पड़ता है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि वह और किसी बिना पर, जो उसे आवश्यक और उपयुक्त प्रतीत हो, किसी बिल को नामजूर नहीं कर सकता। किसी भी बिल को नामजूर करने का उसे पूरा अधिकार होगा।" और ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी के अनुसार, "गवर्नरों के ये अधिकार वास्तविक होंगे, और जब भी कभी इनकी आवश्यकता होगी तभी गवर्नर इनका प्रयोग करेंगे।"[1]

आदेश-पत्रों की हिदायतें

आदेश-पत्रों के १७वें पैरे के द्वारा गवर्नर को और भी कई प्रकार के बिलों को मजूर न करने का खासतौर पर आदेश दिया गया है। गवर्नर को इन बिलों को वाइसराय की मजूरी के लिए भेजना होगा, और वाइसराय को उन्हें सम्राट् यानी ब्रिटिश सरकार की मजूरी के लिए भेजना होगा। ये बिल निम्न प्रकार हैं :—

(अ) जो पार्लमेण्ट के किसी ऐसे एक्ट में सशोधन करते हों, या उसके विरुद्ध हों, जो ब्रिटिश भारत में जारी हो;

(ब) जो गवर्नर की राय में हाईकोर्टों के प्रभाव को कम करते हों,

(स) जिनके बारे में गवर्नर यह समझे कि उनके द्वारा ब्रिटेन के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार होने की सम्भावना है,

(द) जिनके बारे में गवर्नर यह समझे कि वे एक्ट की सम्पत्ति-हरण-विरोधी धाराओं के विरुद्ध जाते हैं,

(य) जिनके द्वारा ज़मींदारों के दायमी बन्दोबस्त में कोई परिवर्त्तन या उसका अन्त किया जाय।

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ ७९, पैरा १४३।

मध्यप्रान्त व बरार के गवर्नर को एक ख़ास हिदायत आदेश-पत्र द्वारा इस बात की दीगई है कि जब कभी वह मध्यप्रान्त व बरार की धारा-सभा के ऐसे किसी बिल को मंजूर करे जो बरार में भी लागू हो, तो उसे इस बात की घोषणा करनी होगी कि उसने उस बिल को सम्राट् और निज़ाम हैदराबाद के बीच बरार के सम्बन्ध में हुए इकरारनामे के फलस्वरूप ही लागू किया है।

गवर्नरो को केवल यही अधिकार नही है कि वे प्रान्तीय धारा-सभाओं के बिलो को मंजूरी दें या उन्हे नामंजूर करे, बल्कि कई प्रकार के बिलों पर तो उनकी पूर्व-अनुमति मिले बिना प्रान्तीय धारा-सभा के किसी भवन मे विचार भी नही हो सकता। उदाहरणार्थ, एक्ट की धारा १०८ उपधारा २ के अनुसार, जबतक गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से पहले अनुमति न देदे तबतक धारा-सभा के किसी भी भवन में निम्न प्रकार के बिलो या संशोधनो पर विचार भी नही होसकता :—

पूर्व-अनुमति

(अ) जो गवर्नर के किसी एक्ट में संशोधन करते हो या उसके विरुद्ध हो;

(ब) जो गवर्नर के किसी आर्डिनेस में संशोधन करते हो या उसके विरुद्ध हो;

(स) जो पुलिस से सम्बन्ध रखनेवाले किसी एक्ट में संशोधन करते हो या उसके विरुद्ध हो।

अलावा इसके किसी, बिल पर विचार करने की पूर्व-अनुमति देदेने का यह मतलब नही है कि गवर्नर बाद में भी उसे मंजूर करने के लिए वाध्य होगे। पूर्व-अनुमति देने का नियम केवल जाब्ते के लिए है। लेकिन चूंकि पूर्व-अनुमति का नियम केवल जाब्ते के लिए है, एक्ट की धारा

१०९ के अन्तर्गत यह नियम भी बनाया गया है कि प्रान्तीय धारा-सभा का कोई भी बिल, जो बाद में उपयुक्त मंजूरी मिलने पर एक्ट बन चुका है, केवल इस बिना पर कानून-विरुद्ध नहीं समझा जायगा कि प्रान्तीय धारा-सभा ने उसपर विचार करने के लिए गवर्नर से पहले अनुमति नहीं ली थी।

प्रश्नो और प्रस्तावो पर कलम-कुल्हाडा

धारा-सभा के प्रत्येक भवन को आमतौर पर अपने जाब्ते के लिए नियमोपनियम बनाने का खुद अधिकार होता है। प्रान्तीय धारा-सभाओ को भी यह अधिकार एक्ट की धारा ८४ के अन्तर्गत मिला हुआ है, लेकिन इसी धारा के अन्तर्गत साथ में गवर्नरो को भी यह अधिकार दिया गया है कि वे भी प्रान्त की धारा-सभा के भवनो के जाब्ते के लिए 'अपनी मर्ज़ी' से नियमोपनियम बनादें। और, यदि धारा-सभा के भवनो के और गवर्नरो के बनाये हुए नियमो में भेद होगा तो गवर्नरो के नियम ही श्रेष्ठ माने जायेंगे।

धारा-सभा के सदस्यो के प्रश्नो, प्रस्तावो और 'काम रोको'-प्रस्तावो पर गवर्नरो का जो कलम-कुल्हाड़ा चलता रहता है, वह इन्हीं नियमो के अन्तर्गत गवर्नरो द्वारा लिये हुए अधिकारो के फलस्वरूप चलता है। इन नियमों का खुलासा आगे किया गया है, लेकिन यहां यह बता देना उपयुक्त होगा कि इन नियमो के अनुसार वैदेशिक नीति, देशी रियासतो, कबीलो के इलाको, बहिर्गत-क्षेत्र आदि कई विषयो पर धारा-सभा में कोई भी बहस या विचार-विमर्श तबतक नहीं होसकता जबतक कि गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से पूर्व-अनुमति न देदे।

धारा-सभाओ के निर्माण, संगठन और चुनाव सम्बन्धी मामलो में भी बहुत-से अधिकारो का प्रयोग गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से ही किया करेगा।

उदाहरणार्थ, जिन ६ प्रान्तों में लेजिस्लेटिव कौंसिले स्थापित है उनमें नामजद सदस्यों की नामजदगी करने में गवर्नर 'अपनी मर्जी' से काम लेसकेगा। इसी प्रकार उडीसा की लेजिस्लेटिव असेम्बली में 'पिछडी हुई जातियो और इलाको' के लिए जो ४ प्रतिनिधि नामजद किये जाया करेगे उनकी नामजदगी करने में भी गवर्नर 'अपनी मर्जी' से काम लेसकेगा।

निर्माण सम्बन्धी अधिकार

कानूनन गवर्नर इन मामलो में अपने मिनिस्टरों से सलाह लेने के लिए वाध्य नहीं है; इसलिए अभीतक यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि प्रान्तों के गवर्नर इन मामलो में अपने मिनिस्टरों से कहाँतक सलाह लेगे। कॉग्रेस के मन्त्रि-पद ग्रहण करने का निश्चय होते ही सयुक्त-प्रान्त के गवर्नर ने कॉग्रेसी मिनिस्टरो की सलाह लिये बिना ही संयुक्त-प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल के नामजद सदस्यो की नामजदगी की घोषणा करने में जो जल्दबाजी दिखाई, उससे तो यही प्रतीत होता है कि गवर्नर इन मामलों में मिनिस्टरो के दख़ल को ज्यादा पसन्द नही करते।

धारा-सभाओं के आम चुनाव के लिए या किसी उप-चुनाव के लिए तारीख़ें भी गवर्नर ही 'अपनी मर्जी से' निश्चित करेगा।

इसी प्रकार जो व्यक्ति किसी अपराध में दो साल या दो साल से अधिक की सजा मिलने के कारण चुनाव में नही खडे होसकते, या जो उम्मीदवार और चुनाव-एजेण्ट नियत समय के भीतर चुनाव के ख़र्चे का हिसाब दाख़िल न कर सकने के कारण आगे के चुनावों में खडे होने के अयोग्य ठहरा दिये जाते है, उन सबकी अयोग्यताओं को भी एक्ट की धारा ६९ के अनुसार समय से पूर्व गवर्नर ही 'अपनी मर्जी' से दूर कर सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि कानून-निर्माण विभाग सम्बन्धी जितने भी मुख्य-मुख्य अधिकार है उन सबका भी केन्द्र गवर्नर को ही बनाया गया है; लेकिन जहाँ शासन-विभाग सम्बन्धी अधिकारो के बारे में मिनिस्टरो को सलाहकारो की स्थिति तो दी गई है, वहाँ कानून-निर्माण विभाग सम्बन्धी अधिकारो के प्रयोग में कानूनन गवर्नर मिनिस्टरो की सलाह पूछने के लिए भी बाध्य नही है, यद्यपि व्यवहार में वे इस क्षेत्र में भी मिनिस्टरो की सलाह पर चले तो कोई रुकावट नहीं ह। गवर्नरो को इस प्रकार की कानूनी स्थिति प्रदान करने का कारण यह दिखाई देता है कि शासन-विभाग में मार्के के परिवर्तन करने का अधिकार पार्लमेण्ट ने मिनिस्टरो और धारा-सभाओ को देना उचित नही समझा है, क्योकि यह बात स्पष्ट है कि शासन-विभाग में मार्के का कोई भी परिवर्तन तबतक नहीं होसकता जबतक कि शासन-विभाग से सम्बन्ध रखनेवाले कानूनो में ही आमूल परिवर्तन न कर डाला जाय। इसलिए नई योजनाओ, नये प्रोग्रामो और नई नीतियो को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए मिनिस्टरो को गवर्नरो का ही मुँह ताकना पडेगा।

गवर्नर और मिनिस्टर

विशेष परिस्थितियो के अधिकार

गवर्नरो के जितने अधिकारो का अभीतक वर्णन किया गया है, वे आमतौर पर ऐसे अधिकार है जिनका प्रयोग वे साधारण परिस्थितियो में किया करेगे। लेकिन उनके कुछ अधिकार ऐसे भी है जिनका प्रयोग वे विशेप परिस्थितियो में ही कर सकेगे। ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी ने उन्हे 'विशेपाधिकार' कहा है। लेकिन हमारे ख़याल में विशेपाधिकार तो गवर्नरो को मिले हुए सभी अधिकार है, क्योकि उत्तरदायी शासन-पद्धति में गवर्नर का छोटा-सा अधिकार भी वस्तुत उसका विशेपाधिकार

ही है। अतः हम इन्हे गवर्नरो के विशेष परिस्थितियो के अधिकार कहेगे; जोकि इस प्रकार है—(१) आर्डिनेसो के जरिये शासन करना; (२) प्रान्तीय धारा-सभा की उपेक्षा करके खास अपने अधिकार से एक्ट बनाना; (३) धारा-सभा द्वारा खर्चे की मजूरी न मिलने पर भी खर्च करने की आज्ञा जारी कर देना; और (४) मिनिस्टरो के हाथ से सब महकमे अपने हस्तगत करके प्रान्तीय धारा-सभा को भी भग कर देना तथा प्रान्तीय स्वराज्य का खात्मा करके तीन साल के लिए गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट का भी अमल स्थगित करके शासन के सारे अख्तियारात खुद लेलेना।

गवर्नरो के आर्डिनेस

एक्ट की धारा ८९ के मातहत, "यदि किसी समय गवर्नर को यह विश्वास होजाय कि परिस्थिति ऐसी होगई है कि उसे अपने उन कर्त्तव्यो की पूर्त्ति के लिए, जिनके लिए कि एक्ट में उसे 'अपनी मर्जी' और 'अपना विवेक' काम में लाने के लिए कहा गया है, तुरन्त कार्रवाई करनी चाहिए, तो वह ऐसे आर्डिनेस जारी कर सकेगा जो उसे उस परिस्थिति में उपयुक्त प्रतीत हों।

"इस धारा के अन्तर्गत जारी किये हुए किसी भी आर्डिनेस की अवधि ६ महीने तक होगी, लेकिन दूसरे आर्डिनेस द्वारा उसे फिर ६ महीने के लिए बढाया जा सकेगा।

"इन आर्डिनेसो का कानून में वही स्थान होगा जोकि प्रान्तीय धारा-सभा द्वारा पास किये गये उस एक्ट का होता है जिसे गवर्नर या वाइसराय द्वारा उपयुक्त मंजूरी मिल चुकी हो। लेकिन आर्डिनेस के जरिये गवर्नर कोई ऐसा कानून बनाये जो प्रान्तीय धारा-सभा के अधिकार-क्षेत्र के बिलकुल बाहर हो, तो उस हदतक आर्डिनेस कानून-विरुद्ध समझा जायगा।

"इस प्रकार जारी किये गये आर्डिनेंसो को सम्राट् उसी प्रकार रद कर सकेंगे जिस प्रकार कि वे प्रान्तीय धारा-सभाओ के एक्टो को कर सकते है, और गवर्नर भी जब चाहे तब उन्हे वापस लेसकेगा।

"यदि गवर्नर किसी आर्डिनेंस के जरिये पिछले किसी आर्डिनेंस की मियाद को और बढाना चाहेगा, तो उसे उसकी सूचना वाइसराय के जरिये भारत-मन्त्री को देनी होगी और भारत-मन्त्री का यह फर्ज होगा कि वह उस आर्डिनेंस की प्रतियाँ पार्लमेण्ट के दोनो भवनो के सामने पेश करे।

"गवर्नर इस धारा के अन्तर्गत आर्डिनेंस जारी करते समय 'अपनी मर्जी' से काम लेगा, लेकिन जबतक वह वाइसराय की मजूरी न लेलेगा तबतक आर्डिनेंस जारी न करेगा। वाइसराय भी अपनी मजूरी देते समय 'अपनी मर्जी' से काम लेगा।

"गवर्नर की राय में यदि वाइसराय से पहले मजूरी लेलेना सम्भव न हो, तो वह वाइसराय की मजूरी के बगैर भी आर्डिनेंस जारी कर सकेगा। लेकिन उस हालत में, वाइसराय 'अपनी मर्जी' से उसे यह आदेश दे सकेगा कि आर्डिनेंस वापस लेलिया जाय और तब गवर्नर के लिए आर्डिनेंस को वापस लेलेना लाजिमी होगा।"

यह ध्यान रखने की बात है कि 'प्रान्तीय स्वराज्य' से पहले आर्डिनेंस जारी करने का अधिकार केवल वाइसराय को था और वही प्रान्तो या सारे ब्रिटिश भारत के लिए आर्डिनेंस जारी कर सकता था, लेकिन 'प्रान्तीय स्वराज्य' के अमल में आते ही यह अधिकार गवर्नरो तक को देदिया गया है।

इस सिलसिले में यह भी जानना जरूरी है कि इस धारा के अन्तर्गत गवर्नर अपने प्रान्त की धारा-सभा की मजूरी लेने या उसकी

सलाह लेने तक के लिए वाध्य नहीं है, और यदि धारा-सभा का कोई सदस्य आर्डिनेस में रद्दोबदल करने के लिए कोई बिल पेश करना चाहे तो उसपर भी कोई विचार तबतक नहीं होसकता जबतक कि पहले गवर्नर अनुमति न देदे।

एक्ट की धारा ८८ के द्वारा गवर्नर को यह भी अधिकार दिया गया है कि यदि किसी समय ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होजाय कि खास उसके मिनिस्टर ही यह उपयुक्त समझने लगें कि इस समय आर्डिनेस जारी करना जरूरी है, तो वह उनकी सलाह पर भी आर्डिनेस जारी कर सकता है। इस प्रकार जारी किये गये आर्डिनेसो को हम 'मिनिस्टरों के आर्डिनेस' कहेगे, हालाकि कानूनन वे गवर्नरो के नाम से ही जारी किये जायँगे। एक्ट की धारा ८८ में उनका इस प्रकार विधान किया गया है:—

मिनिस्टरो के आर्डिनेस

"यदि किसी ऐसे वक्त जब कि प्रान्त की धारा-सभा का अधिवेशन न होरहा हो, गवर्नर को यह विश्वास होजाय कि परिस्थिति ऐसी हो गई है कि उसे तुरन्त कार्रवाई करनी चाहिए, तो वह ऐसे आर्डिनेस जारी कर सकेगा जो उसे उस परिस्थिति में उपयुक्त प्रतीत हो।"

इस भाषा से यही प्रतीत होता है कि गवर्नर इस धारा के अन्तर्गत आमतौर पर मिनिस्टरो की सलाह पर ही काम करेगा, लेकिन उसे कई हालतो में अपने मिनिस्टरों की सलाह पर अमल करने से इन्कार करने का भी अधिकार होगा। आर्डिनेस जारी करने की मिनिस्टरो की प्रार्थना को गवर्नर निम्न हालतो में नामजूर कर सकेगा:—

(१) उसके जारी करने से उसकी किसी 'खास जिम्मेदारी' के पालन में वाधा पड़ती हो; या

(२) उसके द्वारा कोई ऐसा कानून बनाया जाय कि जिसको खास प्रान्तीय धारा-सभा पास करना चाहे तो उसमें भी तत्सम्बन्धी बिल पर बिना गवर्नर या वाइसराय की पूर्व-अनुमति के विचार न होसकता हो।

इन दोनो हालतो में गवर्नर को 'अपने विवेक' से काम करने का अधिकार होगा, यानी उसे उपयुक्त प्रतीत हो तो आर्डिनेस जारी करे और उपयुक्त प्रतीत न हो तो न भी करे। लेकिन, धारा ८८ में कहा गया है कि, "यदि इन आर्डिनेसो में कोई आर्डिनेस ऐसा हो कि उसे बिल के रूप में प्रान्तीय धारा-सभा से पास कराने के पहले वाइसराय की मजूरी लेना जरूरी हो, या यदि इन आर्डिनेसो में कोई आर्डिनेस ऐसा हो कि यदि उसे बिल के रूप में प्रान्तीय धारा-सभा से पास कराया जाय तो गवर्नर उस बिल को खुद मजूर करने के बजाय वाइसराय की मजूरी के लिए भेजना उचित समझे, तो इन दोनो हालतो में गवर्नर वाइसराय से पहले मजूरी लिये बिना आर्डिनेस जारी न कर सकेगा।"

धारा ८८ के अन्तर्गत मिनिस्टरों की सलाह पर जारी किये गये आर्डिनेसो और धारा ८९ के अन्तर्गत स्वय गवर्नरो द्वारा जारी किये गये आर्डिनेसो में एक बडा भेद यह भी है, कि जहाँ गवर्नरो के आर्डिनेस उन सब विषयो के बारे में जारी किये जा सकते है जो नये एक्ट में 'प्रान्तीय सूची' या 'सम्मिलित सूची' में शामिल है, वहाँ मिनिस्टरो के आर्डिनेस 'सम्मिलित सूची' वाले विषयो के बारे में तब ही जारी किये जा सकेगे जब कि वे केन्द्रीय कानूनो के विरुद्ध न हो। साथ ही, धारा ८८ के अन्तर्गत जारी किये गये आर्डिनेस के लिए यह भी जरूरी है कि प्रान्तीय धारा-सभा का अधिवेशन शुरू होते ही उसकी प्रतियाँ उसमें पेश की जायें। प्रान्तीय धारा-सभा के प्रथम भवन अर्थात् लेजिस्लेटिव असेम्बली का अधिवेशन प्रारम्भ होने के बाद वह आर्डिनेंस

ज्यादा-से-ज्यादा ६ सप्ताह तक कायम रह सकता है। और इस अर्से में यदि असेम्बली आर्डिनेस को रद करने का प्रस्ताव पास करदे और बाद में उस प्रस्ताव को प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल भी मंजूर करले, तो लेजिस्लेटिव कौंसिल के प्रस्ताव के पास होते ही वह आर्डिनेस रद समझा जायगा। जिन प्रान्तो में लेजिस्लेटिव कौंसिले नही है उन प्रान्तो में लेजिस्लेटिव असेम्बली द्वारा प्रस्ताव पास होते ही ऐसा आर्डिनेंस रद होजायगा।

इस सम्बन्ध में यह बात गौर करने की है कि धारा ८८ के मातहत आर्डिनेस जारी करने के बाद यदि सालभर तक भी प्रान्तीय धारा-सभा का अधिवेशन न बुलाया जाय तो धारा ८८ के मिनिस्टरो के आर्डिनेस बाकायदा सालभर कायम रह सकते है, जबकि धारा ८९ के गवर्नरो के आर्डिनेस पहलेपहल ६ महीने के लिए ही जारी किये जा सकते है।

मिनिस्टरो के आर्डिनेसो और गवर्नरो के आर्डिनेसो मे समानता यह है कि मिनिस्टरो के आर्डिनेसो को भी सम्राट् प्रान्तीय धारा-सभा के एक्टो की भाँति रद कर सकते है और दोनो ही किसी भी समय वापस लिये जा सकते है।

आर्डिनेस जारी करने के अलावा गवर्नर को धारा-सभा की तरह से एक्ट पास करदेने का भी अधिकार है। जहाँ आर्डिनेस कुछ खास अवधि के लिए पास किये जा सकते है, गवर्नरो के ये एक्ट बिना किसी मियाद के उसी प्रकार पास किये जा सकेगें जिस प्रकार धारा-सभाओ के एक्ट पास किये जाते है। पुराने गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट में भी इसी प्रकार का एक अधिकार गवर्नर को था, लेकिन उस अधिकार का प्रयोग तभी किया जा सकता था जब कि पहले गवर्नर या प्रान्तीय सरकार किसी कानून को प्रान्तीय धारा-सभा से पास कराने में असफल होजाय, जबकि नये एक्ट में गवर्नर के

गवर्नरो के एक्ट

लिए यह भी लाजिमी नहीं है कि वह पहले धारा-सभा की राय लेले। गवर्नर को यह अधिकार एक्ट की धारा ९० के मातहत दिया गया है, जो इस प्रकार है :—

"अगर किसी समय गवर्नर को अपने उन कर्त्तव्यो की पूर्त्ति के लिए, जिनके लिए एक्ट में उसे 'अपनी मर्जी' या 'अपना विवेक' काम में लाने के लिए कहा गया है, यह प्रतीत हो कि और कानूनो का बनाना आवश्यक है, तो वह धारा-सभा के भवनो को सन्देश द्वारा यह समझाकर कि किन परिस्थितियो की वजह से और कानूनो का बनाना जरूरी होगया है, या तो

(अ) फौरन ही गवर्नर के एक्ट की शक्ल में ऐसे कानून को पास करदे जिसे वह जरूरी समझे; या

(ब) अपने सन्देश के साथ उस कानून का मसविदा, जिसे वह जरूरी समझता हो, धारा-सभा के भवनो को भेज दे।

"यदि वह फौरन एक्ट पास करने के बजाय केवल बिल का मसविदा ही धारा-सभा को भेजना ठीक समझे, तो उसे एक महीना गुजर जाने के बाद यह अधिकार होगा कि उस बिल को, जिसे उसने मसविदे के तौर पर धारा-सभा में भेजा था, या तो उसी शक्ल में या कुछ सशोधनो के साथ गवर्नर के एक्ट के तौर पर पास करदे। लेकिन ऐसा करने से पहले उसे धारा-सभा के भवनो के उन प्रार्थना-पत्रो पर गौर करना भी लाजिमी होगा जो उसके पास उस एक महीने के भीतर-भीतर उस बिल के बारे में या बिल में सशोधन करने की खातिर भेजे जायँ।

"कानून में गवर्नरो के एक्टो का भी वही स्थान समझा जायगा, जो प्रान्तीय धारा-सभा के एक्टो का समझा जाता है, लेकिन यदि गवर्नर के एक्ट में कोई ऐसी बात हो जो प्रान्तीय धारा-सभाओ के अधिकार-क्षेत्र से बाहर हो, तो वह एक्ट उस हदतक कानून के खिलाफ समझा जायगा।"

इस सिलसिले में यह बता देना भी जरूरी है कि पुराने गवर्मेण्ट ऑफ़ इण्डिया एक्ट में गवर्नरों को इस प्रकार कानून बनाने का जो अधिकार था वह केवल उन विषयो के लिए था जो मॉण्टफोर्ड-युग में 'सुरक्षित विषय' कहलाते थे। इस प्रकार तत्कालीन हस्तान्तरित विषयो से सम्बन्ध रखनेवाला कोई कानून गवर्नर पास नहीं कर सकते थे। लेकिन अब गवर्नरो को 'प्रान्तीय' और 'सम्मिलित' सब विषयो के एक्ट पास करने का अधिकार होगा।

गवर्नरो के आर्डिनेसो की तरह गवर्नरो के एक्टों की प्रतियाँ भी गवर्नरों को वाइसराय के जरिये भारत-मंत्री के पास भेजना लाजिमी है और भारत-मन्त्री का फर्ज है कि वह उन्हे पार्लमेण्ट के दोनो भवनो में पेश करे।

गवर्नरो के आर्डिनेसो की भाँति गवर्नरो के एक्ट जारी करने में भी गवर्नर को 'अपनी मर्जी' से काम करने के लिए कहा गया है, यानी वह अपने मिनिस्टरो की सलाह पूछने या उसे मानने के लिए वाध्य न होगा। लेकिन हरेक एक्ट जारी करने से पहले उसपर वाइसराय की मंजूरी लेलेना जरूरी होगा और वाइसराय भी मंजूरी देने में 'अपनी मर्जी' से काम लेगा।

धारा ८० के अन्तर्गत गवर्नर को यह अधिकार है कि यदि प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्बली वजट की किसी मद में काट-छाँट करदे या किसी मद को विलकुल ही नामंजूर करदे, और गवर्नर यह समझे कि उसकी 'खास जिम्मेदारियो' का ठीक-ठीक पालन करने के लिए यह जरूरी है कि असेम्बली की काट-छाँट को मंजूर न किया जाय, तो उसे यह हुक्म जारी करने का अधिकार होगा कि असेम्बली के फैसले के बावजूद उसी प्रकार खर्च किया जाय जिस प्रकार कि बजट में पहले प्रस्ताव किया गया था।

खर्च की मंजूरी

यो तो प्राय उपर्युक्त सभी विशेषाधिकार असाधारण और आपत्ति-

जनक है; लेकिन वह विशेषाधिकार तो इन सबसे बाजी लेजाता है, जो एक्ट की धारा ९३ के अन्तर्गत दिया गया है। वह इस प्रकार है:—

शासन-विधान का भग

"यदि किसी समय गवर्नर को यह विश्वास होजाय कि ऐसी परिस्थिति पैदा होगई है कि प्रान्त का शासन एक्ट की योजना के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, तो वह एक घोषणा-पत्र के ज़रिये

(अ) इस बात की घोषणा कर सकता है कि वह अपने इन-इन अधिकारों का प्रयोग, जिनका कि उल्लेख उस घोषणा-पत्र में होगा, 'अपनी मर्ज़ी' से ही करेगा; और

(ब) प्रान्त की और किसी भी सत्ता के सब या कुछ अधिकारों को अपने हाथ में लेसकता है।

"घोषणा-पत्र के ज़रिये उसे यह जताने का भी अधिकार होगा कि प्रान्तीय विधान से सम्बन्ध रखनेवाली एक्ट की कौन-कौनसी धाराओं को उसने स्थगित कर दिया है। लेकिन वह इस प्रकार न तो हाईकोर्ट के किसी अधिकार को अपने हाथ में लेसकेगा, और न हाईकोर्ट से सम्बन्ध रखनेवाली एक्ट की किसी धारा को ही स्थगित कर सकेगा।

"गवर्नर को किसी भी समय अपने घोषणा-पत्र में रद्दोबदल करने या उसे वापस लेने का भी अधिकार होगा।

"इस प्रकार के हरेक घोषणा-पत्र की नकल फौरन भारत-मन्त्री के पास भेजी जायगी, जो उसे पार्लमेण्ट के दोनों भवनों के सामने रक्खेगा। गवर्नर इस प्रकार का कोई घोषणा-पत्र तबतक नहीं निकालेगा जबतक कि वह वाइसराय से पहले मंजूरी न लेले। और इस मामले में गवर्नर व वाइसराय दोनों को 'अपनी मर्ज़ी' से काम करने का अधिकार होगा।

"पहलेपहल यह घोषणा-पत्र ६ महीने के लिए जारी होगा। लेकिन—

अगर पार्लमेण्ट के दोनो भवन चाहे तो वे इसकी अवधि को जब चाहे तब प्रस्ताव पास करके एक-एक साल के लिए और बढ़ा सकते है; अलबत्ता इस प्रकार कोई भी घोषणा-पत्र तीन साल से ज्यादा समय के लिए जारी न रक्खा जा सकेगा।

"घोषणा-पत्र द्वारा इस प्रकार शासन-विधान भंग कर दिये जाने पर यदि गवर्नर प्रान्तीय धारा-सभा के कानून बनानें के अधिकारो को अपनें हाथो मे लेले, तो इस दर्मियान जो कानून गवर्नर द्वारा बनाये जायेंगे वे घोषणा-पत्र की अवधि के खत्म होने के बाद भी दो साल तक जारी रह सकेगे।"

गवर्नर के इस विशेषाधिकार के बारे में कोई टिप्पणी करना व्यर्थ है। क्योकि यह अधिकार जितनी व्यापक भाषा में गवर्नरो को दिया गया है, वही इस अधिकार की सबसे बढ़िया टिप्पणी है।

गवर्नरो का वास्तविक महत्व

नये विधान में गवर्नरो का वास्तविक स्थान क्या होगा, इसके बारे मे हम ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट का एक उद्धरण देते है :—

"यह बात स्पष्ट है कि प्रान्तो में उत्तरदायी शासन-पद्धति का सफल होना बहुत-कुछ गवर्नरो के व्यक्तित्व और अनुभव पर निर्भर करता है। ... ... नये विधान में जो कुछ उन्हे करना पडेगा वह उससे कम कीमती या कम महत्व का नही होगा जो कि अभीतक उन्होने किया है।"[१]

इसपर से जो एकमात्र निष्कर्ष निकाला जासकता है, वह यह है कि चूँकि गवर्नर ब्रिटिश साम्राज्यवादी मशीन का ही एक पुर्जा है, इसलिए नये विधान में गवर्नरो का वास्तविक महत्व इसीमें है कि वे ब्रिटिश पार्लमेण्ट और ब्रिटिश सरकार के एजेण्ट के तौर पर भारत में ब्रिटिश हितो की रक्षा कहाँतक करते है।

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ ५७, पैरा १०२।

: ४ :

मिनिस्टर

उत्तरदायी शासन और मिनिस्टर

उत्तरदायी शासन का मूल सिद्धान्त—जैसा कि इंग्लैण्ड और ब्रिटिश साम्राज्य के आस्ट्रेलिया, कनाडा, अफ्रीका आदि उपनिवेशो में आजकल माना जाता है—यह है कि अधिकार चाहे किसी के नाम पर हो, उनका प्रयोग जनता के उन चुने हुए प्रतिनिधियो की सलाह पर ही किया जा सकता है जिनका कि उस देश या प्रान्त की धारा-सभा में बहुमत हो। इस प्रकार सलाह देने के लिए जो व्यक्ति नियुक्त किये जाते हैं उन्हींका नाम मिनिस्टर है। सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नरो को अपनें मिनिस्टरो की सलाह के विरुद्ध काम करने का अधिकार दो ही हालतो में होता है। इनमें पहली हालत तो यह है कि मिनिस्टर धारा-सभा का विश्वास खोदें और धारा-सभा उनमें अपनें अविश्वास को निश्चित रूप से प्रकट करदे; और दूसरी वह है जब धारा-सभा का तो मिनिस्टरो में विश्वास हो लेकिन सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर का यह निश्चित मत हो कि देश मिनिस्टरो की नीति के खिलाफ होगया है। इनमें से पहली हालत में मिनिस्टरो को इस्तीफा देना पड़ता है और उनकी जगह धारा-सभा के वे सदस्य नियुक्त किये जाते हैं जिनका धारा-सभा में बहुमत हो। हाँ, यदि मिनिस्टरो को यह विश्वास हो कि देश उनके साथ है, तो उन्हे सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर से यह प्रार्थना करनें का अधिकार होता है कि धारा-सभा को भंग करके नया चुनाव किया जाय, ताकि यह ठीक-ठीक

निश्चित होजाय कि देश मिनिस्टरों के साथ है या धारा-सभा के। यदि चुनाव के बाद धारा-सभा में मिनिस्टरो के समर्थको का बहुमत हो, तो यह समझा जाता है कि देश मिनिस्टरो के साथ है; उस हालत में सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर को अपने पुराने मिनिस्टरो की सलाह पर चलना लाजिमी होजाता है। लेकिन यदि चुनाव के बाद धारा-सभा में मिनिस्टरो के समर्थको का अल्पमत रहे और मिनिस्टरों के विरोधियों का बहुमत हो, तो पुराने मिनिस्टरो को इस्तीफा देना पड़ता है और उनकी जगह वे व्यक्ति मिनिस्टर नियुक्त किये जाते हैं जिनका धारा-सभा में बहुमत हो; उस हालत में सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर को अपने नये मिनिस्टरो की सलाह पर चलना लाज़िमी होजाता है। दूसरी हालत में भी धारा-सभा को भंग करके और नये चुनाव की आज्ञा देकर इस बात का फैसला किया जाता है कि देश वास्तव में मिनिस्टरों के साथ है या नही। यदि नये चुनाव के बाद भी मिनिस्टरो के समर्थको का धारा-सभा में बहुमत रहे, तो मिनिस्टरो की सलाह पर ही काम किया जाता है; लेकिन यदि नये चुनाव के बाद मिनिस्टरो के समर्थको का धारा-सभा में बहुमत न रहे और दूसरा कोई दल मन्त्रि-मण्डल बनाने को तैयार हो, तो पुराने मिनिस्टरो को इस्तीफा देना पड़ता है और उनकी जगह वे व्यक्ति मिनिस्टर नियुक्त किये जाते है जिनका नई धारा-सभा में बहुमत हो। उस हालत में सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर को अपने इन नये मिनिस्टरों की सलाह पर चलना लाजिमी होजाता है। तीसरी और कोई हालत ऐसी नहीं है जिसमें सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर को मिनिस्टरों की सलाह के विरुद्ध काम करने का अधिकार हो।

इस विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि वास्तविक उत्तरदायी शासन-पद्धति के अनुसार सम्राट्, गवर्नर-जनरल या गवर्नर अपनी

जिम्मेदारी पर तो किसी अधिकार का प्रयोग कर ही नहीं सकते। उन्हे सदा किसी-न-किसी मिनिस्टर की सलाह पर ही काम करना पड़ेगा। अगर वे समझें कि मिनिस्टरो में धारा-सभा का विश्वास नहीं रहा है तो वे अपने मिनिस्टरो को बदल सकते है, और यदि वे यह समझें कि मिनिस्टरो और धारा-सभा दोनो में ही देश का विश्वास नही रहा है तो धारा-सभा का नया चुनाव कराके इस बात का फैसला करा सकते है कि वास्तव में देश किसके साथ है, लेकिन उन्हे काम करना पडेगा किसी-न-किसी मिनिस्टर की सलाह पर ही।

इस प्रकार उत्तरदायी शासन-पद्धति में मिनिस्टर का स्थान बडी जिम्मेदारी का और बडा महत्वपूर्ण होता है। लेकिन ब्रिटिश राजनीतिज्ञो के इस दावे के बावजूद कि उन्होंने प्रान्तो में प्रान्तीय स्वराज्य के साथ-साथ उत्तरदायी शासन-पद्धति भी स्थापित की है, नये विधान में मिनिस्टरो को उतना महत्व नही दिया गया है।

एक्ट की धारा ५१ उपधारा १ के अन्तर्गत मन्त्रि-मण्डल (अर्थात् मिनिस्टरों) की नियुक्ति का अधिकार गवर्नर को दिया गया है और

मिनिस्टरो की नियुक्ति

इसी धारा की उपधारा ४ के अनुसार मिनिस्टरो की नियुक्ति में गवर्नर को 'अपनी मर्जी' से काम करने का अधिकार दिया गया है। दूसरे शब्दो में, मिनिस्टरो की नियुक्ति के मामले में कानूनन गवर्नर किसीकी सलाह लेने या मानने के लिए बाध्य नही होगा। हॉ, आदेश-पत्रो की धारा ८ में इस सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण आदेश गवर्नरो को दिये गये है, जो इस प्रकार है :—

"अपने मन्त्रि-मण्डल के सदस्यो की नियुक्ति करते समय उनके चुनाव में हमारा गवर्नर निम्न विधि को अपनाने की ज्यादा-से-ज्यादा

कोशिश करेगा; यानी उस व्यक्ति से सलाह-मशविरा करके जो उसकी राय में प्रान्तीय धारा-सभा में दृढ़ बहुमत रखता हो, उन व्यक्तियों को नियुक्त करेगा (जिनमें यथासम्भव खास-खास अल्पसंख्यक जातियो के सदस्य भी शामिल हों) जो संयुक्त रूप से धारा-सभा का सबसे अच्छी तरह विश्वास प्राप्त कर सकते हो। ऐसा करते समय हमारा गवर्नर इस बात का भी सदा ख़याल रक्खेगा कि मिनिस्टरो में संयुक्त उत्तरदायित्व की भावना को बढ़ाना आवश्यक है।"

आदेश-पत्रों की इस धारा के अनुसार यद्यपि गवर्नरों के लिए यह लाज़िमी है कि वे धारा-सभा की उस पार्टी के नेता से ही सलाह-मशविरा करके मंत्रि-मण्डल का निर्माण करे जिसका धारा-सभा में बहुमत हो, फिर भी गवर्नर आदेश-पत्र की इस आज्ञा को भंग करे तो कोई ऐसा कानूनी जरिया नहीं है कि जिससे उनको ऐसा करने के लिए वाध्य किया जा सके। कानूनन अवश्य गवर्नर का यह फर्ज है कि वह आदेश-पत्रो के आदेशो का भी ठीक उसी तरह पालन करे जिस तरह कि वह पार्लमेण्ट के किसी एक्ट की धाराओ का करता है, लेकिन आदेश-पत्रो के आदेशों के बारे में यह विचित्र बात है कि उनके पालन में वह केवल सम्राट् के प्रति ही उत्तरदायी समझा जाता है; सम्राट् के अलावा और कोई अधिकारी या अदालत गवर्नरों को आदेश-पत्रो के आदेशों के विरुद्ध काम करने के कारण दोषी या अपराधी नही ठहरा सकते। इसी प्रकार हालॉकि आदेश-पत्र में गवर्नरो को यह आदेश दिया गया है कि वे अपने मिनिस्टरों में संयुक्त उत्तरदायित्व की भावना को प्रोत्साहन दें, लेकिन यदि गवर्नर इस आदेश के विरुद्ध आचरण करने लगें तो उन्हे किसी कानूनी जरिये से रोका नहीं जासकता।

मन्त्रि-मण्डल के निर्माण के बारे में आमतौर पर प्रचलित प्रथा यह

है कि प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्वली के आम चुनावो के बाद गवर्नर उस पार्टी के नेता को मन्त्रि-मण्डल बनाने का निमन्त्रण देता है जिसका कि धारा-सभा में बहुमत हो। यदि वह नेता उस निमन्त्रण को स्वीकार करले और मन्त्रि-मण्डल बनाने के लिए तैयार होजाय, तो उससे मिनिस्टरो के नाम पेश करने के लिए कहा जाता है और गवर्नर की मजूरी के बाद उन्हे गजट में प्रकाशित कर दिया जाता है। इस प्रकार जो व्यक्ति मत्रि-मण्डल वनाता है वह प्राइम मिनिस्टर, चीफ मिनिस्टर या प्रीमी-यर यानी प्रधान-मंत्री के नाम से प्रसिद्ध होता है; बाकी सब मिनिस्टर या मन्त्री कहलाते है। लेकिन कोई भी मिनिस्टर सरकारी काम तब-तक नहीं सम्हाल सकता जबतक कि वह सम्राट् की वफादारी की और दूसरी उन शपथो को गवर्नर या गवर्नर द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति के सामने न लेले जिनका कि गवर्नरो के आदेश-पत्रो में उल्लेख किया गया है। मिनिस्टरो के काम का बँटवारा भी गवर्नर आमतौर पर प्रधान-मत्री की सलाह से ही करता है, हालाँकि इस मामले में भी एक्ट की धाराओ के अन्तर्गत उसे 'अपनी मर्जी' से चलने का अधिकार है। आमतौर पर प्रत्येक मिनिस्टर के जिम्मे प्रान्तीय शासन-विभाग के कुछ महकमे कर दिये जाते है और मिनिस्टरो को अक्सर उन महकमो के मिनिस्टर के नाम से ही सम्बोधित किया जाता है।

मत्रि-मण्डल का निर्माण : प्रचलित प्रथा

मत्रि-मण्डल के सदस्यो का चुनाव करने का काम कुछ कम मुश्किल नहीं है। इस काम में गवर्नर द्वारा आमन्त्रित व्यक्ति को कई दिक्कतो का सामना करना पड़ता है। इसकी वजह यह है कि जगहे तो अक्सर कम होती है और सन्तुष्ट करना पड़ता है ज्यादा लोगो को। इसके अलावा भारत में साम्प्रदायिक तिनिधित्व की एक दिक्कत और है।

गवर्नर के आदेश-पत्रो में यह बात बिलकुल स्पष्ट करदी गई है कि मंत्रि-मण्डल में यथासम्भव प्रत्येक अल्पसंख्यक जाति के सदस्य भी शामिल किये जायँ।

प्रत्येक मिनिस्टर के लिए प्रान्त की धारा-सभा का सदस्य होना आवश्यक है। यदि कोई मिनिस्टर लगातार ६ महीने तक प्रान्तीय धारा-सभा के किसी भी भवन का सदस्य न रहे, तो उसे मिनिस्टरी के ओहदे से स्वत. अलग होजाना पडेगा। अक्सर ऐसा होता है कि जिस पार्टी के नेता को मंत्रि-मण्डल बनाने के लिए बुलाया जाता है उस पार्टी का कोई प्रमुख सदस्य चुनाव में हार जाता है। यदि उस सदस्य को मंत्रि-मण्डल में लेना आवश्यक समझा जाय, तो यह तजवीज की जाती है कि उसे मिनिस्टर तो नियुक्त कर दिया जाय लेकिन ६ महीने के अन्दर-अन्दर किसी निर्वाचन-क्षेत्र से उसका चुनाव होजाय। ऐसा करने के लिए धारा-सभा के किसी सदस्य को, जो उस पार्टी का भी सदस्य हो, इस्तीफा देने के लिए तैयार किया जाता है और उसके इस्तीफ़ा देने पर नया चुनाव होता है। यदि वह मिनिस्टर ६ महीने में किसी भी निर्वाचन-क्षेत्र से न चुना जा सके, तो ६ महीने के समाप्त होने पर उसे मिनिस्टरी का चार्ज दे देना पड़ता है।

मंत्रि-मण्डल के सदस्य आमतौर पर उसी पार्टी में से लिये जाते हैं जिसका कि धारा-सभा में बहुमत होता है। इस पद्धति का स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि मंत्रि-मण्डल अपने हरेक काम के लिए संयुक्तरूप से धारा-सभा के प्रति उत्तरदायी समझा जाता है। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है—जैसा कि पंजाब, बंगाल और आसाम आदि प्रान्तों में पहले चुनावो के बाद हुआ—कि धारा-सभा में किसी भी दल का स्पष्ट बहुमत नही होता। ऐसी परिस्थिति में मंत्रि-मण्डल बनाने के लिए गवर्नर को

उस दल के नेता को निमंत्रण देना पड़ता है जो दूसरे दलो के सहयोग से मन्त्रि-मण्डल का निर्माण कर सके। इस प्रकार बनाये गये मन्त्रि-मण्डलो को अक्सर सयुक्त या गंगा-जमुनी मन्त्रि-मण्डल (Coalition Ministry) कहते हैं। लेकिन इस प्रकार का मन्त्रि-मण्डल किसी एक नीति पर नही चल सकता, क्योंकि उसके सदस्यो के ध्येय और उद्देश्यो में समानता कभी आ ही नहीं सकती।

सयुक्त उत्तरदायित्व और प्रधान-मन्त्री

मिनिस्टरो के सयुक्त उत्तरदायित्व के लिए प्रधान-मन्त्री का होना बहुत ही आवश्यक है। इसके लिए प्रधान-मन्त्री ही मिनिस्टरो की कौंसिल का प्रधान और शासन का वास्तविक अध्यक्ष होना चाहिए, ताकि प्रत्येक मिनिस्टर प्रधान-मन्त्री को ही अपना मुखिया समझे। लेकिन एक्ट की धारा ५० उपधारा २ के अन्तर्गत गवर्नर को 'अपनी मर्जी' से मिनिस्टरो की कौंसिल[1] का सभापतित्व करने का अधिकार होगा। इसके अलावा शासन का वास्तविक अध्यक्ष भी एक्ट की योजना के अनुसार गवर्नर ही होगा। इन बातो को देखते हुए यह कहना जरा मुश्किल दिखाई देता है कि मिनिस्टरो में संयुक्त उत्तरदायित्व की भावना किस हद तक काम कर सकेगी।

मिनिस्टरो के अधिकार

नये विधान में मिनिस्टरो के क्या-क्या अधिकार होगे, इसके बारे में बहुत-कुछ गवर्नर के अधिकारो और स्थिति के सिलसिले में लिखा जा चुका है। वास्तव में नये विधान में गवर्नर और मिनिस्टरो के अधिकारो का सम्बन्ध इतना घनिष्ट रक्खा गया है कि एक के अधिकारो के वर्णन में दूसरे के अधि-

१ सयुक्त रूप से मन्त्रि-मण्डल के सदस्यों का नाम कानून में 'मिनिस्टरों की कौंसिल' है।

कारो का स्वतः वर्णन होजाता है। फिर भी मिनिस्टरो के अधिकारों के बारे में स्वतंत्र रूप से विचार करना आवश्यक है।

कानूनी दृष्टि से एक्ट की धारा ५० के अनुसार मिनिस्टरों की स्थिति, व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से, केवल सलाहकारो की है। इसके अलावा और कोई अधिकार उन्हें एक्ट की किसी धारा द्वारा प्रदान नही किया गया। मगर, एक्ट की धारा ५९ उपधारा ३ के अन्तर्गत गवर्नर को 'अपनी मर्जी से किन्तु अपने मिनिस्टरो से सलाह लेकर'[१] ऐसे नियमो के बनाने का अधिकार दिया गया है, जिनके द्वारा वह अपने उन अधिकारों के अलावा सब अधिकारो का प्रयोग अपने मिनिस्टरो के ऊपर छोड़ सकता है जिनके प्रयोग मे कि उसे 'अपनी मर्जी' से चलने का हक है। भिन्न-भिन्न मिनिस्टरो के बीच में काम का जो बँटवारा होता है, वह भी अनुमानतः इन नियमो के जरिये ही किया जाता है। ये नियम आमतौर पर गुप्त समझे जाते हैं और इन्हे प्रकट नही किया जाता; लेकिन इन नियमो का आधारभूत सिद्धान्त यही दिखाई देता है कि जहाँतक उन विषयो से सम्बन्ध रखनेवाले अधिकारों का सम्बन्ध है जिनके प्रयोग में गवर्नर 'अपनी मर्जी' से चल सकता है, मिनिस्टरो से न तो कोई पूछताछ की जायगी और न तद्विषयक कागजात ही उनके पास भेजे जायंगे। उनपर हुक्म खास गवर्नर द्वारा ही जारी किये जायँगे। जिन मामलो में गवर्नर 'अपने विवेक' से काम ले सकता है, उन मामलो से सम्बन्ध रखनेवाले सब कागजात मिनिस्टरो के जरिये गवर्नर के पास जाने चाहिएँ।

१ 'अपनी मर्जी' के अधिकारो के बारे मे गवर्नर आमतौर पर अपने मिनिस्टरो से सलाह लेने के लिए बाध्य नही है, लेकिन इस धारा के अन्तर्गत उसे खासतौर पर अपने मिनिस्टरो से सलाह लेने का आदेश दिया गया है।

शेष सब मामलो में हुक्म या तो स्वयं मिनिस्टर जारी कर सकते है या प्रान्तीय सरकार के भिन्न-भिन्न महकमो के सरकारी सेक्रेटरी, जो आमतौर पर इण्डियन सिविल सर्विस में से लिये जाते है। और यह भी सम्भव है कि इन शेष मामलो में भी गवर्नरो नें कुछ ऐसे विषय निर्धारित कर दिये हो जिनके कागजात मिनिस्टरो के पास जानें के बाद उनके पास जरूर भेजे जायें।

इन नियमो के अन्तर्गत जिन-जिन मामलो में मिनिस्टरो को आज्ञा देने का अधिकार होगा, उन सब मामलो में आमतौर पर मिनिस्टर ही अन्तिम रूप से गवर्नर के प्रतिनिधि की हैसियत से आज्ञा देंगे; लेकिन एक्ट की धारा ५९ उपधारा ४ के अन्तर्गत प्रत्येक मिनिस्टर और सेक्रेटरी का यह कर्तव्य निर्धारित किया गया है कि यदि किसी मामले में उनमें से किसीको भी यह बात दिखाई दे कि गवर्नर की किसी 'खास जिम्मेदारी' का सवाल आता है या आसकता है, तो सेक्रेटरी तो उस बात की ओर मिनिस्टर व गवर्नर का ध्यान आकर्षित करे और मिनिस्टर गवर्नर का। सक्षेप में, इस प्रकार 'खास जिम्मेदारियो' के बहाने सरकारी सेक्रेटरियो को गवर्नर तक पहुँचने का और मिनिस्टरो के मार्ग में सहज ही रोडे अटकानें का एक बहुत ही सुलभ अवसर मिल सकता है। इग्लैण्ड में कोई भी सरकारी सेक्रेटरी इस प्रकार सीधा सम्राट् के पास नहीं पहुँच सकता। कहते है कि पार्लमेण्ट में इण्डिया बिल की इस उपधारा पर जब बहस हुई थी, तो पार्लमेण्ट के कुछ सदस्यो ने तो यहाँ तक अपनी राय जाहिर की थी कि शासन के जो कुछ थोडे-बहुत अधिकार नये विधान में जनता के प्रतिनिधियो को दिये गये है उनका खातमा सेक्रेटरियो के इस अधिकार से होजायगा।

यही नहीं, एक्ट की धारा ५९ उपधारा ४ के अनुसार, गवर्नर

नियम बनाकर अपने मिनिस्टरो और सरकारी सेक्रेटरियों को इस बात का भी आदेश देसकते है कि उसे (अर्थात् गवर्नर को) उन सब बातों की समय-समय पर सूचना दी जाती रहे जिनका कि उन नियमों में उल्लेख हो।

सरकारी हुक्म जारी करने की विधि

जैसा कि हम ऊपर देख चुके है, धारा ५९ उपधारा ३ के अन्तर्गत गवर्नरो के बहुत-से अधिकार मिनिस्टरों और सेक्रेटरियो को दे दिये जायँगे, और इन मामलों में मिनिस्टर या सेक्रेटरी गवर्नर की ओर से हुक्म दे सकेंगे। लेकिन इसी धारा की उपधारा १ में एक बहुत ही विचित्र नियम यह रक्खा गया हैं कि किसी भी कागज पर हुक्म चाहे गवर्नर द्वारा दिया जाय या किसी मिनिस्टर या सेक्रेटरी द्वारा, वह हुक्म जारी होगा सदा गवर्नर के नाम से ही। उदाहरणार्थ, चाहे किसी मिनिस्टर के हुक्म से ही किसी राजबन्दी की रिहाई का या मालगुजारी की माफी का या और किसी बात का हुक्म क्यो न निकले, कहा यही जायगा कि गवर्नर ने अमुक जिले में इतनी मालगुजारी की छूट दी है या अमुक राजबन्दी को गवर्नर ने रिहा किया है। इस नियम को बनाने का यह उद्देश्य हैं कि बाहरी लोगो को यह बात न मालूम पड़ सके कि भलाई का या बुराई का कौन-सा काम गवर्नर ने किया और कौन-सा मिनिस्टरो ने। मॉण्टफोर्ड-युग में ऐसा होता था कि जो भी कोई हुक्म सुरक्षित विषयो के बारे में दिया जाता उसके बारे में लिखा जाता था कि 'सकौंसिल गवर्नर' (Governor-in-Council) ने अमुक हुक्म दिया है, और जो कोई हुक्म हस्तान्तरित विषयों के बारे में दिया जाता उसके बारे में यह लिखा जाता था कि 'गवर्नर ने अपने मिनिस्टरो की सलाह पर' (Governor acting with his Ministers) अमुक हुक्म दिया है।

जहाँ एक्ट की धारा ५९ उपधारा १ के अनुसार प्रत्येक सरकारी हुक्म—चाहे वह गवर्नर, मिनिस्टर या सेक्रेटरी इनमें से किसीका भी हो—गवर्नर के नाम से ही जारी होगा, उपधारा २ के अनुसार गवर्नर को 'अपनी मर्जी से' लेकिन मिनिस्टरो से सलाह लेकर इस बात के नियम बनाने का अधिकार होगा कि इन सबके हुक्म किसके हस्ताक्षरो से प्रकाशित होने पर प्रामाणिक माने जायँगे। इस उपधारा के अन्तर्गत जो नियम भिन्न-भिन्न प्रान्तो में गवर्नरो ने प्रकाशित किये है उनका मूल सिद्धान्त अभीतक यही है कि सब सरकारी हुक्म या तो किसी सरकारी सेक्रेटरी के हस्ताक्षर से या किसी सहायक सेक्रेटरी के हस्ताक्षर से ही जाने चाहिएँ। मिनिस्टर या पार्लमेण्टरी सेक्रेटरी अपने हस्ताक्षर से कोई हुक्म किसी दूसरे अफसर को नही भेज सकते। जब किसी मिनिस्टर को किसी मामले में कोई हुक्म देना होगा तो वह अपना हुक्म सरकारी सेक्रेटरी को ही सुना सकेगा, और फिर सरकारी सेक्रेटरी ही अपने हस्ताक्षरो से उसे जारी करेगा। इस बीच में सरकारी सेक्रेटरी गवर्नर की 'खास जिम्मेदारियों' के बहाने उस मामले को गवर्नर तक ले जाने का भी अधिकारी होगा। यहाँ यह कहना अप्रासगिक न होगा कि यदि गवर्नर चाहे तो इन नियमो में तब्दीली करके मिनिस्टरो और उनके पार्लमेण्टरी सेक्रेटरियो को यह अधिकार देसकते है कि उनके यानी मिनिस्टरो और पार्लमेण्टरी सेक्रेटरियो के हस्ताक्षरो से जो हुक्म सुनाये जायँगे वे अन्य सरकारी हुक्मो के समान ही प्रामाणिक समझे जायँगे।

इग्लैण्ड, कनाडा आदि पार्लमेण्टरी पद्धति द्वारा शासित देशो के मिनिस्टरो की स्थिति यहाँके मिनिस्टरो की स्थिति से बहुत-कुछ भिन्न है। उदाहरणार्थ, इग्लैण्ड में भारत-मंत्री एक ओर तो भारत-सम्बन्धी मामलो में सम्राट् के सलाहकार की हैसियत से सम्राट् के भारतीय शासन

किस प्रान्त के मन्त्रि-मण्डल में कितने मिनिस्टर होगे, इसका कोई उल्लेख न तो एक्ट में किया गया है और न गवर्नरो के आदेश-पत्रो में।

सख्या और वेतन

अत॰ प्रत्येक प्रान्त का गवर्नर अपने प्रधान-मंत्री की सलाह से प्रान्त की आवश्यकतानुसार जितने चाहे उतने मिनिस्टर नियुक्त कर सकता है।

प्रत्येक प्रान्त की धारा-सभा को एक्ट के द्वारा मिनिस्टरो के वेतन और भत्तो को निश्चित करने का अधिकार है, लेकिन वह किसी भी मिनिस्टर के वेतन में उसकी अवधि से पूर्व कोई तब्दीली नहीं कर सकती। इसके अलावा मिनिस्टरो के वेतन के लिए हर साल प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्बली की मजूरी लेने की भी जरूरत नही है, जिस प्रकार कि और ख़र्चों के लिए होती है। यह ध्यान रहे कि इग्लैण्ड में ऐसा नहीं है। वहाँ हरेक मिनिस्टर के वेतन की पाई-पाई के लिए हर साल पार्लमेण्ट से मजूरी लेनी पड़ती है, और यही वजह है कि इग्लैण्ड के मिनिस्टर पार्लमेण्ट के प्रति सदा पूर्णरूप से उत्तरदायी रहते है।

जिन-जिन देशो में इग्लैण्ड के तर्ज की पार्लमेण्टरी शासन-पद्धति प्रचलित है, उन-उन देशो में मिनस्टरो के अलावा और कई छोटे-छोटे

पार्लमेण्टरी सेक्रेटरी

सहायक मिनिस्टर भी होते है। इन्हे किसी वडे मिनिस्टर के साथ जोड़ दिया जाता है, जिसके पार्लमेण्टरी तथा शासन-सम्बन्धी काम में ये मदद देते है। इस प्रकार के सहायक अथवा जूनियर मिनिस्टरो को इंग्लैण्ड में आमतौर पर पार्लमेण्टरी अण्डर-सेक्रेटरी या अन्य नामो से पुकारा जाता है। उन्हे आमतौर पर केबिनेट अर्थात् मन्त्रि-मण्डल की बैठक में भाग लेने का अधिकार नहीं होता; लेकिन केबिनट के सदस्यो के इस्तीफा देने पर उन्हे भी इस्तीफा देना पड़ता है।

भारत में भी कई प्रान्तो में मिनिस्टरो की सहायता के लिए इसी प्रकार के सहायक मिनिस्टर नियुक्त किये गये है, जिन्हे यहाँ पार्लमेण्टरी सेक्रेटरी का नाम दिया गया है। गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट में पार्लमेण्टरी सेक्रेटरियो के बारे में कोई विशेष धारा नही रक्खी गई है और फिलहाल इन्हे मिनिस्टरो के काम में सहायता देने के लिए ही नियुक्त किया गया है। इनके कर्तव्य और अधिकारो के बारे मे इतना ही लिखना काफी है, कि चूँकि ये मिनिस्टरो की सहायतार्थ नियुक्त किये जाते है इसलिए इनके अधिकार मिनिस्टरो के अधिकारो से ज्यादा नही होसकते। इंग्लैण्ड आदि देशो में पार्लमेण्टरी सेक्रेटरी का पद आमतौर से मिनिस्टरी पर पहुँचने की पहली सीढी समझा जाता है और इसके जरिये योग्य और उत्साही व्यक्तियो को आगे बढने का अच्छा मौका मिल जाता है। शायद यही बात भारत में कुछ हद तक सत्य सिद्ध होगी।

पार्लमेण्टरी सेक्रेटरियो के वेतन-भत्तो के लिए हरसाल प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्बली की मजूरी लेना जरूरी है। इसके अलावा, चूंकि इन पदो पर आमतौर से धारा-सभा के सदस्य ही नियुक्त किये जाते है, प्रान्त की धारा-सभा को यह एक्ट भी पास करना पडता है कि कोई भी पार्लमेण्टरी सेक्रेटरी धारा-सभा का सदस्य रहने से इसलिए वचित नही किया जायगा कि वह सरकारी खजाने से वेतन पाता है। इसकी वजह यह है कि गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के अन्तर्गत सरकारी खजाने से वेतन पानेवाला मिनिस्टरो के सिवा कोई भी व्यक्ति न तो प्रान्तीय धारा-सभा के चुनाव में खडा होसकता है और न प्रान्तीय धारा-सभा का सदस्य रह सकता है, जबतक कि प्रान्तीय धारा-सभा इस आशय का एक्ट न पास करदे।

एक्ट की धारा ५५ के अनुसार प्रत्येक प्रान्त के गवर्नर को यह

आदेश दिया गया है कि वह प्रान्त के लिए एक एडवोकेट-जनरल की नियुक्ति करे, जिसकी योग्यता उससे कम न हो जितनी कि हाईकोर्ट की जजी के लिए आवश्यक है। एक्ट के अन्तर्गत एडवोकेट-जनरल का काम प्रान्तीय सरकार को कानूनी मसलो पर सलाह देना है। इसके अलावा कानून से सम्बन्ध रखनेवाले और काम भी प्रान्तीय सरकार उसके सुपुर्द कर सकती है। जैसे कि हाईकोर्ट वगैरा में सरकार की तरफ से वकालत करना आदि। एडवोकेट-जनरल की नियुक्ति, बर्खास्तगी और उसके वेतन-भत्ते निश्चित करने के लिए गवर्नर को 'अपने विवेक' से काम लेने का अधिकार दिया गया है। दूसरे शब्दो में एडवोकेट-जनरल की नियुक्ति, बर्खास्तगी और उसके वेतन-भत्तो का निश्चय करना केवल प्रान्तीय मिनिस्टरो का ही काम न होगा, बल्कि गवर्नर को भी उसमें हस्तक्षेप करने का अधिकार होगा।

एडवोकेट-जनरल

पुराने गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के अन्तर्गत केवल तीन प्रान्तो यानी तीनो प्रेसिडेंसियो में ही एडवोकेट-जनरल नियुक्त किये जाते थे। लेकिन ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी ने सिफारिश की कि प्रत्येक प्रान्त में शुरू से ही एडवोकेट-जनरल नियुक्त कर दिये जायें, जिनका मुख्य काम प्रान्तीय सरकार को पेचीदा कानूनी मसलो पर सलाह देना हो, क्योकि नये विधान में पहले से भी ज्यादा ऐसे मौके आयेंगे जिनमें प्रान्तीय सरकार को उपयुक्त कानूनी सलाह का प्राप्त करना जरूरी होगा।[1]

इग्लैण्ड में मन्त्रि-मण्डल को सलाह देनेवाला जो कानूनी अफसर होता है उसको एटार्नी-जनरल कहते हैं। उसकी नियुक्ति प्रधान-मन्त्री के हाथ में रहती है और वह एक प्रकार से मन्त्रि-मण्डल का ही अग होता

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ २३९, पैरा ४०१

है। यहाँतक कि मन्त्रि-मण्डल के बदलने पर उसे भी इस्तीफा देना पडता है। लेकिन गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के अन्तर्गत प्रान्तीय एडवोकेट-जनरलो की नियुक्ति एकमात्र मिनिस्टरो पर नहीं छोडी गई है। दूसरे शब्दो में, एक्ट की यह मंशा दिखाई देती है कि एडवोकेट-जनरल मत्रि-मण्डल का ही एक अंग न समझा जाय बल्कि मत्रि-मण्डल के बदलने पर भी एडवोकेट-जनरल वही बना रहे। लेकिन यह तो हुई ठेठ कानूनी स्थिति। व्यवहार में यह मंशा कहाँतक पूरी होसकेगी, यह कहना कठिन है।

: ५ :

प्रान्तीय कर्मचारी

सरकारी कर्मचारियों के आम संरक्षण

प्रान्तीय सरकार के मातहत जितने सरकारी अफसर या कर्मचारी काम करते हैं, उनको आमतौर पर तीन बडी-बडी श्रेणियो में विभाजित किया जाता है, जो (१) आल-इण्डिया सर्विस, (२) प्राविंशल सर्विस और (३) सर्वोर्डिनेट सर्विस के नाम से जानी जाती है। लेकिन इन तीनो श्रेणियो के अफसरो को एक्ट में जो अधिकार दिये गये है, उनका यहाँ वर्णन करने से पहले उन आम अधिकारो और सरक्षणो को जान लेना आवश्यक हैं जो हरेक सरकारी कर्मचारी को एक्ट द्वारा मिले है।

सरकारी कर्मचारियो का सबसे पहला और मुख्य सरक्षण, जिसके बारे में पहले भी उल्लेख किया जा चुका है, यह है कि सरकारी कर्मचारियो के अधिकारो और हितो की रक्षा करने की ख़ास जिम्मेदारी गवर्नर पर रक्खी गई है। जब कभी सरकारी कर्मचारियो के अधिकारो या हितो की रक्षा का सवाल उठेगा, तो गवर्नर को अपने मिनिस्टरो की सलाह के विरुद्ध भी काम करने का अधिकार होगा।

एक्ट की धारा २४० उपधारा १ के अनुसार किसी भी सरकारी कर्मचारी को कानूनी तौर पर नौकरी से जब चाहे तब बिना कोई वजह बताये अलग किया जा सकता है। इस नियम का एकमात्र अभिप्राय यह है कि यदि कोई सरकारी कर्मचारी बिना कसूर भी नौकरी से अलग कर दिया जाय तो वह अदालतो के जरिये कोई हर्जाना वसूल नहीं कर

सकता। लेकिन इसका यह अभिप्राय हर्गिज नही है कि प्रान्तीय सरकार

बर्खास्तगी व अलहदगी

को अपने मातहत सब कर्मचारियो को नौकरी से हटाने या बर्खास्त करने का अधिकार प्राप्त होगा। एक्ट की धारा २४० उपधारा २ के अनुसार सरकारी कर्मचारियो को नौकरी से हटाने या बर्खास्त करने का अधिकार या तो नियुक्त करनेवाले अधिकारी को है या उस अधिकारी को जो उस नियुक्ति करनेवाले अधिकारी से भी बड़ा हो। इस नियम के फलस्वरूप इण्डियन सिविल सर्विस, इण्डियन पुलिस, इण्डियन मेडिकल सर्विस आदि आल-इण्डिया सर्विसो के सदस्यो को नौकरी से हटाने या बर्खास्त करने का एकमात्र अधिकार भारत-मंत्री को होगा; क्योंकि इन सर्विसो के सदस्यो की नियुक्ति भारत-मन्त्री द्वारा ही होती है। उदाहरणार्थ, यदि प्रान्तीय सरकार किसी ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट को किसी अपराध के कारण बर्खास्त करना चाहे तो वह ऐसा न कर सकेगी; क्योंकि ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य होने के कारण भारत-मंत्री के अलावा और किसी भारतीय अधिकारी द्वारा बर्खास्त नहीं किये जा सकते।

धारा २४० की उपधारा ३ के अनुसार किसी भी सरकारी कर्मचारी को तबतक बर्खास्त नही किया जा सकता और किसी भी सरकारी

सफाई देने का अधिकार

कर्मचारी का दर्जा तबतक नही घटाया जा सकता जबतक कि उसे अपनी सफाई पेश करने का पूरा-पूरा मौका न दिया जाय। इस नियम के दो अपवाद है। पहला तो यह है कि यदि किसी कर्मचारी को किसी फौजदारी मुकदमे में सजा होजाय तो उसे सफाई पेश करने का मौका दिये बिना ही बर्खास्त किया जा सकेगा। दूसरा अपवाद यह है कि यदि बर्खास्त करनेवाला अधिकारी यह समझे कि इस वक्त इस कर्मचारी को सफाई

देने के लिए मौका देना ठीक नहीं है तो वह अधिकारी उस कर्मचारी को मौका दिये बिना ही बर्खास्त कर सकेगा। लेकिन इस हालत में उस अधिकारी को उन वजूहात को प्रकाशित करना पड़ेगा जिनकी वजह से उस कर्मचारी को सफाई पेश करने का मौका नहीं दिया गया।

पिछले अपराधों की माफी

एक्ट की धारा २७० के अनुसार किसी भी सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध १ अप्रैल १९३७ से पहले किये गये किसी भी अपराध के लिए कोई भी फौजदारी या दीवानी मुकदमा तबतक नहीं चलाया जासकता जबतक कि गवर्नर 'अपनी मर्जी' से उसकी स्वीकृति न देदे। और अगर गवर्नर मुकदमा चलाने की स्वीकृति दे भी दे, तो कोई भी सरकारी कर्मचारी अदालत द्वारा तबतक अपराधी नहीं समझा जायगा जबतक कि यह साबित न होजाय कि इस कर्मचारी ने वह अपराध बुरी नीयत से या जान-बूझकर किया था। अगर ऐसे किसी मुकदमे में उस कर्मचारी के हक में फैसला होजाय और वह अपने मुकदमे का हर्जाना उस व्यक्ति से न वसूल कर सके जिसने उसपर मुकदमा चलाया था, तो वह सरकारी खज़ाने तक से अपना हर्जाना वसूल करने का हकदार होगा।

एक्ट की धारा २६१ उपधारा ३ के अनुसार, यदि किसी सरकारी कर्मचारी को किसी दीवानी मुकदमे में, जो उसपर सरकारी काम की बदौलत चलाया गया हो, हर्जाना देना पड़े, तो गवर्नर 'अपने विवेक' से उसे वह हर्जाना सरकारी खज़ाने से दिला सकता है।

धारा २७२ के अनुसार उन सरकारी कर्मचारियों की पेंशनों पर जो हिन्दुस्तान से बाहर के रहनेवाले हों, भारत की धारा-सभायें किसी प्रकार का कोई टैक्स नहीं लगा सकतीं।

अब हम भिन्न-भिन्न श्रेणियों के अफसरों के अधिकारों का वर्णन करेंगे।

आल-इण्डिया सर्विस

प्रान्तीय कर्मचारियो में सबसे पहला नम्बर उन अफसरों का है, जो आल-इण्डिया सर्विस के अफसर कहलाते है। ये अफसर ज्यादातर प्रान्तो में ही काम करते है, लेकिन चूंकि इनकी भर्ती सारे हिन्दुस्तान के लिए भारत-मंत्री द्वारा होती है इसलिए आल-इण्डिया सर्विस वाले कहलाते है।

काले-गोरो की संख्या

ज्वाइण्ट प्रार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट से पता चलता है कि १ जनवरी १९३३ को भारत में आल-इण्डिया सर्विसे और उनमें यूरोपियन तथा भारतीय अफसरों की संख्याये निम्न प्रकार थी[1] :—

सर्विस	यूरोपियन	भारतीय	कुल
इण्डियन सिविल सर्विस	८१९	४७८	१२९७
इण्डियन पुलिस	५०५	१५२	६६५[2]
इण्डियन फारेस्ट सर्विस	२०३	९६	२९९
इण्डियन सर्विस ऑफ इजीनियर्स	३०४	२९२	५९६
इण्डियन मेडिकल सर्विस (सिविल)	२००	९८	२९८
इण्डियन एज्युकेशनल सर्विस	९६	७९	१७५
इण्डियन एग्रीकल्चरल सर्विस	४६	३०	७६
इण्डियन वेटीरिनरी सर्विस	२०	२	२२
कुल योग	२१९३	१२२७	३४२८

प्रान्तीय शासन-क्षेत्र में जितने बडे-बडे ओहदे है उनपर इन्ही आल-इण्डिया सर्विसों के अफसर नियुक्त किये जाते है। उदाहरणार्थ, ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट, जिला मजिस्ट्रेट, कलक्टर, ज़िला जज, दौरा जज, कमिश्नर,

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ १४७, पैरा २७७।

२ इनमे ८ अफसर ऐसे थे जिनको न कालो मे और न गोरो मे ही शुमार किया गया था।

रेवेन्यू बोर्ड के सदस्य आदि की नियुक्ति इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यो में से ही होती है। और चूँकि इन सर्विसो की भर्ती भारत-मत्री द्वारा होती है, इस नियम का स्वाभाविक परिणाम यही होता है कि जितने भी वडे-वडे ओहदे हैं वे आमतौर पर अग्रेजो के ही कब्जे में चले जाते हैं।

भर्त्ती का अधिकार

सन् १९२४ में ली-कमीशन की सिफारिशो के फलस्वरूप भारत-मत्री ने पिछली तीन सर्विसो की भर्ती बन्द करके इन महकमो के अफसरो की भर्ती का अधिकार प्रान्तीय सरकारो को देदिया था। अत. १ अप्रैल १९३७ से प्रान्तीय स्वराज्य जारी होजाने का स्वाभाविक परिणाम यही होना चाहिए था कि शेष सब आल-इण्डिया सर्विसो के अफसरो की भर्ती का अधिकार भी प्रान्तीय सरकारो को मिल जाता। लेकिन एक्ट की धारा २४४ उपधारा १ के अन्तर्गत प्रान्तीय स्वराज्य जारी होजाने के बाद भी भारत-मत्री ने इण्डियन सिविल सर्विस, इण्डियन पुलिस और इण्डियन मेडिकल सर्विस (सिविल) के अफसरो की भर्ती करने का अधिकार अपने हाथ में ही रक्खा है। ओर भारत-मत्री इन सर्विसो के अफसरो की केवल भर्ती ही नही करता रहेगा, वलिक धारा २४४ उपधारा ३ के अन्तर्गत उसे यह निश्चय करने का भी अधिकार होगा कि हरसाल किस प्रान्त को किस सर्विस के कितने-कितने अफसर लेने पडेंगे। यदि कोई प्रान्त खर्चे में कमी करने की गरज से या अपने महकमो का पुनस्सगठन करने के खयाल से ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट, जिला मजिस्ट्रेट, सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस आदि की जगहो में कमी करना चाहेगा तो उसे ऐसा करने का अधिकार न होगा। उदाहरणार्थ, यदि सयुक्तप्रान्त की सरकार प्रान्त में ४८ जिलो के बजाय केवल ४० या ४४ ही जिले रखना चाहे तो वह ऐसा न कर

सकेंगी; क्योंकि उसे ४८ जिला मजिस्ट्रेट और ४८ पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट तो लाज़िमी तौर पर रखने ही पड़ेंगे।

आबपाशी यानी सिंचाई-विभाग के इंजीनियरों की भर्ती प्रान्तीय स्वराज्य जारी होजाने पर भारत-मन्त्री ने खुद करना बन्द कर दिया है। लेकिन धारा २४५ के अन्तर्गत उसने यह अधिकार अपने हाथ में सुरक्षित रक्खा है कि वह जब चाहे तब इन अफसरों की भर्ती पुनः शुरू करदे।

जिन आल-इण्डिया सर्विसों के अफसरों की भर्ती का अधिकार भारत-मन्त्री ने अपने हाथ में रक्खा है, उनके लिए धारा २४६ के अन्तर्गत जगहें

सुरक्षित जगहें

सुरक्षित रखने का अधिकार भी भारत-मंत्री को दिया गया है। इस अधिकार के प्रयोग में भारत-मंत्री जिन-जिन जगहों को किसी सर्विस के लिए सुरक्षित घोषित करदे, उन जगहों पर केवल उसी सर्विस के अफसर नियुक्त किये जा सकेंगे। इन जगहों को हम 'सुरक्षित जगहों' के नाम से पुकारेंगे। ऐसी कोई भी सुरक्षित जगह भारत-मन्त्री की पूर्व-अनुमति के बिना तीन महीने से ज्यादा ख़ाली नहीं रक्खी जायगी और हर सुरक्षित जगह के लिए एक अफसर अलग नियुक्त करना ज़रूरी होगा। ऐसा भी नहीं किया जासकेगा कि दो सुरक्षित जगहों को मिलाकर उस जगह पर आल-इण्डिया सर्विस का एक ही अफ़सर नियुक्त कर दिया जाय।

नीचे हम उन जगहों की एक सूची देते हैं जिन्हें संयुक्तप्रान्त में भारत-मन्त्री ने इण्डियन सिविल सर्विस के अफसरों के लिए सुरक्षित रक्खा है:—

बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के सदस्य	...	२
बोर्ड ऑफ रेवेन्यू का सेक्रेटरी	...	१
प्रान्तीय सरकार के सेक्रेटरी और चीफ सेक्रेटरी	...	६
कमिश्नर	...	९

अफीम-अफसर	...	१
रजिस्ट्रार कोआपरेटिव सोसायटीज़	..	१
डिप्टी-रजिस्ट्रार कोआपरेटिव सोसायटीज़	.	१
डाइरेक्टर लैण्ड रेकर्ड्स	..	१
लीगल रिमेम्ब्रेन्सर	..	१
एक्साइज़ कमिश्नर	..	१
अफसर बन्दोबस्त और उसके असिस्टेण्ट		६
डिप्टी कमिश्नर और जिला मजिस्ट्रेट		४८
रजिस्ट्रार हाईकोर्ट	.	१
जिला व सेशन जज	.	३१
ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट व असिस्टेण्ट कमिश्नर	..	३२
सेशन्स व सबोर्डिनेट जज		४
	कुल	१४६[1]

१ इण्डियन पुलिस के लिए सयुक्तप्रान्त मे जो जगहे सुरक्षित रहेगी, वे भी जानने लायक है। उनकी सख्याये निम्न प्रकार है —

इन्सपेक्टर-जनरल पुलिस	.	१
डिप्टी इन्सपेक्टर-जनरल पुलिस		५
असिस्टेण्ट इन्सपेक्टर-जनरल रेलवे पुलिस		१
सी० आई० डी० पुलिस के डिप्टी इन्सपेक्टर-जनरल के असिस्टेण्ट		३
इन्सपेक्टर-जनरल पुलिस का असिस्टेण्ट	.	१
सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस	..	४६
सुपरिण्टेण्डेण्ट गवर्मेण्ट रेलवे पुलिस	.	३
प्रिंसिपल पुलिस ट्रेनिंग स्कूल	..	१
असिस्टेण्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस	.	१८
	कुल	७९

इस प्रकार प्रान्त के जितने भी मुख्य-मुख्य विभाग है उनके अध्यक्ष और जिलो के शासन के अध्यक्ष आई० सी० एस० यानी इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य ही रहेगे और शासन की सारी मशीन आई० सी० एस० अफसरो पर निर्भर रहेगी। इंग्लैण्ड मे, जैसा कि हम पहले भी लिख चुके है, स्थिति इसके बिलकुल विपरीत है। वहाँ हरेक बडे महकमे के अध्यक्ष या तो केबिनेट के ही सदस्य होते है, या केबिनेट का समर्थन करनेवाले पार्लमेण्ट के अन्य सदस्य। और चूँकि ये सब व्यक्ति पार्लमेण्ट के सदस्य होने के नाते जनता के ही निर्वाचित प्रतिनिधि होते है, सारे शासन पर वे अपना असर डाल सकते है।

नियुक्ति व तबादले

धारा २४६ उपधारा २ के अनुसार आल-इण्डिया सर्विस के अफसरो के तबादले व उनको भिन्न-भिन्न पदो पर नियुक्त करने का अधिकार गवर्नर को दिया गया है और इस अधिकार के प्रयोग मे उसे 'अपने विवेक' से काम लेने का अधिकार होगा।

वेतन और भत्ते

धारा २४७ की उपधारा १ के अनुसार इन अफसरो के वेतन, भत्ते व पेंशने निश्चित करने और छुट्टी आदि विविध विषयो के बारे मे नियम बनाने का अधिकार भारत-मंत्री को ही दिया गया है। अर्थात् किस अफसर को कितना वेतन मिलेगा, कितनी छुट्टियाँ मिलेगी, रिटायर होने पर कितनी पेंशन मिलेगी आदि सब महत्वपूर्ण विषय प्रान्तीय सरकारो के हाथ मे न होकर भारत-मंत्री के हाथ में रहेगे। प्रान्तीय सरकारो को इन सर्विसो के बारे में केवल उन मामलो में नियम बनाने का अधिकार होगा, जिन मामलों मे कि भारत-मंत्री नियम बनाने का अधिकार उनपर छोड़ दे। लेकिन चूँकि भारत-मंत्री के नियमों में आमतौर पर कोई महत्वपूर्ण बात नहीं

छोडी जाती, इस बात का सहज में ही अनुमान लगाया जासकता है कि प्रान्तीय सरकारो को इन सर्विसो की नौकरी से सम्बन्ध रखनेवाले नियम बनाने के अधिकार लगभग शून्य के बराबर होगे।

यही नहीं बल्कि इसी उपधारा के अन्तर्गत, भारत-मंत्री भी ऐसा कोई परिवर्त्तन इन सर्विसो के नियमो में नही कर सकेगा, जिसके द्वारा पुराने अफसरो के अधिकारो को छीना जा सके। उदाहरणार्थ, यदि किसी समय भारत-मंत्री इन अफसरो के वेतनो को घटाना चाहे तो वह पुराने अफसरो के लिए ऐसा न कर सकेगा।

धारा २४७ की उपधारा २ के अनुसार इन अफसरो को तरक्की देने, ऊँची जगह देने, तीन महीने से ज्यादा की छुट्टी की दरख्वास्त पर हुक्म सुनाने और मोअत्तिल करने के लिए गवर्नर को 'अपने विवेक' से काम लेने के लिए कहा गया है। अर्थात् इन मामलो में मिनिस्टरो का निर्णय अन्तिम निर्णय नहीं होगा।

तरक्की ओर छुट्टी

धारा २४७ की उपधारा ३ के अन्तर्गत इन अफसरो के साथ यह रिआयत की गई है कि यदि गवर्नर किसी अफसर को मोअत्तिल करने की इजाजत देदे तो भी वह तबतक अपनी पूरी तनख्वाह ही लेता रहेगा जबतक कि गवर्नर खुद 'अपने विवेक' से यह हुक्म न दे कि मोअत्तली की हालत में अमुक अफसर को केवल इतनी ही तनख्वाह दी जाय। और धारा २४७ की उपधारा ४ के अनुसार इन अफसरो के वेतन व भत्तो के लिए प्रान्तीय धारा-सभा की मजूरी लेने की भी जरूरत नही होगी।

धारा २४७ की उपधारा ५ के अन्तर्गत इन अफसरो को रिटायर होने पर अपनी पेंशने सीधे केन्द्रीय सरकार से लेलेने का अधिकार होगा।

बाद मे यह केन्द्रीय सरकार का काम होगा कि वह उस पेंशन को उन प्रान्तीय सरकार या सरकारो से वसूल करे जिनके कि मातहत उस अफसर ने काम किया हो।

पेंशने

प्रान्तीय अफसरो की पेंशनो का भार केन्द्रीय सरकार पर डालने की वजह यह है कि अक्सर इन अफसरो को कई प्रान्तीय सरकारो के और केन्द्रीय सरकार तक के मातहत काम करने का मौका पडता है। इन अफसरो को इस झंझट से बचाने के लिए कि वे किस प्रान्त से अपनी पेंशनें वसूल करे, यह नियम बना दिया गया है कि पेंशनो के मामले में उनका एकमात्र केन्द्रीय सरकार से ही सरोकार रहेगा। आमतौर पर यही नियम हाईकोर्ट के जजो की पेंशनो के बारे मे रक्खा गया है।

ब्रिटिश सरकार को इन अफसरो की पेंशनो के बारे मे कितनी अधिक फिक्र है, इसका अनुमान भारत-मंत्री लार्ड जेटलैण्ड के उस भाषण से लग जाता है जो उन्होने ४ जुलाई १९३५ को लार्ड-सभा मे इण्डिया-बिल की बहस के दौरान मे दिया था। लार्ड जेटलैण्ड ने कहा था कि "वाइसराय की खास जिम्मेदारियो मे एक खास जिम्मेदारी सरकारी कर्मचारियो और उनके आश्रितो के अधिकारो एव हितो की रक्षा करने की है, और इस खास जिम्मेदारी को पूरा करने मे वह भारत मन्त्री के मातहत होगा। यदि भारतीय धारा-सभाओ और मिनिस्टरो की नीति के फलस्वरूप पेंशनो की अदायगी के लिए भारतीय खजाने मे रुपया न भी रहे, तो भारत-मन्त्री को वाइसराय को यह आदेश देने का अधिकार होगा कि पेंशनो की अदायगी के लिए वह विलायत मे कर्जा तक लेले।"

धारा २४७ की उपधारा ६ के अन्तर्गत यह नियम है कि यदि प्रान्तीय सरकार किसी अफसर को किसी वजह से पूरी पेंशन की जगह

कम पेंशन देना चाहे, तो वह भारत-मंत्री की पूर्व-अनुमति के बगैर ऐसा नहीं कर सकेगी।

धारा २४७ की उपधारा ७ के अनुसार भारत-मंत्री को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह समझे कि इन अफसरो के लिए बनाये गये नियमो के अनुसार चलना किसी खास मामले में ठीक नही है तो वह सारे नियमो को ताक पर रखकर जैसा उचित समझे कर सकेगा।

नियन्त्रण ओर अनुशासन आदि के मामलो में भी इन अफसरो की स्थिति कुछ कम सुविधाजनक नही है। यदि किसी अफसर के साथ सयोगवश उसकी नौकरी के मामले में कोई अन्याय भी होजाय, या यदि अन्याय न भी हो लेकिन वह अफसर समझे कि उसके साथ अन्याय हुआ है, तो धारा २४८ की उपधारा १ के अन्तर्गत उसे अपना मामला ठेठ गवर्नर तक लेजाने का हक होगा। और गवर्नर को यह आदेश दिया गया है कि वह उस मामले की तहकीकात कराये और 'अपने विवेक' से उस मामले का फैसला करे।

नियत्रण और अनुशासन की ढिलाई

धारा २४८ की उपधारा २ के अन्तर्गत इन अफसरो को किसी प्रकार की भी सजा, यहाँतक कि ताकीद भी, तबतक नही की जा सकेगी जबतक कि गवर्नर खुद 'अपने विवेक' से ऐसा फैसला न करे। और यदि गवर्नर किसी अफसर को सजा देने या उसे ताकीद करने का हुक्म दे भी दे, या उसकी नौकरी के नियमो की ऐसी व्याख्या करदे जो उस अफसर को पसन्द न हो, तो उसे अपना मामला ठेठ भारत-मन्त्री तक लेजाने का अधिकार होगा।

सबसे अन्त में धारा २४९ के अन्तर्गत भारत-मत्री को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह समझे कि नया विधान जारी होने के कारण

आल-इण्डिया सर्विस के किसी अफसर को किसी प्रकार का नुकसान पहुँचा है तो वह उस अफसर को या उसके किसी उत्तराधिकारी को प्रान्त के खजाने से जितना उचित समझे उतना मुआवजा दिलादे। इस मुआवजे के लिए उसे प्रान्तीय धारा-सभा की मंजूरी लेने की भी जरूरत नही होगी।

मुआवजा

अभीतक आल-इण्डिया सर्विस के उन अफसरो के अधिकारो का वर्णन किया गया है, जिनकी भर्ती भविष्य में भारत-मन्त्री के हाथ में रहेगी। लेकिन एक्ट की धारा २५० के अन्तर्गत ये सब अधिकर समान रूप से उन पुराने अफसरों को भी प्रदान किये गये हैं, जिनकी भर्त्ती भारत-मत्री ने की थी और जो नये विधान के बाद भी प्रान्तीय सरकार की नौकरी में रहेगे। करीब-करीब यही स्थिति प्रान्तीय सरकार के मातहत काम करनेवाले उन अफसरो की रहेगी जो फौज में से लिये जायँगे या फौज में से लिये गये होगे।

पुराने अफसरो के अधिकार

प्राविशल सर्विस

आल-इण्डिया सर्विसो के अफसरो के बाद प्रान्तीय अफसरो में दूसरा नम्बर उन अफसरो का है जो प्राविशल सर्विस के अफ़सर कहलाते है। आल-इण्डिया सर्विस की भॉति प्राविशल सर्विस भी कई शाखाओ में विभाजित है, जिनके अलग-अलग नाम है। आमतौर पर आल-इण्डिया सर्विसो की हरेक शाखा से मिलती हुई प्राविशल सर्विसो की भी शाखायें होती है। उदाहरणार्थ, इण्डियन सिविल सर्विस के मुकाबले में हरेक प्रान्त में प्राविशल सिविल सर्विस होती है। इण्डियन पुलिस सर्विस के मुकाबले में प्रत्येक प्रान्त में प्राविशल पुलिस सर्विस होती है। इसी प्रकार और सर्विसो के बारे मे समझना चाहिए। इण्डियन सिविल सर्विस के नये

अफसरो को पहले अक्सर असिस्टेण्ट कलक्टर और ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेटो के पदो पर नियुक्त किया जाता है, लेकिन यदि इन्ही पदो पर प्राविशल सर्विस के अफसर नियुक्त किये जायँ तो उन्हे डिप्टी कलक्टर और डिप्टी मजिस्ट्रेट कहा जाता है। कुछ प्रान्तो में इण्डियन सिविल सर्विस के नये अफसरो को जो जगह पहले दी जाती है वह असिस्टेण्ट कमिश्नर की होती है, लेकिन यदि प्राविशल सर्विस के अफसर उसी जगह पर नियुक्त किये जायँ तो उन्हे एक्स्ट्रा-असिस्टेण्ट कमिश्नर कहा जाता है। इसी प्रकार प्राविशल पुलिस सर्विस के अफसरो को आमतौर पर डिप्टी सुपरिन्टेण्डेण्ट पुलिस की जगह पर नियुक्त किया जाता है, लेकिन यदि उसी जगह पर इण्डियन पुलिस का अफसर नियुक्त हो तो वह असिस्टेण्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट ऑफ पुलिस कहलाता है।[1]

प्राविशल सर्विसो के अफसरो को भर्ती करने, उनके वेतन व भत्ते तय करने और उनकी नौकरी वगैरा के मामलो के लिए नियम बनाने का पूरा अधिकार प्रान्तीय सरकारो को दिया गया है। उन आम सरक्षणो के अलावा, जो हरेक सरकारी कर्मचारी के लिए एक्ट में रक्खे गये है, प्राविशल सर्विस के अफसरो के लिए केवल यह सरक्षण विशेषरूप से रक्खा गया है कि इनकी नौकरी वगैरा के जो नियम बनाये जायँगे उनमें एक नियम इस आशय का जरूर होगा कि नौकरी के मामलो में इनके खिलाफ जो हुक्म

विशेष सरक्षण

१ जिन-जिन आल-इण्डिया सर्विसो की भर्ती भारत-मन्त्री द्वारा बन्द होचुकी है, उनकी जगह प्रान्तीय सरकारो द्वारा जो नई सर्विसे कायम की गई है उनको आमतौर पर 'पहले श्रेणी की प्राविशल सर्विस' का नाम दिया गया है और उनके साथ की पुरानी प्राविशल सर्विसो को 'दूसरी श्रेणी की प्राविशल सर्विस' का नाम दिया गया है।

जारी हो उनके खिलाफ़ कम-से-कम एक अपील उच्च अधिकारियो तक करने का इन्हें अधिकार होगा। लेकिन प्रान्तीय सरकार के हुक्म के ख़िलाफ कोई अपील ये किसी और उच्च अधिकारी के पास न लेजा सकेंगे।

यह तो हुई प्राविंशल सर्विस के उन अफसरो के अधिकारो की बात जो नये भर्त्ती होगे। लेकिन प्राविशल सर्विसो के पुराने अफसरो की स्थिति भी लगभग वैसी ही मजबूत रक्खी गई है जैसी कि आल-इण्डिया सर्विस के अफसरो की।

पुराने अफसर

धारा २४१ उपधारा ३ के अनुसार इन अफसरो की नौकरी के मामलो में कोई ऐसा परिवर्त्तन, जो इनके खिलाफ जाता हो, तबतक नही हो सकेगा जबतक कि वह परिवर्त्तन या तो भारत-मत्री की अनुमति से या ऐसे किसी अधिकारी द्वारा न किया गया हो जिसे ८ मार्च १९२६ को ऐसा परिवर्त्तन करने का अधिकार था। ८ मार्च १९२६ की तारीख रखने की यह गरज है कि यद्यपि इस तारीख़ तक प्रान्तीय सरकारो को प्राविशल सर्विस के अफसरो की भर्त्ती वग़ैरा करने का अधिकार था, लेकिन उनकी नौकरी वगैरा के लिए नियम ज्यादातर भारत-मत्री द्वारा ही बनाये जाते थे। ९ मार्च १९२६ को प्रान्तीय सरकारो को पहली बार इन अफसरो की नौकरी के नियम बनाने का अधिकार मिला था। सक्षेप में इसका यह मतलब हुआ कि ८ मार्च १९२६ तक जो अफसर प्राविशल सर्विस में भर्त्ती हो चुके थे उनका सरक्षक भी भारत-मत्री ही रहेगा।

इसके अलावा धारा २५८ उपधारा १ के अनुसार प्रान्तीय स्वराज्य से पहले के अफसरों की कोई भी जगह तबतक कमी में नहीं लाई जा सकती जबतक कि स्वय गवर्नर 'अपने विवेक' से उनकी मज़ूरी न देदे।

हाँ, ये पुराने अफसर जैसे-जैसे कम होते जायँगे वैसे-वैसे इनकी जगहो में कमी की जा सकेगी।

धारा २५८ की उपधारा २ के अनुसार इन अफसरो के वेतन, भत्ते और पेंशन आदि के नियमो में कोई परिवर्त्तन तबतक नही होसकेगा जबतक कि गवर्नर 'अपने विवेक' से उसकी मजूरी न देदे। इसी उपधारा के अनुसार इनके आवेदन-पत्रो पर कोई खिलाफ हुक्म भी तबतक नही दिया जायगा जबतक कि गवर्नर 'अपने विवेक' से उसे जारी न करे।

यदि प्राविशल सर्विस के इन अफसरो में कुछ अफसर ऐसे हो जिनको नियुक्ति भारत-मत्री ने की हो, तो धारा २५८ उपधारा ३ के अनुसार उनकी जगहें तबतक नही तोडी जा सकती और उनके वेतन, भत्तो व पेंशन के नियमो में तबतक परिवर्त्तन नही किया जा सकता जबतक कि भारत-मत्री की मजूरी न लेली जाय। ऐसे हरेक अफसर को भारत-मत्री तक अपील करने का भी अधिकार होगा।

सबोर्डिनेट सर्विस

प्राविशल सर्विस के अफसरो के बाद प्रान्तीय कर्मचारियो में सबोर्डिनेट या मातहत सर्विस के कर्मचारियो का नम्बर आता है। आल-इण्डिया सर्विस और प्राविशल सर्विस के अलावा जितने भी सरकारी कर्मचारी है, चाहे वे दफ्तरी या चपरासी ही क्यो न हो, वे इसी श्रेणी में शामिल किये जाते है। इनकी भर्ती का अधिकार प्रान्तीय सरकारो के हाथ में रहेगा और इनकी नौकरी वगैरा के आमतौर पर सब नियम भी प्रान्तीय सरकार ही बनायगी। लेकिन इस नियम में एक अपवाद है और वह यह है कि डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस के दर्जे से नीचे के जितने भी पुलिस अफसर व कान्सटेबल होगे उनकी भर्ती और नौकरी के नियमादि में परिवर्तन प्रान्तीय धारा-सभा के एक्ट के जरिये ही होसकेगा और

तत्सम्बन्धी बिलों पर विचार करने के लिए गवर्नर से पूर्व-अनुमति लेनी होगी।

इन आम संरक्षणों के अलावा जो प्रान्त के हरेक सरकारी कर्मचारी के हक में रक्खे गये हैं, सबोर्डिनेट सर्विस के कर्मचारियों के लिए भी यह एक संरक्षण विशेष रूप से रक्खा गया है कि हरेक कर्मचारी को अपनी नौकरी के मामलों में अपने अफसर के हुक्म के खिलाफ कम-से-कम एक बड़े अफसर तक अपील करने का अधिकार होगा। इसी तरह सबोर्डिनेट सर्विस के पुराने कर्मचारियों के लिए भी धारा २४१ उपधारा ३ में यह नियम रक्खा गया है कि ८ मार्च १९२६ से पहले के कर्मचारियों के नौकरी-सम्बन्धी नियमों में परिवर्तन या तो भारत-मन्त्री की अनुमति से किया जासकेगा या उन अधिकारियों द्वारा जिनको ८ मार्च १९२६ तक ऐसा करने का अधिकार था। इस सम्बन्ध में यह जानना मनोरंजक होगा कि इस तारीख तक सबोर्डिनेट सर्विस के कर्मचारियों की पेंशनों के बारे में भी नियम भारत-मन्त्री द्वारा ही बनाये जाते थे। अतः प्रान्तीय सरकार को इन पुराने कर्मचारियों की पेंशनों के नियमों में भारत-मन्त्री की अनुमति बिना परिवर्त्तन करने का कोई अधिकार न होगा। उदाहरणार्थ, यदि प्रान्तीय मिनिस्टर ८ मार्च १९२६ से पहले भर्ती हुए चपरासियों की पेंशनों के नियमों में तब्दीली करना चाहे तो उन्हें इसके लिए भारत-मन्त्री से अनुमति लेनी होगी।

पब्लिक सर्विस कमीशन

एक्ट की धारा २६४ द्वारा प्रत्येक प्रान्त में एक पब्लिक सर्विस कमीशन की स्थापना की गई है, जिसका काम आल-इण्डिया सर्विस के अफसरों के अलावा प्रान्तीय सरकार के मातहत काम करनेवाले और सब कर्मचारियों की भर्ती करना होगा। इसके अलावा प्रान्तीय कर्मचा-

रियो की नौकरी मे सम्बन्ध रखनेवाले कई मामलो में भी प्रान्तीय सरकार को प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन से सलाह लेना लाज़िमी होगा। एक्ट की धारा २६६ उपधारा ३ के अनुसार प्रान्तीय सरकार को निम्नलिखित सब मामलो में पब्लिक सर्विस कमीशन से सलाह लेनी पडेगी —

(अ) भिन्न-भिन्न सर्विसो के अफसरो और कर्मचारियो की भर्ती का तरीका,

(ब) सरकारी अफसरो व कर्मचारियो की नियुक्ति और उनकी पद-वृद्धि के सिद्धान्त, और

(स) अनुशासन और नियन्त्रण सम्बन्धी सब मामले।

एक्ट की धारा २६६ उपधारा ४ के अनुसार डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस के दर्जे से नीचे के सब पुलिस अफसरो व कान्सटेबलो के बारे में प्रान्तीय सरकार को पब्लिक सर्विस कमीशन से उपर्युक्त मामलो में सलाह लेना लाज़िमी न होगा। और उपधारा ३ के अनुसार गवर्नर को भी यह अधिकार दिया गया है कि वह नियम बनाकर प्रान्त के और खास-खास अफसरो और कर्मचारियो के सम्बन्ध में पब्लिक सर्विस कमीशन के दखल का अन्त करदे। इस प्रकार नियम बनाने में गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से काम करेगा।

प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन के सदस्यो की सख्या निश्चित करने, उसके चेयरमैन व सदस्यो की नियुक्ति करने, उनके वेतन-भत्ते निश्चित करने और उनकी नौकरी वगैरा के नियम बनाने का अधिकार गवर्नर को होगा और इन सब बातो में वह 'अपनी मर्ज़ी' से काम कर सकेगा। एक्ट की धारा २६८ के अनुसार, प्रान्तीय धारा-सभा से पब्लिक सर्विस कमीशन के खर्चे की मजूरी लेना भी जरूरी न होगा।

एक्ट की धारा २६५ के अनुसार प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन के कम-से-कम आधे सदस्य ऐसे होने चाहिएँ जो १० साल तक भारत में सरकारी मुलाज़िम रह चुके हो।

यह ध्यान रहे कि प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन मिनिस्टरो के काम में लाभदायक तभी सिद्ध होसकते है जब कि उनके सदस्यो की नियुक्ति वगैरा मिनिस्टरो के ही हाथ मे रहे। ऐसा न होने पर यह समझा जाय कि प्रान्तो के लिए पब्लिक सर्विस कमीशनो की नियुक्ति का उद्देश्य बहुत कुछ यही है कि प्रान्त के कर्मचारियो पर धारा-सभा और मन्त्रि-मण्डल का प्रभाव ज्यादा न बढ़ सके तो उसमें आश्चर्य न होगा।

: ६ :

प्रान्तीय धारा-सभाओं का संगठन

धारा-सभाओं के भवन

एक्ट की धारा ६० के अन्तर्गत गवर्नर वाले प्रत्येक प्रान्त में धारा-सभा की स्थापना कीगई है, जिसके किसी प्रान्त में एक और किसीमें दो भवन होगे। इन्हे क्रमशः लेजिस्लेटिव असेम्बली और लेजिस्लेटिव कासिल नाम दिया गया है। इनमें लेजिस्लेटिव असेम्बली गवर्नर वाले हरेक प्रान्त में रक्खी गई है, और उडीसा की असेम्बली के सिवा ओर सब प्रान्तो की असेम्बलियो के सदस्य केवल निर्वाचन द्वारा ही नियुक्त किये जाया करेगे। लेकिन मद्रास, बम्बई, बगाल, सयुक्तप्रान्त, बिहार और आसाम इन छ प्रान्तो में लेजिस्लेटिव असेम्बलियो के अलावा लेजिस्लेटिव कौंसिले भी रहेगी। धारा-सभा के इस दूसरे भवन यानी लेजिस्लेटिव कौंसिल के, जिसे आमतौर पर 'द्वितीय चेम्बर' या 'अपर चेम्बर' के नाम से भी पुकारा जाता है, अधिकाश सदस्य निर्वाचित होगे, लेकिन कुछ गवर्नर द्वारा नामजद भी हुआ करेगे।

यह ध्यान रहे कि भारत के प्रान्तो में द्वितीय चेम्बरो का श्रीगणेश नये विधान के 'प्रान्तीय स्वराज्य' के साथ ही होता है। इससे पहले, मॉण्टफोर्ड-युग में भी, भारत के किसी प्रान्त में द्वितीय चेम्बरे नही थी।

यह भी याद रखने की बात है कि भारतीय लोकमत प्रान्तो में द्वितीय चेम्बरो की स्थापना के हमेशा विरुद्ध रहा है। यही नही बल्कि साइमन-कमीशन और भारत-सरकार तक ने इनकी स्थापना की कभी

एकमत से सिफ़ारिश नही की; बल्कि मॉण्टफोर्ड-युग की कई प्रान्तीय सरकारो ने तो इनकी स्थापना का घोर विरोध तक किया था। उदाहरणार्थ, मद्रास, बम्बई और आसाम इन तीनों प्रान्तो की सरकारो ने अपने यहाँ द्वितीय चेम्बरो की स्थापना का विरोध किया था और भारत-सरकार ने भी यह सिफारिश की थी कि जिन प्रान्तो की सरकारे द्वितीय चेम्बर के पक्ष मे नही है उनमे द्वितीय चेम्बरो की स्थापना हर्गिज़ न की जाय। यही नही बल्कि ब्रिटिश सरकार ने भी पहले व्हाइट-पेपर के जरिये यह प्रस्ताव किया था कि जिन प्रान्तो में द्वितीय चेम्बर स्थापित किये जायें वहाँके दोनो चेम्बरो को यह अधिकार भी दिया जाय कि वे चाहे तो १० साल बाद प्रस्ताव पास करके अपने यहाँकी द्वितीय चेम्बर का अन्त करदे। लेकिन ज्वाइण्ट पार्लमेण्ट कमेटी ने इसके विरुद्ध सिफारिश की, जिससे प्रान्तो को यह अधिकार नही दिया गया।[1]

लेजिस्लेटिव असेम्बली

नये विधान की प्रान्तीय असेम्बलियो को हम मॉण्टफोर्ड-युग की लेजिस्लेटिव कौंसिलो की उत्तराधिकारिणी कहे तो अनुपयुक्त न होगा। नये विधान से इनके सगठन मे सबसे पहला जो परिवर्त्तन हुआ, वह यह है कि इनका जीवन-काल ३ साल से बढ़ाकर ५ साल कर दिया गया है। लेकिन मॉण्टफोर्ड-युग की तरह अब गवर्नर को इनका काल बढ़ाने का अधिकार नही रहा है; अलबत्ता इनको किसी भी समय भंग करके नये चुनाव की आज्ञा देने का अधिकार गवर्नर को अब भी होगा। दूसरा परिवर्त्तन यह हुआ है कि उडीसा की असेम्बली के सिवा अब इनमे नामजद सदस्य बिलकुल नही रहेगे। इस नियम मे केवल एक अपवाद है; वह यह कि प्रान्त का कोई भी मिनिस्टर—चाहे वह प्रान्तीय असेम्बली

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ ६५, पैरा ११७।

का सदस्य न भी हो—प्रान्तीय असेम्बली की कार्रवाई में भाग ले सकता है। यही बात एडवोकेट-जनरल के बारे में भी है। लेकिन कोई भी मिनिस्टर या एडवोकेट-जनरल असेम्बली के सदस्य न होने की हालत में असेम्बली में मत देने के अधिकारी नही होसकते।[१] और तीसरा परिवर्त्तन यह है कि इनके सदस्यो की सख्यायें पहले से लगभग दूनी करदी गई है।

असेम्बलियों के सदस्य

प्रान्तीय असेम्बलियो के सदस्यो-सम्बन्धी विवरण खास एक्ट के बजाय उनके ५वे परिशिष्ट में दिया गया है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न जातियो और सीटो के लिए जो निर्वाचन-क्षेत्र वगैरा बनाये गये है उनका वर्णन एक्ट की धारा २९१ के अन्तर्गत जारी किये गये सम्राट् के एक आर्डर-इन-कौंसिल में किया गया है। इस परिशिष्ट और आर्डर-इन-कौंसिल के अनुसार प्रान्तीय असेम्बलियो के सदस्यो-सम्बन्धी खास-खास बाते निम्नप्रकार है।

सीटो का बँटवारा

एक्ट के परिशिष्ट ५ के अन्त में एक तालिका द्वारा बताया गया है कि भिन्न-भिन्न प्रान्तो में भिन्न-भिन्न सम्प्रदायो और विशेष हितो के लिए असेम्बलियो की सीटो का बँटवारा किस प्रकार किया गया है। वह तालिका अगले पृष्ठ पर दीगई है।

इस तालिका में सीटो का जो बँटवारा किया गया है वह ब्रिटिश सरकार के उस खरीते के मुताबिक है जिसे ब्रिटिश सरकार ने ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधान-मन्त्री श्री रैमजे मैक्डॉनल्ड की सिफारिश पर

१ मिनिस्टरो और एडवोकेट-जनरल को इसी प्रकार प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल की कार्रवाई में भी भाग लेने का अधिकार होगा, चाहे वे उसके सदस्य न भी हो, लेकिन सदस्य न होने की हालत में वे मत देने के अधिकारी नहीं होगे।

प्रान्तीय असेम्बलियों की सीटों का बँटवारा

प्रान्त	कुल सदस्य	जनरल सीटें: कुल	जनरल सीटें: हरिजनों के लिए सुरक्षित	पिछड़े हुए क्षेत्रों और जातियों की सीटें	सिक्खों की सीटें	मुसलमानों की सीटें	एंग्लो-इण्डियनों की सीटें	यूरोपियनों की सीटें	हिन्दुस्तानी ईसाइयों की सीटें	व्यापार-संघों के प्रतिनिधियों की सीटें	जमींदारों की सीटें	युनिवर्सिटी की सीटें	मजदूर-प्रतिनिधियों की सीटें	स्त्रियों की सीटें: जनरल	स्त्रियों की सीटें: सिक्ख	स्त्रियों की सीटें: मुसलमान	स्त्रियों की सीटें: एंग्लो-इण्डियन	स्त्रियों की सीटें: हिन्दुस्तानी ईसाइन
मद्रास	२१५	१४६	३०	१		२८	२	३	८	६	६	१	६	६		१	.	१
बम्बई	१७५	११४	१५	१	.	२९	२	३	३	७	२	१	७	५		१		
बंगाल	२५०	७८	३०	.	.	११७	३	११	२	१९	५	२	८	२		२	१	
संयुक्तप्रान्त	२२८	१४०	२०		..	६४	१	२	२	३	६	१	३	४		२	.	
पंजाब	१७५	४२	८		३१	८४	१	१	२	१	५	१	३	१	१	२		
बिहार	१५२	८६	१५	७		३९	१	२	१	४	४	१	३	३		१		
मध्यप्रान्त-बरार	११२	८४	२०	१	..	१४	१	१	.	२	३	१	२	३			.	
आसाम	१०८	४७	७	९	..	३४	.	१	१	११			४	१		.		
सीमाप्रान्त	५०	९		...	३	३६					२			.			..	
उड़ीसा	६०	४४	६	५	.	४	..	..	१	१	२		१	२				
सिन्ध	६०	१८		...		३३	...	२	.	२	२	.	१	१		१	.	..

बम्बई में जनरल सीटों में ७ मराठों के लिए सुरक्षित हैं। पंजाब में जमींदारों की सीटों में एक सीट तुमानदारों के लिए है। उड़ीसा और आसाम में स्त्रियों की सीटें किसी जाति के लिए सुरक्षित नहीं हैं।

'साम्प्रदायिक निर्णय' के रूप में ४ अगस्त १९३२ को प्रकाशित किया था। पूना-पैक्ट और उडीसा को पृथक् प्रान्त बनाने की वजह से जो परिवर्तन उस खरीते में करने लाजिमी हुए हैं उनके अलावा और कोई विशेष परिवर्तन इस साम्प्रदायिक बँटवारे में नही किया गया है।

साम्प्रदायिक सीटें

तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सिक्खो के लिए पजाब और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त में, मुसलमानो के लिए सब प्रान्तो में, एंग्लो-इण्डियनो के लिए आसाम, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, उडीसा व सिन्ध को छोडकर शेष सब प्रान्तो में, यूरोपियनो के लिए पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त व उडीसा को छोडकर शेष सब प्रान्तो में, और भारतीय ईसाईयो के लिए मध्यप्रान्त-बरार, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त व सिन्ध को छोडकर शेष सब प्रान्तो में अलग सीटें सुरक्षित रक्खी गई हैं। मद्रास, बम्बई, बिहार, मध्यप्रान्त-बरार, आसाम और उडीसा इन ६ प्रान्तो में 'पिछडे हुए क्षेत्रो और जातियो' (Backward areas and tribes) के लिए भी अलग सीटें सुरक्षित रक्खी गई हैं। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और सिन्ध को छोडकर शेष सब प्रान्तो में हरिजनो[1] के लिए जनरल सीटो में से कुछ सीटें सुरक्षित रक्खी गई हैं। बम्बई में जनरल सीटो में से कुछ सीटें मराठो के लिए भी सुरक्षित हैं। हिन्दुओ के लिए किसी प्रान्त में और खास बगाल, पजाब, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और सिन्ध में भी, जहाँ उनका अल्पमत है, हिन्दुओ के नाम से कोई सीट सुरक्षित नहीं रक्खी गई। उन्हे केवल

१ भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे हरिजनो की परिभाषा मे किस-किस जाति को शामिल किया जायगा, इसके बारे मे सम्राट् की ओर से एक आर्डर-इन-कौंसिल जारी किया गया है। एक्ट मे और आर्डर-इन-कौंसिल मे उन्हे 'परिगणित जातियो' (Scheduled Castes) का नाम दिया गया है।

जनरल सीटो से ही खडे होने का अधिकार होगा। इन्ही जनरल सीटो से उन सब जातियो को भी खड़ा होने का अधिकार होगा जिन्हे उस प्रान्त में कोई विशेष प्रतिनिधित्व न मिला हो। उदाहरणार्थ, सयुक्तप्रान्त में जनरल सीटो से सिक्ख भी खडे होसकते है और पारसी भी, क्योकि इन जातियो को संयुक्तप्रान्त मे कोई विशेष प्रतिनिधित्व नही दिया गया है। कुछ प्रान्तो मे तो उन जातियो को भी जिन्हे उस प्रान्त में विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया है, एक खास हालत मे जनरल सीटो से खडे होने का अधिकार होगा। जैसे बम्बई मे ईसाई सीटो के निर्वाचन-क्षेत्र सारे प्रान्त मे फैले हुए न होकर खास दो-एक जिलो मे ही रक्खे गये है। ऐसी हालत में शेष जिलो के ईसाई मतदाताओ को जनरल सीटो मे शामिल होने का अधिकार दिया गया है।

पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त को छोड़कर शेष सब प्रान्तो मे स्त्रियो के लिए भी कुछ सीटे सुरक्षित रक्खी गई है; लेकिन उनका आधार भी साम्प्रदायिक ही रक्खा गया है। अर्थात् स्त्रियो की सीटो में भी यह भेद कर दिया गया है कि ये सीटे अमुक-अमुक सम्प्रदाय की स्त्रियो के लिए सुरक्षित होगी। उदाहरणार्थ, मद्रास की स्त्रियो की ८ सीटों मे से एक सीट मुस्लिम स्त्री के लिए और एक हिन्दुस्तानी ईसाइन के लिए सुरक्षित है। इसी प्रकार बंगाल में मुस्लिम और एंग्लो-इण्डियन स्त्रियो के लिए, पंजाब मे सिक्ख और मुस्लिम स्त्रियो के लिए, और बम्बई, संयुक्तप्रान्त, बिहार व सिन्ध में मुस्लिम स्त्रियो के लिए सीटे सुरक्षित रक्खी गई है। हाँ, आसाम और उडीसा में स्त्री-सीटें किसी जाति-विशेष के लिए सुरक्षित नही रक्खी गई।

स्त्री-सीटे

साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के अलावा प्रान्तो में कई विशेष हितो को भी संरक्षण दिया गया है। इस प्रकार साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और

विशेष प्रतिनिधित्व इन दोनो का ही प्रान्तो की धारा-सभाओ में बोल-वाला रहेगा। यदि भिन्न-भिन्न सम्प्रदायो के प्रतिनिधि किसी प्रश्न पर एकमत हो भी जायें, तो 'विशेष हितो' के प्रतिनिधि दूसरे रास्ते पर जाये बिना न रहेगे। ये विशेष हित है (१) व्यापार-उद्योग, (२) जमींदार, (३) मजदूर, और (४) विश्वविद्यालय। व्यापारिक और औद्योगिक हितो को पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के अलावा सब प्रान्तो में अलग सीटें दीगई है। जमींदारो को आसाम के अलावा सब प्रान्तो में अलग सीटें दीगई है। मजदूरो के लिए पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के अलावा सब प्रान्तो में सीटें सुरक्षित है। और विश्वविद्यालयो के लिए आसाम, पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, उडीसा और सिन्ध के अलावा सब प्रान्तो में सीटें सुरक्षित है। पजाब में जमींदारो की सीटो में से भी एक सीट तूमानदारो के लिए सुरक्षित है।

विशेष हितो को सरक्षण

साम्प्रदायिक सीटो में आर्डर-इन-कौंसिल द्वारा एक प्रकार का भेद और किया गया है, और उसका आधार है निर्वाचन-क्षेत्रो को शहरी व देहाती हलको में बाँटना। उदाहरणार्थ, सयुक्त-प्रान्त की १४० जनरल सीटो में से १७ शहरी और १२३ देहाती इलाको में बाँटी गई है। इसी प्रकार हरिजनो के लिए सुरक्षित रक्खी गई २० सीटो में से ४ शहरी और १६ देहाती इलाको के लिए सुरक्षित हैं। मुसलमानो की ६४ सीटो में से १३ शहरी और ५१ देहाती इलाको के लिए रक्खी गई हैं। स्त्रियो की ४ जनरल सीटो में से १ शहरी और ३ देहाती इलाको के लिए सुरक्षित हैं, और मुसलमानो की २ सीटो में से १ शहरी और १ देहाती इलाके के लिए सुरक्षित हैं। यूरोपियन, एग्लोइण्डियन और हिन्दुस्तानी ईसाइयो की सीटो को शहरी

शहरी व देहाती सीटे

व देहाती इलाको में नही बाँटा गया, क्योकि ये लोग ज्यादातर शहरो व कस्बो मे ही रहते है।

इसी प्रकार गैर-साम्प्रदायिक निर्वाचन-क्षेत्रो में भी भिन्न-भिन्न हितों को प्रतिनिधित्व देने की कोशिश कीगई है। उदाहरणार्थ, सयुक्तप्रान्त में ३ व्यापारिक सीटो मे से २ यूरोपियन व्यापारियो के व्यापार-मण्डल के और १ भारतीय व्यापारियो के व्यापार-मण्डल के लिए सुरक्षित रक्खी गई है। जमीदारो की ६ सीटो में से ४ अवध के ब्रिटिश इण्डियन असोसिएशन और दो इलाहाबाद के आगरा प्रान्तीय जमीदार-असोसिएशन के लिए सुरक्षित रक्खी गई है। मजदूरो की ३ सीटो में से १ ट्रेड यूनियनो और २ गैर-यूनियन मजदूरो के लिए सुरक्षित रक्खी गई है। यही बात अन्य प्रान्तो के बारे मे है।

और भेद

निर्वाचन-विधि

साम्प्रदायिक सीटो का चुनाव पृथक् निर्वाचन-पद्धति से हुआ करेगा। अर्थात् हरेक सम्प्रदाय की सीटो का चुनाव उसी जाति के मतदाता करेगे, जबकि जनरल (आम) निर्वाचन-क्षेत्रो मे उन सब मतदाताओ को मत देने का अधिकार होगा जिन्हे उस प्रान्त में और किसी साम्प्रदायिक निर्वाचन-क्षेत्र में शामिल नही किया गया होगा। रहे निर्वाचन-क्षेत्र। सो मुसलमान, एंग्लो-इण्डियन और सिक्खो को जिन-जिन प्रान्तो मे विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया है उन-उन प्रान्तो मे करीब-करीब सारे प्रान्त को ही निर्वाचन-क्षेत्रो मे बाँटा गया है। लेकिन इस नियम का एक अपवाद है। बहिर्गत-क्षेत्र जैसे कुछ इलाके ऐसे है जिन्हे प्रतिनिधित्व का कोई अधिकर नही दिया गया है। जिन प्रान्तो में यूरोपियनो को सीटे दीगई है उनमें केवल आसाम ही एक प्रान्त है जिसमें यूरोपियनो के निर्वाचन-

क्षेत्र सारे प्रान्त में नहीं बल्कि कुछ जिलो तक ही मर्यादित है। ईसाइयो के निर्वाचन-क्षेत्र आमतौर पर सारे प्रान्त में न होकर उन खास-खास जिलो या शहरो में रक्खे गये है जहाँ उनकी आबादी काफी है। संयुक्तप्रान्त और मद्रास इस नियम के अपवाद है, और विहार में ईसाई सीट का चुनाव सीधा मतदाताओ द्वारा न होकर छोटा नागपुर कैथलिक सभा और विहार-उडीसा की क्रिश्चियन कौंसिल द्वारा नामजद किये गये ४०-४० सदस्यो के मतो से हुआ करेगा। पिछडे हुए क्षेत्रो और जातियो को ६ प्रान्तो में जो विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया है उनमें मद्रास, मध्यप्रान्त-बरार और आसाम में इन जातियो के निर्वाचन-क्षेत्र सारे प्रान्त में न रक्खे जाकर खास-खास इलाको में ही रक्खे गये है और वम्बई व विहार में यह किया गया है कि जनरल सीटो के कुछ खास निर्वाचन-क्षेत्रो में ही इन जातियो को शामिल कर दिया गया है। यही उडीसा की इनकी ५ में से १ सीट के लिए किया गया है, लेकिन शेष ४ सीटो में निर्वाचन न होगा बल्कि गवर्नर 'अपनी मर्जी' से 'पिछडे हुए क्षेत्रो और जातियो' के प्रतिनिधियो को नामजद करेगा। हरिजनो के लिए निर्वाचन-क्षेत्र पृथक् नही वनाये गये, वे जनरल निर्वाचन-क्षेत्रो में ही शामिल होगे।

निर्वाचन-क्षेत्रो के वारे में यह भी जानना जरूरी है कि एक निर्वाचन-क्षेत्र से एक ही सदस्य चुना जायगा या एक से अधिक भी ? यानी ये

बहुसदस्य निर्वाचन-क्षेत्र

निर्वाचन-क्षेत्र एकसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्र (Single member constituencies) होगे या बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्र(Multi-member constituencies)? नये विधान में आमतौर से तो यही नियम रक्खा गया है कि एक निर्वाचन-क्षेत्र से एक ही सदस्य चुना जाय। लेकिन कुछ प्रान्तो में

ईसाई, एंग्लो-इण्डियन और यूरोपियनो के लिए बहुसदस्य निर्वाचन-क्षेत्र भी रक्खे गये हैं और कुछ प्रान्तो में मुसलमानो की और जनरल सीटो के लिए भी बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्र रक्खे गये है—जैसे कि बम्बई और मद्रास में। इसके अलावा चूंकि पूना-पैक्ट के अन्तर्गत हरिजनो के लिए पृथक् निर्वाचन-क्षेत्र नही बनाये जासकते, उनके लिए प्रान्त के खास-खास निर्वाचन-क्षेत्रो में ही सीटें सुरक्षित रखदी गई हैं; इसलिए, इस वजह से भी, उन सब प्रान्तो में, जहाँ हरिजनो को विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया है, जनरल निर्वाचन-क्षेत्र बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्र ही हैं।

बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्रो में अक्सर यह पेचीदगी उठ खडी होती है कि प्रत्येक मतदाता को कितने मत देने का अधिकार दिया जाय? अगर एक मतदाता को एक ही मत देने का अधिकार हो, तब तो कोई दिक्कत नहीं; लेकिन यदि हरेक मतदाता को उतने ही मत देने का अधिकार हो कि जितनी सीटें हो, तब यह दिक्कत पेश आती है कि प्रत्येक मतदाता को अपने सारे मत उम्मीदवारो में अपनी मर्जी के माफिक बाँटने का अधिकार दिया जाय या प्रत्येक मतदाता एक उम्मीदवार को एक मत से ज्यादा न देसके? नये विधान में इस सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्रो में भिन्न-भिन्न प्रकार के नियम रक्खे गये हैं।

इन भिन्न-भिन्न बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्रो में मत-विभाजन की जो प्रणालियाँ रक्खी गई हैं उन सबका वर्णन करना यहाँ सम्भव नहीं है।

हरिजन-सीटो का चुनाव

अत. यहाँ केवल हरिजन-सीटो की चुनाव-प्रणाली पर प्रकाश डाला जायगा। पूना-पैक्ट के अनुसार उन-उन जनरल बहुसदस्य-निर्वाचन-क्षेत्रो के हरिजन मतदाताओ को, जिनमें हरिजनो के लिए सीटें सुरक्षित रक्खी गई हैं,

पहले एक प्रारम्भिक चुनाव में भाग लेने का अधिकार होगा, जिसके उम्मीदवार भी हरिजन ही होगे। इस चुनाव में जिन चार उम्मीदवारो को सबसे अधिक मत मिलेगे वे ही बाद में उस जनरल निर्वाचन-क्षेत्र के चुनाव में हरिजनो के लिए सुरक्षित रक्खी गई सीट से खडे हो सकेगे। इसके अलावा उस जनरल निर्वाचन-क्षेत्र की साधारण सीटो के लिए भी वे उम्मीदवार समझे जायँगे। आमतौर पर जनरल निर्वाचन-क्षेत्रो की साधारण सीटो से अन्य हरिजन उम्मीदवार भी खडे होसकेगे, लेकिन बगाल में कोई भी हरिजन जनरल निर्वाचन-क्षेत्रो की साधारण सीट से तबतक खडा न होसकेगा जबतक कि वह प्रारम्भिक चुनाव में सफल न होजाय।

प्रारम्भिक चुनाव के बाद जब आम चुनाव होगा तो प्रत्येक मत-दाता को, चाहे वह हरिजन हो या गैर-हरिजन, चुनाव में उतने ही मत देने का अधिकार होगा जितनी कि सीटें होगी, और उसको भिन्न-भिन्न उम्मीदवारो में उन मतो का अपनी मर्जी के माफिक बँटवारा करने का अधिकार होगा—यानी वह चाहे तो सारे मत एक ही उम्मीदवार को देदे या और किसी प्रकार उनका बँटवारा करे। यह जरूरी नहीं कि एक उम्मीदवार को एक ही मत दिया जाय, और यह भी जरूरी नही कि मतो का विभाजन हरिजन व गैर-हरिजन दोनो प्रकार के उम्मीदवारो में किया जाय। कोई मतदाता चाहे तो अपने सारे मत हरिजन उम्मीदवार को देदे या गैर-हरिजन उम्मेदवार को। व्यवहार में होगा भी ऐसा ही। मत-विभाजन का यह सिद्धान्त हैमण्ड-कमेटी [१] की सिफारिश पर जारी

[१] हैमण्ड कमेटी से अभिप्राय उस कमेटी से है जो गवर्मण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट पास होजाने के बाद चुनाव-सम्बन्धी विभिन्न मामलो पर विचार करने के लिए नियुक्त कीगई थी।

किया गया है। यह कहना व्यर्थ न होगा कि इस पद्धति ने पूना-पैक्ट के मूल उद्देश्य को नप्ट कर दिया है और उलट-फेरकर फिर उसी पृथक् निर्वाचन-पद्धति को जारी कर दिया गया है जिसका गाँधीजी ने विरोध किया था। क्योकि ज्यादातर होगा यही कि हरिजन मतदाता अपने सारे मत हरिजन उम्मीदवार को देंगे और गैर-हरिजन मतदाता गैर-हरिजन उम्मीदवार को।

स्त्रियो के लिए जो सीटें भिन्न-भिन्न प्रान्तो में सुरक्षित रक्खी गई है, उनके निर्वाचन-क्षेत्र सारे प्रान्त मे फैले हुए न होकर प्रान्त के ख़ास-ख़ास शहरो में ही रक्खे गये है। आमतौर पर स्त्री-सीटो के चुनाव मे पुरुष और स्त्री दोनो को ही मत देने का अधिकार दिया गया है, लेकिन बगाल व बिहार की मुस्लिम स्त्री-सीटो के चुनाव मे और आसाम की जनरल स्त्री-सीटो के चुनाव में पुरुष मतदाता भाग न ले सकेगे।

स्त्रियो की सीटे

लेजिस्लेटिव कौंसिलें

लेजिस्लेटिव कौंसिले इन छः प्रान्तो मे कायम की गई है (१) मद्रास, (२) बम्बई, (३) बगाल, (४) सयुक्तप्रान्त, (५) बिहार और (६) आसाम। इनमें सीटो का बँटवारा उस तालिका के अनुसार होगा, जो अगले पृप्ठ पर दीगई है।

लेजिस्लेटिव असेम्बलियो की भाँति लेजिस्लेटिव कौंसिलो के लिए भी हरेक प्रान्त में मुसलमानो और यूरोपियनो की सीटे पृथक् सुरक्षित रक्खी गई है, जिनका चुनाव पृथक् निर्वाचन-पद्धति द्वारा हुआ करेगा। हिन्दुस्तानी ईसाइयो के लिए केवल मद्रास प्रान्त में सीटें सुरक्षित रहेगी, जिनका चुनाव भी पृथक् निर्वाचन-पद्धति से होगा। शेष जातियो के व्यक्तियो को जनरल सीटो से खडे होने और मत देने का अधिकार

प्रान्तीय कौंसिलों की सीटों का बँटवारा

प्रान्त	कुल सदस्य	जनरल	मुसलमान	यूरोपियन	हिन्दुस्तानी ईसाई	असेम्बली के नामज़द	गवर्नर द्वारा नामज़द
मद्रास	कम-से-कम ५४ ज्यादा-से-ज्यादा ५६	३५	७	१	३	.	कम-से-कम ८ ज्यादा-से-ज्यादा १०
बम्बई	कम-से-कम २९ ज्यादा-से-ज्यादा ३०	२०	५	१	.		कम-से-कम ३ ज्यादा-से-ज्यादा ४
बगाल	कम-से-कम ६३ ज्यादा-से-ज्यादा ६५	१०	१७	३		२७	कम-से-कम ६ ज्यादा-से-ज्यादा ८
सयुक्तप्रान्त	कम-से-कम ५८ ज्यादा-से-ज्यादा ६०	३४	१७	१			कम-से-कम ६ ज्यादा-से-ज्यादा ८
बिहार	कम-से-कम २९ ज्यादा-से-ज्यादा ३०	९	४	१		१२	कम-से-कम ३ ज्यादा-से-ज्यादा ४
आसाम	कम-से-कम २१ ज्यादा-से-ज्यादा २२	१०	६	२			कम-से-कम ३ ज्यादा-से-ज्यादा ४

होगा। बंगाल व बिहार इन दो प्रान्तो की लेजिस्लेटिव कौसिलो में कुछ सदस्य ऐसे भी हुआ करेगे, जिनका चुनाव उन प्रान्तो की लेजिस्लेटिव असेम्बली के सदस्यों द्वारा हुआ करेगा। लेकिन इसका यह मतलब नही कि लेजिस्लेटिव असेम्बली अपने ही कुछ सदस्य चुनकर लेजिस्लेटिव कौसिल में भेज देगी; बल्कि इस चुनाव मे वे सब व्यक्ति उम्मीदवार होसकेंगे जिन्हे प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौसिल की किसी भी सीट के चुनाव में मत देने का अधिकार होगा। यदि इस प्रकार उस प्रान्त की ख़ास लेजिस्लेटिव असेम्बली का ही कोई सदस्य कौसिल के लिए चुन लिया जाय तो उसे असेम्बली की सीट से इस्तीफा देना होगा। ये चुनाव आनुपातिक-प्रतिनिधित्व की 'निर्वाचन-प्रणाली'(Proportional Representation by means of the single transferable vote) द्वारा हुआ करेगे।

नामजद सदस्य

प्रत्येक प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौसिल में कुछ सदस्यो को नामज़द करने का अधिकार गवर्नर को भी होगा और वह इस अधिकार के प्रयोग में 'अपनी मर्जी' से काम कर सकेगा। लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्यो की नामजदगी के बारे मे गवर्नरो को जो आदेश सम्राट् के आदेश-पत्रो द्वारा दिया गया है, वह इस प्रकार है :—

"लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्यो की नामज़दगी करने के अपने अधिकार को हमारा गवर्नर इस प्रकार प्रयोग में लायगा कि जहाँतक होसके उस असमानता को दूर किया जाय जो चुनाव के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न हितो को कौसिल में उचित प्रतिनिधित्व न मिल सकने के कारण उत्पन्न हुई हो; और खासतौर से वह इस बात का ख़याल रक्खेगा कि कौसिल में स्त्रियो और हरिजनो को वाजिब प्रतिनिधित्व मिल जाय।"

लेजिस्लेटिव असेम्वली के जीवन-काल की तरह लेजिस्लेटिव कौंसिल का कोई जीवन-काल निर्धारित नहीं किया गया है, यद्यपि सदस्यो की सदस्यता की अवधि अवश्य ९ साल रक्खी गई है। लेजिस्लेटिव कौसिलो के पहले चुनाव के एक-तिहाई सदस्यो की अवधि ३ साल में और एक-तिहाई सदस्यो की अवधि ६ साल में समाप्त होजायगी। इस प्रकार हर तीन साल वाद लेजिस्लेटिव कौंसिलो के एक-तिहाई सदस्यो का नया चुनाव हुआ करेगा। कौन-कौनसे सदस्य पहले ३ साल बाद और कौन-कौनसे पहले ६ साल वाद सदस्यता से अलग होजायँगे, इस बात का निर्णय करने का अधिकार गवर्नर को होगा और वह इस मामले में 'अपनी मर्ज़ी' से काम करने का अधिकारी होगा।

जीवन-काल

मताधिकार

प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्वली के सदस्यो के चुनाव में किन-किन व्यक्तियो को मत देने का अधिकार होगा, इसका विस्तार से उल्लेख एक्ट के छठे परिशिष्ट में किया गया है। यह परिशिष्ट केवल साम्प्रदायिक निर्वाचन-क्षेत्रो के मतदाताओ की योग्यता से सम्बन्ध रखता है। शेष सीटो के लिए मत-दाताओ की क्या योग्यतायें निर्धारित कीगई है, इसका उल्लेख एक्ट की धारा २९१ के अन्तर्गत जारी किये गये एक आर्डर-इन-कौंसिल में किया गया है। भिन्न-भिन्न प्रान्तो के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के नियम वनाये गये है, लेकिन जहांतक साम्प्रदायिक सीटो का सम्बन्ध है, इन नियमो का एक उद्देश्य यह रहा है कि जनता के लगभग १५ प्रतिशत व्यक्तियो को मत देने का अधिकार मिल जाय। मॉण्टफोर्ड-युग में प्रान्तीय लेजि-स्लेटिव कौंसिलो के चुनाव के लिए मताधिकार-सम्बन्धी जो नियम वनाये

असेम्वली मे

गये थे उनके फलस्वरूप ब्रिटिश भारत मे लगभग ७२ लाख व्यक्तियो को मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ था, अर्थात् ब्रिटिश भारत की जनता के लगभग ३ प्रतिशत व्यक्ति ही मत देने के अधिकारी हुए थे। साइमन-कमीशन ने सिफारिश की थी कि मताधिकार-सम्बन्धी नियमों में काफी ढील दी जानी चाहिए, ताकि जनता के लगभग १० प्रतिशत व्यक्तियो को मत देने का अधिकार प्राप्त होजाय। गोलमेज परिषद् के प्रथम अधिवेशन में मताधिकार-उपसमिति की ओर से यह सिफारिश कीगई कि लगभग २५ प्रतिशत व्यक्तियों को मत देने का अधिकार होना चाहिए। अन्त मे गोलमेज परिषद् के दूसरे अधिवेशन के बाद लॉर्ड लोथियन की अध्यक्षता में जो मताधिकार-समिति बिठाई गई उसकी सिफारिशो के फलस्वरूप लगभग १३ प्रतिशत व्यक्तियो को मत देने का अधिकार दिया गया है।

मताधिकार की योग्यता का मुख्य आधार अभीतक सम्पत्ति है—जैसे मालगुज़ारी देना, लगान देना, इनकमटैक्स देना, और शहरो मे मकानो का किराया या भाड़ा देना। इनके अलावा शिक्षा-सम्बन्धी योग्यता के आधार पर भी मताधिकार दिया गया है। आमतौर पर अपर प्राइमरी तक की शिक्षा पानेवाले प्रत्येक व्यक्ति को मत देनें का अधिकार दिया गया है। हरिजन जातियो और स्त्रियो के लिए नियमो में कुछ और ढील रक्खी गई है। साथ ही फौज के अवसर-प्राप्त (रिटायर्ड) और पेंशन-याफ़्ता अफसरो व सिपाहियो को भी पहली बार एक सिरे से मत देने का अधिकार देदिया गया है।

लेजिस्लेटिव कौंसिले आमतौर पर जमींदारो और रईसो की कौंसिले होगी। इसी वजह से इनके मतदाताओ की मताधिकार-योग्यता, जिसका आधार भी सम्पत्ति है, बहुत ऊँची रक्खी गई है। उदाहरणार्थ, जहाँ

संयुक्तप्रान्त में इनकमटैक्स देनेवाला कोई भी व्यक्ति लेजिस्लेटिव असे-

कौंसिल मे

म्बली की सीटो की वोटर-लिस्ट में अपना नाम दर्ज करा सकता है, लेजिस्लेटिव कौंसिल की सीटो की वोटर-लिस्ट मे इनकमटैक्स देनें की वजह से वे ही व्यक्ति अपना नाम दर्ज करा सकेगे जिनकी कम-से-कम ४,०००) वार्षिक की आमदनी पर इनकमटैक्स लगा हो।

सम्पत्ति-सम्बन्धी योग्यता के अलावा निम्न प्रकार के व्यक्तियो को भी लेजिस्लेटिव कौंसिल की वोटर-लिस्ट में शामिल होने का अधिकार होगा—

(१) ब्रिटिश भारत की किसी भी धारा-सभा के भूतपूर्व और वर्तमान गैर-सरकारी सदस्य,

(२) ब्रिटिश भारत की किसी भी एग्जीक्यूटिव कौंसिल के भूतपूर्व या वर्तमान सदस्य, या कोई भी भूतपूर्व या वर्तमान मिनिस्टर,

(३) ब्रिटिश भारत की किसी भी यूनिवर्सिटी के चान्सलर, प्रो-चान्सलर, वाइस-चान्सलर, प्रो-वाइस चान्सलर, और सिनेट व कोर्ट के भूतपूर्व या वर्तमान सदस्य,

(४) फेडरल कोर्ट या किसी भी हाईकोट के भूतपूर्व या वर्तमान जज,

(५) मद्रास, कलकत्ता और बम्बई के भूतपूर्व व वर्तमान मेयर;

(६) म्यूनिसिपल बोर्ड या जिला बोर्डो के भूतपूर्व व वर्तमान गैर-सरकारी चेयरमैन;

(७) दीवानबहादुर, सरदारबहादुर, खानबहादुर, रायबहादुर, राववहादुर और इनसे ऊँचे खिताब पानेवाले सब व्यक्ति, और

(८) ब्रिटिश भारत में २५०) मासिक या इससे ज्यादा पेंशन पाने-वाले सब व्यक्ति।[1]

१ लेजिस्लेटिव कौंसिल के मताधिकार-सम्बन्धी नियमो का ब्योरे-

सदस्यता पर पाबन्दियाँ

प्रान्तीय धारा-सभा के चुनावो मे खडे होनेवाले उम्मीदवारों के लिए किन-किन योग्यताओ की जरूरत है और कौन-कौनसी वजूहात ऐसी है जिनके फलस्वरूप किसी व्यक्ति को प्रान्तीय धारा-सभा की सदस्यता से अलग कर दिया जायगा, या जिनके फलस्वरूप वह व्यक्ति चुनाव में उम्मीदवार खड़ा होने के लिए अयोग्य समझा जायगा, इन सबका उल्लेख एक्ट की धारा ६९, परिशिष्ट ५ और धारा २९१ के अन्तर्गत जारी किये गये विभिन्न आर्डर-इन-कौंसिलो में किया गया है। उसके अनुसार—

(१) प्रान्तीय धारा-सभा के चुनाव मे किसी निर्वाचन-क्षेत्र से उम्मीदवार बनने के लिए सबसे पहली शर्त यह है कि वह उम्मीदवार मतदाता हो। आमतौर पर यह जरूरी नही कि उसका नाम उस निर्वाचन-क्षेत्र की वोटर-लिस्ट मे ही दर्ज हुआ हो जिससे कि वह उम्मीदवार खड़ा होना चाहता है। इस सिलसिले मे आर्डर-इन-कौंसिलों के अन्तर्गत जारी किये गये नियमो मे काफी उदारता दिखाई गई है, लेकिन उनमें किसी एक सिद्धान्त को नही अपनाया गया है।

(२) प्रत्येक उम्मीदवार का या तो ब्रिटिश प्रजा अथवा किसी ऐसी देशी रियासत का नरेश या प्रजा होना आवश्यक है जिसका उल्लेख इस सिलसिले में सम्राट् के किसी आर्डर-इन-कौंसिल मे या गवर्नरो के नियमों में किया जाय। उदाहरणार्थ, संयुक्तप्रान्त की हद के अन्दर जो देशी रियासते है उनके नरेशो और प्रजा को संयुक्तप्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली और लेजिस्लेटिव कौसिल के चुनावो में खड़ा होने का अधिकार दिया गया है। फेडरेशन स्थापित होने पर फेडरेशन में

वार वर्णन सम्राट् के आर्डर-इन-कौसिल द्वारा किया गया है।

शामिल होनेवाली प्रत्येक देशी रियासत के नरेश और वहाँकी प्रजा को भी यह रिआयत मिल जायगी।

(३) लेजिस्लेटिव असेम्बली के लिए कोई व्यक्ति तबतक उम्मीदवार नही होसकता जबतक कि उसकी अवस्था कम-से-कम २५ वर्ष न हो। इसी प्रकार लेजिस्लेटिव कौंसिल के लिए कोई व्यक्ति तबतक उम्मीदवार नही होसकता जबतक कि उसकी अवस्था कम-से-कम ३० वर्ष न हो।

(४) मिनिस्टरो के अलावा सरकारी खजाने से वेतन या अन्य किसी प्रकार का पुरस्कार पानेवाला कोई भी कर्मचारी न तो धारा-सभा का सदस्य रह सकता है और न चुनाव में खडा होसकता है। लेकिन प्रान्तीय धारा-सभा को यह अधिकार है कि वह एक्ट पास करके इस पाबन्दी को उन कर्मचारियो पर से उठा ले जिनका कि वह एक्ट मे उल्लेख करना उचित समझे। कई प्रान्तो में एक्ट पास करके यह नियम बना भी दिया गया है, कि कोई भी व्यक्ति चुनाव में उम्मीदवार होने या प्रान्तीय धारा-सभा का सदस्य रहने से केवल इसी बिना पर वचित न किया जायगा कि उसने 'पार्लमेण्टरी सेक्रेटरी' का ओहदा स्वीकार कर लिया है। पजाब में जैलदारो, इनामदारो वगैरा को भी, जिन्हे सरकारी ख़जाने से कुछ पुरस्कार मिलता रहता है, इस प्रकार की पाबन्दी से मुक्त कर दिया गया है।

(५) कोई भी ऐसा व्यक्ति जो किसी अदालत द्वारा पागल घोषित किया जा चुका है, न तो धारा-सभा का सदस्य रह सकता है और न किसी चुनाव में उम्मीदवार होसकता है।

(६) कोई भी ऐसा व्यक्ति जो दिवालिया करार दिया गया हो और जिसे अदालत द्वारा कर्जो से छुटकारा न मिला हो, न तो धारा-

सभा का सदस्य रह सकता है और न किसी चुनाव मे उम्मीदवार हो सकता है।

(७) कोई भी ऐसा व्यक्ति जो किसी चुनाव-सम्बन्धी जॉच में चुनाव-ट्रिब्यूनल द्वारा किसी जुर्म करने का या किसी गैर-कानूनी या नाजायज़ हरकत का दोषी ठहरा दिया गया हो, न तो धारा-सभा का सदस्य रह सकता है और न किसी चुनाव मे उम्मीदवार होसकता है। लेकिन यह अयोग्यता ऐसी है जो कुछ समय के बाद स्वतः दूर होजाती है। चुनावो के सम्बन्ध में कौन-कौनसी हरकते नाजायज़ समझी जायँगी और कितने समय के बाद वह अयोग्यता दूर होजायगी, इन बातो का उल्लेख भी सम्राट् के एक आर्डर-इन-कौंसिल द्वारा किया गया है। इस आर्डर-इन-कौंसिल के अनुसार ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो किसी भी चुनाव-सम्बन्धी जुर्म में सज़ा पा चुका हो या जो चुनाव-सम्बन्धी किसी नाजायज़ हरकत का दोषी ठहराया गया हो, आमतौर पर प्रान्तीय धारा-सभाओ के चुनावो मे ६ साल तक खड़ा होने लिए अयोग्य समझा जायगा।

(८) यदि किसी व्यक्ति को ब्रिटिश भारत मे किसी जुर्म में काले पानी की या दो साल या दो साल से अधिक की सजा होजाय, तो रिहा होने के बाद ५ साल तक वह व्यक्ति चुनाव में उम्मीदवार होने के अयोग्य रहेगा, चाहे उसे सजा किसी राजनैतिक अपराध के कारण ही क्यो न दीगई हो। लेकिन यदि गवर्नर चाहे तो 'अपनी मर्ज़ी' से किसी भी व्यक्ति की इस अयोग्यता को ५ साल खत्म होने से पहले ही दूर कर सकता है।

(९) किसी चुनाव में उम्मीदवार या किसी उम्मीदवार का चुनाव-एजेण्ट रहनेवाला कोई व्यक्ति यदि नियत समय मे चुनाव मे हुए खर्चे का हिसाब न दाखिल करे, तो वह भी ५ साल तक अगले चुनावो में

नहीं खडा होसकेगा। लेकिन अगर गवर्नर चाहे तो 'अपनी मर्जी' से इस अयोग्यता को भी दूर कर सकता है।

(१०) ऐसा कोई व्यक्ति जो किसी अपराध की सजा पूरी करने के लिए या तो कालेपानी में हो या किसी जेल में बन्द हो, चुनाव में खडा नहीं होसकता। यह नियम शायद नजरबन्दो पर लागू न हो-सकेगा; क्योकि जबतक किसी व्यक्ति पर मुकदमा न चले और उसे अदालत द्वारा बाकायदा सजा न मिले तबतक वह अपराधी नही कहा जा सकता।

(११) यदि किसी सदस्य को किसी चुनाव-सम्बन्धी मामले में सजा होजाय या किसी और अपराध में दो या दो साल से अधिक की सजा हो, तो उसे अपनी सदस्यता से अलग होना पडेगा। लेकिन अगर वह सदस्य तीन महीने के भीतर अपील या निगरानी की दर्ख्वास्त देदे, तो जबतक उसकी अपील या निगरानी की दर्ख्वास्त का फैसला न हो-जाय तबतक उस व्यक्ति को सदस्यता से अलग नही होना पडेगा। लेकिन इस दर्मियान में वह व्यक्ति न तो धारा-सभा की बैठको में भाग ले सकेगा और न मत दे सकेगा।

(१२)कोई भी व्यक्ति किसी प्रान्त की धारा-सभा के दोनो चेम्बरो का एकसाथ सदस्य नहीं रह सकता। नियत समय के अन्दर-अन्दर उसे दोनो जगहो में से एक जगह से इस्तीफा देना पडेगा। इसी प्रकार कोई भी व्यक्ति केन्द्रीय धारा-सभा और प्रान्तीय धारा-सभा दोनो का एकसाथ सदस्य नही रह सकता। यदि वह नियत समय में केन्द्रीय धारा-सभा की सदस्यता से इस्तीफा न देगा तो उसकी प्रान्तीय धारा-सभा वाली जगह खाली होजायगी। समय नियत करने का अधिकार गवर्नर को है और इसमें वह 'अपने विवेक' से काम लेसकेगा।

(१३) यदि कोई व्यक्ति एक ही चेम्बर में एक से अधिक जगह से चुन लिया जाय, तो उसे भी केवल एक ही जगह पर रहने का अधिकार होगा। शेष जगहो से उसको इस्तीफा देना पडेगा।

(१४) प्रान्तीय धारा-सभा का कोई भी सदस्य धारा-सभा की कार्रवाई में तबतक भाग नहीं लेसकता जबतक कि वह या तो गवर्नर के सामने या गवर्नर द्वारा नियुक्त किसी व्यक्ति के सामने सम्राट् के प्रति वफादारी की शपथ न लेले।

(१५) यदि कोई व्यक्ति जिस चेम्बर का वह सदस्य हो उसकी बैठको से ६० दिन तक बिना चेम्बर की आज्ञा लिये लगातार गैरहाजिर रहे, तो चेम्बर को यह अधिकार होगा कि उस व्यक्ति को चेम्बर की सदस्यता से हटादे। इन ६० दिनो में वे दिन शामिल नही किये जायँगे जिन दिनो कि चेम्बर का अधिवेशन या तो भंग कर दिया गया हो या ४ दिन से अधिक के लिए स्थगित रहा हो।

यदि कोई व्यक्ति उपर्युक्त नियमो के विरुद्ध किसी धारा-सभा की बैठक में बैठे या मत दे, तो प्रतिदिन ऐसा करने के लिए उसपर अदालतो द्वारा ५००) तक का जुर्माना किया जा सकेगा।

सदस्यों के रिआयती अधिकार

धारा-सभा की सदस्यता एक सार्वजनिक कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य का ठीक-ठीक पालन करने के लिए यह जरूरी है कि धारा-सभा के सदस्यो को निर्भयता से और बिना किसी रोक-टोक के इस कर्त्तव्य के पालन का मौका दिया जाय। यह तभी सम्भव है जब कि देश के साधारण कानून उनपर उतनी ही सख्ती से न लागू किये जायँ कि जितनी सख्ती से वे आम लोगो पर किये जाते है। अतः धारा-सभाओ के सदस्यो के साथ कुछ रिआयते की जाती है, जो एक प्रकार से उनके रिआयती

अधिकार (Privileges) ही कहलाने चाहिएँ। प्रान्तीय धारा-सभाओ के सदस्यो को जो रिआयती अधिकार नये एक्ट में दिये गये है उनका वर्णन एक्ट की ७१वी धारा में किया गया है। इस धारा के अनुसार धारा-सभा के प्रत्येक सदस्य को धारा-सभा मे अपनी इच्छानुसार भाषण और मत देने की स्वतत्रता होगी। उसके भाषण के फलस्वरूप या उसके किसी भी पक्ष-विपक्ष में मत देने के कारण उसपर कोई भी दीवानी या फौजदारी मुकदमा नही चलाया जासकता और न ही कोई और कानूनी कार्रवाई उसके खिलाफ की जासकती है। इसी प्रकार हाउस के अधिकार से हाउस के जो कोई कागजात, कार्रवाई, रिपोर्ट वगैरा छपाई जायँगी या प्रकाशित होगी, उनके फलस्वरूप भी किसी व्यक्ति के खिलाफ कोई कानूनी कार्रवाई नही की जा सकेगी। लेकिन किसी भी सदस्य को हाउस के नियमो के विरुद्ध भाषण देने या मत देने का कोई अधिकार न होगा। प्रत्येक सदस्य के लिए हाउस के नियमो, स्टैण्डिग आर्डरो और अध्यक्ष की रूलिगो का मानना लाजिमी होगा।

धारा-सभाओ के भवनो की सत्ता

इग्लैण्ड में पार्लमेण्ट के प्रत्येक हाउस को यह अधिकार है कि यदि कोई व्यक्ति उसके काम में खलल डाले या और किसी प्रकार उसकी सत्ता का अपमान करे तो खुद वारण्ट निकालकर उसे गिरफ्तार करले। ब्रिटिश उपनिवेशो में जब उत्तरदायी शासन स्थापित किया गया था तो उनकी धारा-सभाओ के भिन्न-भिन्न भवनो को भी अपनी सत्ता की रक्षा करने के लिए उसी प्रकार के अधिकार दिये गये थे जिस प्रकार कि इग्लैण्ड में कामन्स-सभा को है। लेकिन भारत में ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने धारा-सभाओ के भवनो को वैसे ही अधिकार और स्थिति देने से हाथ खीच लिया है। एक्ट की धारा ७१ उपधारा ३ के अनुसार किसी भी धारा-सभा के भवन

को या उसकी किसी कमेटी या अफसर को किसी व्यक्ति को सजा देने, वारण्ट निकालने, या गिरफ्तार करने का या ऐसा और कोई अधिकार प्राप्त न होगा जैसा कि अदालतो को होता है। प्रान्तीय धारा-सभाओ के भवनो को इन मामलों में केवल यह अधिकार दिया गया है कि वे हाउस के नियमो के विरुद्ध आचरण करनेवाले व और किसी प्रकार की बेढंगी हरकत करनेवाले व्यक्तियो को, चाहे वे सदस्य हो या दर्शक अथवा प्रेस-रिपोर्टर, हाउस से निकाल दें। अलबत्ता, इसके अलावा, धारा-सभा एक्ट पास करके यह कानून भी बना सकती है कि जो व्यक्ति किसी भी हाउस की कमेटी के सामने कमेटी के प्रधान के हुक्म के बावजूद गवाही देने से या कोई दस्तावेज पेश करने से इन्कार करे तो उसे अदालतो के जरिये सजा दी जा सकेगी। हाउस की सत्ता का अपमान होने पर केवल अदालते ही मानहानि करनेवाले व्यक्ति को सजा दे सकेंगी, खास हाउस नही। लेकिन यदि गवर्नर 'अपने विवेक' से यह नियम बना दे कि मौजूदा या भूतपूर्व सरकारी कर्मचारी खास-खास वर्णित हालतो में ही कमेटी के सामने पेश होने को वाध्य होगे तो वे कर्मचारी उन हालतो के अलावा कमेटी के सामने गवाही देने को वाध्य नही होगे। इसी तरह गवर्नर 'अपने विवेक' से यह नियम भी बना सकेगा कि कोई कमेटी किसी व्यक्ति को उन मामलो पर प्रकाश डालने के लिए वाध्य न कर सकेगी जिन्हे गवर्नर गुप्त समझता हो।

एक्ट में वर्णित सदस्यो के रिआयती अधिकारो के अलावा धारा-सभाओ को भी उनके रिआयती अधिकारो में वृद्धि करने का अधिकार है; लेकिन इसके लिए उन्हे बाकायदा एक्ट पास करना होगा। यह ध्यान रहे कि अभीतक किसी भी प्रान्त की धारा-सभा ने इस दिशा मे कोई कदम नही उठाया है।

सदस्यों के वेतन व भत्ते

प्रान्त की असेम्बली और कौंसिल के सदस्यो को वेतन या भत्ते कितने दिये जायें, इसका निश्चय करने का अधिकार एक्ट की धारा ७२ के अनुसार प्रत्येक प्रान्त की धारा-सभा को होगा, लेकिन इसके लिए उन्हे बाकायदा एक्ट पास करने पडेंगे। जबतक वे एक्ट पास न होजायेंगे तबतक सदस्यो को उसी प्रकार भत्ता दिया जायगा जिस प्रकार कि 'प्रान्तीय स्वराज्य' जारी होने से पहले उस प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्यो को दिया जाता था। इसका अर्थ यह हुआ कि अब प्रान्तीय धारा-सभायें एक्ट पास करके अपने सदस्यो को भत्तो के अलावा बाकायदा वेतन भी दे सकेंगी, जैसा कि मद्रास, सयुक्तप्रान्त आदि प्रान्तो में किया भी गया है।

: ७ :

प्रान्तीय धारा-सभाओं के अधिकार

अधिकारों का विभाजन

फेडरेशन की किसी भी योजना के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि केन्द्र और प्रान्तो में अधिकारो का विभाजन स्पष्ट रूप से कर दिया जाय। जब कभी बहुत-से प्रान्त या छोटे-छोटे देश मिलकर एक केन्द्रीय सरकार को जन्म दें और साथ में अपना पृथक् अस्तित्व भी न खोना चाहे, तो ऐसा करना ही पड़ता है। हाँ, यदि वे प्रान्त या देश अपना पृथक् अस्तित्व खोकर एक प्रबल केन्द्रीय सरकार को जन्म दें, तब कोई दिक्कत नही आती; क्योंकि, उस हालत में, वे प्रान्त एक तरह से केन्द्रीय सरकार के सामने अपना समर्पण कर देते है। दक्षिण अफ़्रीका का यूनियन राज्य (Union of South Africa) इसकी एक मिसाल है। लेकिन जब विभिन्न प्रान्त अपने पृथक् अस्तित्व को न खोना चाहे, तो केन्द्रो और प्रान्त के अधिकारो का स्पष्ट रूप से बँटवारा करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, जब कनाडा के उपनिवेशो ने मिलकर एक केन्द्रीय फेडरल सरकार को जन्म दिया तो केन्द्रीय फेडरल सरकार और प्रान्तो के अधिकारो का स्पष्ट बँटवारा कर दिया गया। इसी प्रकार जब आस्ट्रेलिया के उपनिवेशो ने मिलकर केन्द्रीय फेडरल सरकार को जन्म दिया तो केन्द्र और प्रान्तो के अधिकारो का अलग-अलग बँटवारा कर दिया गया। फेडरल पद्धति की केन्द्रीय सरकार का एक मुख्य गुण वास्तव में यही होता है कि उसमें केन्द्र और प्रान्तो के अधिकार-क्षेत्रो को अलग-अलग बाँट दिया जाता है।

अधिकार-विभाजन का तरीका

भारत में यद्यपि अभी फेडरेशन कायम नही हुआ है, लेकिन ब्रिटिश भारत के प्रान्तो और केन्द्र के बीच अधिकारो का जो विभाजन किया गया है उसका आधार फेडरल ही है। इस दृष्टि से 'प्रान्तीय स्वराज्य' की योजना के अमल में आते ही केन्द्रीय सरकार का स्वरूप फेडरल सरकार का होगया है, चाहे नाम उसे फेडरल सरकार का न दिया गया हो। और चूंकि इस प्रकार के अधिकार-विभाजन में यह खास बात होती है कि यदि केन्द्र या प्रान्त में से कोई भी अपनी सीमा से बढकर एक-दूसरे के क्षेत्र में चला जाय तो फौरन मामला अदालतो में उठाया जा सकता है, ब्रिटिश भारत और देशी रियासतो का फेडरेशन स्थापित होने से पहले ही फेडरल कोर्ट की स्थापना करदी गई है।

'प्रान्तीय स्वराज्य' की स्थापना के पूर्व यह बात नही थी। पुराने गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के अन्तर्गत जारी किये अधिकार-विभाजक नियमो (Devolution Rules) के द्वारा विषयो का 'केन्द्रीय' और 'प्रान्तीय' इन दो सूचियो में तो पहले भी विभाजन किया हुआ था, लेकिन यदि केन्द्रीय धारा-सभा किसी प्रान्तीय विषय पर और प्रान्तीय धारा-सभा किसी केन्द्रीय विषय पर कानून बना देती तो इस सवाल को अदालतो में नही उठाया जासकता था।

निराला बंटवारा

ससार में अभीतक जितने फेडरेशन कायम हुए है उनमें अधिकार-विभाजन की या तो यह पद्धति अख्तियार की जाती है कि केन्द्रीय या फेडरल विषयो की एक सूची बना ली जाय और शेष सब विषय प्रान्तीय समझे जायें, या प्रान्तीय विषयो की सूची बनाकर शेष सब विषयो को केन्द्रीय अथवा फेडरल समझ लिया जाता है। आस्ट्रेलिया में इनमें से पहली और कनाडा में दूसरी पद्धति अख्तियार कीगई है। लेकिन गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के निर्माताओ ने

एक तीसरी ही पद्धति का अनुसरण किया है, जिसके अनुसार तीन सूचियाँ बनाई गई है । इनमें पहली सूची 'केन्द्रीय विषयो' की है, दूसरी 'प्रान्तीय विषयों' की, और तीसरी सूची ऐसे विषयो की है जो यद्यपि शासन की दृष्टि से तो प्रान्तीय ही रहेगे लेकिन केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओ को उनपर समान रूप से कानून बनाने का अधिकार रहेगा । इन सूचियो को हमने परिशिष्ट में क्रमशः 'केन्द्रीय सूची', 'प्रान्तीय सूची' और 'सम्मिलित सूची' का नाम दिया है ।[1]

जो विषय 'केन्द्रीय सूची' में शामिल किये गये है उनपर एकमात्र केन्द्रीय धारा-सभा को कानून बनाने का अधिकार होगा; जो विषय 'प्रान्तीय सूची' में शामिल किये गये है उनपर एकमात्र प्रान्तीय धारा-सभाओ को अपने-अपने प्रान्त के लिए कानून बनाने का अधिकार होगा, लेकिन जो विषय 'सम्मिलित सूची' में है उनपर केन्द्रीय और प्रान्तीय दोनो ही धारा-सभायें कानून बना सकेगी । दोनो के कानूनो में परस्पर-विरोध होने पर साधारणतया केन्द्रीय धारा-सभा का कानून ही श्रेष्ठ समझा जायगा; लेकिन प्रान्तीय धारा-सभा सम्मिलित सूची में रक्खे गये विषयो के बारे में कोई ऐसा कानून पास करे जो उसी विषय पर केन्द्रीय धारा-सभा द्वारा पास किये गये किसी क़ानून के ख़िलाफ हो लेकिन जिसे उस प्रान्त के गवर्नर के बजाय वाइसराय ने मंजूरी देदी हो, तो प्रान्तीय धारा-सभा वाला कानून ही श्रेष्ठ समझा जायगा । सम्मिलित सूची में आमतौर पर ऐसे विषय शामिल है जैसे कि दीवानी व फौजदारी कानून,

१ सम्मिलित सूची को भी दो भागो मे बाँटा गया है । इनमे से दूसरे भाग के विषयो के बारे मे केन्द्रीय धारा-सभा एक्ट पास करके उन विषयो के शासन मे प्रान्तीय सरकारो को आदेश देने का अधिकार केन्द्रीय सरकार को दे सकेगी ।

फैक्टरी-कानून, मजदूरो के झगडे, समाचारपत्र, छापेखानें और पुस्तको पर नियन्त्रण वगैरा। इसलिए यदि प्रान्तीय धारा-सभायें इन विषयो के बारे में बनाये गये केन्द्रीय कानूनो में परिवर्तन करना चाहेगी, तो उन्हे अपने बिलो की मञ्जूरी गवर्नर के बजाय वाइसराय से करानी पडेगी। उदाहरणार्थ, यदि प्रान्तीय धारा-सभायें किसानो वगैरा को कर्जों से मुक्त करने लिए क़ानून पास करेगी, तो उपयुक्त यही होगा कि उनकी मञ्जूरी वाइसराय से कराई जाय, अन्यथा अदालतो द्वारा उनके गैर-कानूनी घोषित किये जाने की सम्भावना रहेगी।

यद्यपि इस बात की खूब कोशिश कीगई है कि शासन-सम्बन्धी कोई विषय इन सूचियो में से छूट न जाय, फिर भी कुछ विषयो का छूट जाना या भविष्य में नये विषयो का पैदा हो जाना कुछ असम्भव नही है। ऐसी परिस्थिति के लिए एक्ट में यह तजवीज कीगई है कि जब कोई नया विषय उत्पन्न हो तो वाइसराय को घोषणा-पत्र द्वारा यह घोषणा करने का अधिकार होगा कि वह विषय केन्द्रीय धारा-सभा के अधिकार-क्षेत्र में रहेगा या प्रान्तीय धारा-सभाओ के।

वाइसराय पर दारोमदार

युद्ध और आन्तरिक विद्रोह के दिनो में वाइसराय घोषणा-पत्र द्वारा केन्द्रीय धारा-सभा को प्रान्तीय सूची में शामिल किये गये विषयो पर क़ानून बनाने का अधिकार भी दे सकेगा। लेकिन केन्द्रीय धारा-सभा को इस प्रकार के किसी भी कानून पर विचार करने का तबतक कोई अधिकार न होगा जबतक कि वाइसराय पहले मञ्जूरी न देवे।

धारा-सभाओं के अधिकारों पर पाबन्दी

यद्यपि आमतौर पर प्रान्तीय धारा-सभाओ को 'प्रान्तीय' और 'सम्मिलित' विषयो पर किसी प्रकार का भी कानून बनाने का पूर्ण

अधिकार होगा, लेकिन गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की कई धाराओ के अनुसार उनके इस अधिकार पर कई प्रकार की पाबन्दियाँ लगाई गई है।

एक्ट की धारा ११० उपधारा ब (२) के अनुसार कोई भी धारा-सभा ऐसा कोई क़ानून नही बना सकती जो गवर्मेण्ट ऑफ़ इण्डिया एक्ट या उसके मातहत जारी किये गये किसी आर्डर-इन-कौंसिल या भारत-मन्त्री द्वारा बनाये गये किसी नियम के विरुद्ध हो, या जो वाइसराय और गवर्नर द्वारा बनाये गये ऐसे नियमों के विरुद्ध हो जिनके बनाने में उन्होने 'अपनी मर्ज़ी' या 'अपने विवेक' से काम लिया हो। इस नियम का एक अपवाद है; वह यह कि प्रान्तीय धारा-सभा के सदस्यो की निर्वाचन-विधि के बारे में जो नियम गवर्नर ने 'अपने विवेक' के अनुसार बनाये हों, उनके विरुद्ध भी प्रान्तीय धारा-सभा को नियम बनाने का अधिकार होगा। निर्वाचन-विधि से यहाँ तात्पर्य निर्वाचन-सम्बन्धी ऐसी बातो से है जैसे कि निर्वाचनों में रगीन बाक्स-प्रणाली काम में लाई जाय या किसी और ढंग से मत डाले जायँ, मतदाताओ की सूचियाँ किस प्रकार तैयार की जायँ, आदि-आदि।

वर्जित कानून

एक्ट की धारा ११० उपधारा ब (१) के अनुसार कोई भी धारा-सभा ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती जो सम्राट् या उसके परिवार के किसी सदस्य पर किसी प्रकार लागू हो सके, या जो राजगद्दी के अधिकारों से सम्बन्ध रखता हो, या जो भारत के किसी भी भाग में स्थापित सम्राट् की सत्ता के प्रतिकूल हो। इसी उपधारा के अनुसार कोई भी धारा-सभा ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती जो ब्रिटिश पार्लमेण्ट द्वारा बनाये हुए इन कानूनों के विरुद्ध हो—(१) 'ब्रिटिश प्रजा' की परिभाषा से

सम्राट् की सत्ता

सम्बन्ध रखनेवाले कानून, (२) अंग्रेज फौजी अफसरो व सोल्जरो के नियन्त्रण व अनुशासन से सम्बन्ध रखनेवाले एक्ट, जो आमतौर पर आर्मी एक्ट, एयरफोर्स एक्ट और नेवल डिसिप्लिन एक्ट के नाम से प्रसिद्ध है; और (३) युद्ध के दिनो की सामुद्रिक लूट से सम्बन्ध रखनेवाले कानून ।

एक्ट की धारा ११० उपधारा ब (३) के अनुसार कोई भी धारा-सभा प्रिवी कौंसिल के इस प्राचीन अधिकार को नही छीन सकती कि वह किसी भी व्यक्ति को प्रिवी कौंसिल के सामने अपनी अपील पेश करने की विशेष रूप से अनुमति देदे, चाहे साधारण दशा में उस व्यक्ति को प्रिवी कौंसिल में अपील करने का कोई अधिकार धारा-सभाओ के कानून द्वारा न भी मिला हो ।

प्रिवीकौंसिल की सत्ता

एक्ट की धारा १११-१२१ के अन्तर्गत अंग्रेजो, अंग्रेज व्यापारियो व कम्पनियो, अंग्रेजी जहाजो और अंग्रेज डाक्टरो, वकीलो, बैरिस्टरो तथा अन्य पेशेवालो के हितो की रक्षा करने के लिए और उनके प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार को रोकने के लिए धारा-सभाओ के क़ानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकारो पर तरह-तरह की पाबन्दियाँ लगाई गई है। आदेशपत्रो द्वारा वाइसराय और गवर्नरो को यह भी आदेश किया गया है कि वे धारा-सभा के ऐसे किसी बिल को मजूर न करे। यदि वाइसराय और गवर्नर भूल से ऐसे किसी कानून को मजूर कर भी दें, और यदि उसकी धारायें गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की उपर्युक्त धाराओ के प्रतिकूल हो, तो अदालतो द्वारा वह कानून अमल में नही लाया जायगा ।

अंग्रेजो से सम्बन्धित कानून

एक्ट की धारा २९९ के अनुसार कोई भी धारा-सभा ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती, जिसके द्वारा बिना मुआवजा दिये ही सरकार

ज़मीदारो की ज़मीन छीन सके या और किसी व्यापारी या कम्पनी के कारोबार पर कब्ज़ा कर सके। यदि प्रान्तीय धारा-सभा मुआवज़ा देने के सिद्धान्त को भी मानले, तब भी इस प्रकार के किसी कानून पर प्रान्तीय धारा-सभा कोई विचार तबतक नही कर सकती जबतक कि गवर्नर पूर्व-अनुमति न देदे।

सम्पत्ति-हरण

एक्ट की धारा २९८ के अनुसार कोई भी धारा-सभा सम्राट् के भारत-निवासी किसी प्रजाजन को धर्म, जन्म-स्थान, वश या वर्ण के कारण सरकारी नौकरी करने या ब्रिटिश भारत में सम्पत्ति खरीदने, रखने और बेचने से, या ब्रिटिश भारत में और कोई नौकरी, पेशा या व्यापार करने से वञ्चित नही कर सकती।

एक्ट की धारा १०८ उपधारा २ के अनुसार निम्न प्रकार के बिलो और संशोधनो पर प्रान्तीय धारा-सभाओ में तबतक विचार भी नही होसकता जबतक कि वाइसराय की[1] पूर्व अनुमति न मिल जाय :—

वाइसराय की पूर्व-अनुमति

(१) जो ब्रिटिश भारत में लागू पार्लमेण्ट के किसी एक्ट में संशोधन करते हो या उसके विरुद्ध हो,

(२) जो वाइसराय के किसी एक्ट या आर्डिनेस में संशोधन करते हो या उसके विरुद्ध हो;

(३) जो ऐसे मामलो के बारे में क़ानून बनाते हो जो फेडरेशन स्थापित होने पर 'सुरक्षित विषय' समझे जायँगे—जैसे कि राष्ट्र-रक्षा, वैदेशिक विषय और सरकारी ईसाइयत विभाग वगैरा,

१ गवर्नर की पूर्व-अनुमति के बगैर किन-किन बिलो और सशोधनो पर विचार नही होसकता, इसका उल्लेख पहले गवर्नर के अधिकारो मे किया जा चुका है।

(४) जो ज़ाब्ता फौजदारी द्वारा यूरोपियन ब्रिटिश प्रजाजनो को दिये गये अधिकारो और रिआयतो को छीनते हो या उनमें कमी-बेशी करते हो।

गवर्नरो की पूर्व-अनुमति की भॉति वाइसराय की पूर्व-अनुमति का नियम भी केवल ज़ाब्ते के लिए है। लेकिन जिन बिलो पर विचार करने के लिए वाइसराय की पूर्व-अनुमति प्रान्तीय धारा-सभा को या उसके किसी सदस्य को गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की धाराओ के अनुसार लेना आवश्क है, उनके बारे में यह जानना जरूरी है कि यदि वाइसराय की पूर्व-अनुमति लिये बिना ही प्रान्तीय धारा-सभा ऐसे किसी बिल को पास करदे और गवर्नर उसको मंजूर करके एक्ट बनादे तो वह एक्ट ग़ैर-कानूनी ही समझा जायगा। ऐसे बिलो के लिए यह लाज़िमी है कि उनपर विचार करने के लिए पहले वाइसराय से अनुमति ली जाय, और यदि किसी कारण ऐसा न किया गया हो तो उन्हे बाद में गवर्नर द्वारा अपनी मजूरी या नामजूरी के बग़ैर वाइसराय के पास भेज दिया जाय। उदाहरणार्थ, एक्ट की धारा १०८ उपधारा २ के अनुसार यूरोपियन ब्रिटिश प्रजाजनो के ज़ाब्ता फौजदारी के अधिकारो से सम्बन्ध रखनेवाला कोई भी बिल प्रान्तीय धारा-सभा में वाइसराय की पूर्व-अनुमति बगैर पेश नहीं किया जा सकता, लेकिन यदि इस नियम के बावजूद प्रान्तीय धारा-सभा ऐसे किसी बिल को पास कर भी दे और गवर्नर उसे वाइसराय की मजूरी के बजाय स्वय मजूर करदे, तो उस हालत में वह एक्ट गैर-क़ानूनी ही समझा जायगा। अनुमान है कि ऐसी हालत में गवर्नर की मजूरी मिल जाने के बाद वाइसराय को भी यह अधिकार न होगा कि वह गवर्नर की मजूरी के अलावा अपनी मजूरी और देकर उस ग़लती को सुधार दे, क्योंकि नये एक्ट में किसी भी बिल को मंजूर करने का अधिकार एक

ही अधिकारी को दिया गया है—चाहे वह अधिकारी गवर्नर हो या वाइसराय अथवा सम्राट्।[1]

प्रान्तीय धारा-सभा के क़ानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकारो पर सबसे बडी पाबन्दी यह है कि गवर्नर, वाइसराय या सम्राट् की मंजूरी मिले बग़ैर कोई भी बिल एक्ट नही बन सकता। प्रान्तीय धारा-सभाओं के बिलो के सम्बन्ध में गवर्नरों के क्या अधिकार होगे, इनका वर्णन पहले किया जा चुका है। आमतौर पर 'सम्मिलित सूची' के विषयों से सम्बन्ध रखनेवाले प्रान्तीय धारा-सभा के उन बिलों के अलावा जो केन्द्रीय क़ानूनों के विरुद्ध हो, और 'सम्मिलित सूची' व 'प्रान्तीय सूची' दोनो के विषयो से सम्बन्ध रखनेवाले प्रान्तीय धारा-सभा के उन बिलों के अलावा जिनपर विचार करने के लिए गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की विभिन्न धाराओं के अनुसार वाइसराय की पूर्व-अनुमति लेना जरूरी थी लेकिन ली नहीं गई, गवर्नर प्रान्तीय धारा-सभाओ के सब बिलो को स्वयं मंजूर करके एक्ट बना सकता है। लेकिन, जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है, गवर्नर किसी भी बिल को खुद मंजूर करने के बजाय वाइसराय की मंजूरी के लिए भेज सकता है।

बिलो की मजूरी और नामजरी

१ जाब्ता फौजदारी मे सशोधन करनेवाले प्रान्तीय धारा-सभा के हरेक बिल को वाइसराय की मजूरी के लिए भेजना इस वजह से भी जरूरी है कि जाब्ता फौजदारी केन्द्रीय धारा-सभा का कानून है और नये एक्ट मे उसे 'सम्मिलित सूची' का विषय बनाया गया है। 'सम्मिलित सूची' के विषयो के बारे मे केन्द्रीय कानूनो के विरुद्ध पास किये गये प्रान्तीय धारा-सभा के एक्ट, जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है, तभी कानूनसम्मत माने जायँगे जब कि गवर्नर के बजाय खास वाइसराय द्वारा ही उनकी मजूरी दीगई हो।

इस प्रकार जब कोई भी बिल गवर्नर द्वारा वाइसराय की मजूरी के लिए भेजा जायगा तो एक्ट की धारा ७६ उपधारा १ के अन्तर्गत वाइसराय को भी 'अपनी मर्जी' से यह घोषणा करने का अधिकार होगा कि वह उस बिल को मंजूर करता है या नामंजूर, या वह उसे सम्राट् की मजूरी के लिए भेजना चाहता है। इसके अलावा वाइसराय उस बिल को 'अपनी मर्जी' से गवर्नर को इस आज्ञा के साथ भी लौटा सकता है कि गवर्नर उस बिल को धारा-सभा के भवनो में इस प्रार्थना के साथ भेज दे कि वह उसपर या उसकी कुछ खास धाराओ पर पुर्नविचार करे, या कि वह उसमें वे सशोधन मंजूर करले जो वाइसराय द्वारा सुझाये गये हो। इस प्रकार जब बिल प्रान्तीय धारा-सभा के भवनो में वापस आजायगा, तो उनका यह फर्ज होगा कि वे उसपर फिर विचार करे। धारा-सभा के भवनो में विचार होलेने के बाद उस बिल का वाइसराय की मंजूरी के लिए फिर भेजा जाना आवश्यक होगा।

वाइसराय के अधिकार

जो बिल वाइसराय द्वारा सम्राट् की मजूरी के लिए भेजे जायेंगे वे एक साल के अन्दर-अन्दर सम्राट् की मंजूरी मिलकर गजट में प्रकाशित न होगे तो गर्वमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की धारा ७६ उपधारा २ के फलस्वरूप एक्ट न बन सकेगे। एक साल का समय उस दिन से गिना जायगा जिस दिन कि वह बिल गवर्नर के पास उसकी मजूरी के लिए भेजा गया हो। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार वाइसराय द्वारा भेजे गये प्रान्तीय धारा-सभा के किसी भी बिल को एक साल की महज चुप्पी से मटियामेट कर सकेगी।

सम्राट् के अधिकार

किन्तु धारा ७७ के अन्तर्गत सम्राट् को निश्चित रूप से यह भी अधिकार दिया गया है कि प्रान्तीय धारा-सभा के किसी भी बिल को,

जो गवर्नर या वाइसराय की उपयुक्त मंजूरी मिलने पर एक्ट बन चुका हो, एक साल के अन्दर-अन्दर रद करदें । इस प्रकार एक्ट के रद करने का सम्राट् का निश्चय जब गवर्नर द्वारा गजट में प्रकाशित होजायगा, तो उस दिन से वह एक्ट रद समझा जायगा । इस सिलसिले मे यह लिखना अनुपयुक्त न होगा कि ब्रिटिश पार्लमेण्ट के सन् १९३१ के एक कानून (Statute of Westminster) द्वारा ब्रिटेन के स्वशासित उपनिवेशो मे सम्राट् के इस प्रकार के अधिकार का अन्त होचुका है ।

ब्रिटिश पार्लमेण्ट की सत्ता

अन्त में प्रान्तीय धारा-सभाओ के अधिकारो पर सबसे बडी पाबन्दी यह है कि ब्रिटिश पार्लमेण्ट जब चाहे तब एक्ट पास करके प्रान्तीय धारा-सभाओ के इन मर्यादित अधिकारो मे भी कमी करदे या इनके अस्तित्व को ही सदा के लिए मिटा दे । एक्ट की धारा ११० (अ) के अनुसार ब्रिटिश पार्लमेण्ट के इस मूल अधिकार में गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट के पास होजाने के कारण कोई फर्क नही आसकता ।

ज़ाब्ते की पाबन्दियाँ

उपर्युक्त पाबन्दियो के अलावा कई पाबन्दियाँ ज़ाब्ते की भी है ।

संयुक्त अधिवेशन

धारा ७४ के अनुसार कोई भी बिल तबतक पास हुआ नहीं समझा जायगा जबतक कि प्रान्तीय धारा-सभाओ के दोनो भवन उस बिल को एक ही रूप में पास न करदें । यदि दोनो भवन किसी बिल को एक ही रूप में पास न करे तो बिल पास हुआ नही समझा जायगा । ऐसे मतभेद को दूर करने के लिए एक्ट मे संयुक्त अधिवेशन की तजवीज रक्खी गई है । लेकिन संयुक्त अधिवेशन उसी हालत में बुलाया जासकता है जब कि लेजिस्लेटिव असेम्बली के पास किये हुए बिल को लेजिस्लेटिव कौंसिल पूरे एक साल तक पास न

करे। इस प्रकार लेजिस्लेटिव कौंसिल लेजिस्लेटिव असेम्बली के किसी भी बिल के मार्ग में एक साल तक रोड़ा अटका सकती है। संयुक्त अधिवेशन में ज्यादातर असेम्बली के पक्ष की ही विजय होने की सम्भावना है, लेकिन फिर भी एक साल तक असेम्बली के किसी भी बिल के मार्ग में रोडा अटकाने का कौंसिल का अधिकार कुछ कम नही है। ब्रिटिश सरकार ने पहले श्वेत-पत्र में एक साल के बजाय केवल तीन महीने का समय रक्खा था, लेकिन ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी को इससे सन्तोष न हुआ और उसकी सिफारिश पर पार्लमेण्ट ने उसे तीन महीने से बढाकर एक साल कर दिया।

सयुक्त अधिवेशन आम तौर पर मिनिस्टरो की सिफारिश पर ही बुलाया जासकेगा, लेकिन यदि गवर्नर यह समझे कि कोई बिल आय-व्यय सम्बन्धी मामलो से या उसकी 'ख़ास जिम्मेदारियो' से सम्बन्ध रखता है तो वह 'अपनी मर्ज़ी' से तत्काल दोनो भवनो का सयुक्त अधिवेशन बुला सकेगा।

सयुक्त अधिवेशन में बिल जिस रूप में पास होगा उसी रूप में वह गवर्नर या वाइसराय की मजूरी के लिए भेजा जायगा। इसके अलावा सयुक्त अधिवेशन में केवल उन धाराओ या सशोधनो पर ही विचार होसकेगा जिनपर कि दोनो भवनो में मतभेद हुआ हो। और चूंकि कौंसिल का अध्यक्ष ही सयुक्त अधिवेशन का सभापतित्व करेगा, उसे यह निश्चय करने का अधिकार होगा कि किन-किन धाराओ या सशोधनो पर विचार हो। यदि असेम्बली द्वारा पास किये हुए किसी बिल को कौंसिल ने बिलकुल ही रद कर दिया हो, तो सयुक्त अधिवेशन में केवल इस बात पर विचार होसकेगा कि बिल सयुक्त अधिवेशन को मजूर है या नहीं।

इस सम्बन्ध में इस बात को याद रखना चाहिए कि यदि लेजिस्ले-

टिव कौंसिल द्वारा पास किये हुए बिल को लेजिस्लेटिव असेम्बली रद करदे, या उसमें ऐसे संशोधन करदे जो लेजिस्लेटिव कौंसिल को मंजूर न हो, तो संयुक्त अधिवेशन की तजवीज काम में न लाई जासकेगी। इस दृष्टि से कानून-निर्माण सम्बन्धी कार्य में असेम्बली को कौंसिल से अधिक महत्त्व-पूर्ण स्थान दिया गया है।

बिलो का क्रम

धारा ७३ के अनुसार आय-व्यय सम्बन्धी बिल पहले लेजिस्लेटिव कौंसिल में पेश नही किये जासकेगे। उनके अलावा हर तरह के बिल किसी भी भवन में पहले पेश किये जासकते है।

असेम्बली भंग होने के समय जो-जो बिल असेम्बली में विचाराधीन होगे, या असेम्बली से पास होकर कौंसिल में विचाराधीन होगे, वे रद होजायँगे और उनपर पुन: विचार तभी होसकेगा जबकि उनके बारे में सारी कार्रवाई फिर शुरू से की जायगी। इस नियम का यह अभिप्राय हुआ कि यदि असेम्बली द्वारा पास हुए बिलो पर कौंसिल में विचार होरहा हो और इसी बीच में असेम्बली भंग होजाय, तो असेम्बली की वह सारी मेहनत बेकार हो जायगी; क्योंकि नया चुनाव होने के बाद नई असेम्बली जबतक उनको फिर से बाकायदा पास न करदे तबतक कौंसिल में उनपर विचार न होगा। इसके विपरीत कौंसिल के बिलो के बारे में यह नियम रक्खा गया है, कि जो बिल कौंसिल में विचाराधीन होगे और जो असेम्बली से पास न होचुके होगे वे असेम्बली भग होने पर रद नही होगे।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि ये नियम असेम्बली भंग होने की हालत में ही लागू होगे, उसके अधिवेशन भंग होने की हालत में नहीं। असेम्बली भंग होने और उसके अधिवेशन भंग होने में यह

अन्तर है कि असेम्बली के भग होने पर असेम्बली का नया चुनाव होता है, लेकिन असेम्बली का अधिवेशन भंग होने का केवल यह परिणाम होता है कि जबतक गवर्नर उसका अधिवेशन फिर से न बुलाये तबतक वह किसी भी मामले पर विचार नहीं कर सकती। इसी प्रकार असेम्बली का अधिवेशन स्थगित होने और अधिवेशन भंग होने में यह अन्तर है कि अधिवेशन स्थगित होने पर असेम्बली का अध्यक्ष उसे फिर बुला सकता है, लेकिन भंग होने पर केवल गवर्नर ही उसे फिर बुला सकता है, अलावा इसके, अध्यक्ष अधिवेशन को जब चाहे तब स्थगित कर सकता है, लेकिन उसे भंग गवर्नर ही कर सकता है।

आय-व्यय सम्बन्धी बिल और संशोधन

धारा ८२ के अनुसार प्रान्तीय धारा-सभा के किसी भी भवन में आय-व्यय सम्बन्धी कोई भी बिल या संशोधन तबतक नही पेश किया जा सकेगा जबतक कि गवर्नर की सिफारिश न हो। यहाँ गवर्नर से आमतौर पर अभिप्राय है मिनिस्टरो से। अर्थात् आय-व्यय सम्बन्धी कोई भी बिल आमतौर पर बिना मिनिस्टरो की मर्जी के पेश नहीं हो सकता। यह नियम ब्रिटिश कामन्स-सभा के उन नियमो की एक नकल है जिनके अनुसार वहाँ किसी भी गैर-सरकारी मेम्बर को आय-व्यय सम्बन्धी कोई बिल कामन्स-सभा मे पेश नहीं करने दिया जाता। इसकी वजह यह है कि इन मामलो के लिए मन्त्रि-मण्डल ही पुरी तरह से जिम्मेदार समझा जाता है। लेकिन ब्रिटेन और भारत की स्थिति में भारी अन्तर है। जहाँ ब्रिटेन में यह कामन्स-सभा का एक नियम-मात्र है, जिसे वह महज एक प्रस्ताव द्वारा अपनी नियमावली में से जब चाहे तब निकाल सकती है, भारत में इस नियम को कानून की शक्ल देदी गई है, जिसे प्रान्तीय धारा-सभा प्रस्ताव द्वारा तो क्या एक्ट पास करके भी नहीं पलट सकती।

धारा ८२ के अन्तर्गत निम्न प्रकार के बिलो और सशोधनो को आय-व्यय सम्बन्धी बिलो और सशोधनो की श्रेणी में शामिल किया गया है:—

(१) जिनके द्वारा कोई नया टैक्स लगाया जाय या पुराने टैक्स की दर में वृद्धि की जाय;

(२) जो इस बाबत हो कि प्रान्त किन तरीको से और किन हालतो में कर्ज़ा ले या किसी कर्ज़े की गारण्टी दे;

(३) जिनके द्वारा किसी खर्चे की रकम के लिए यह घोषणा की जाय कि भविष्य में उसके लिए असेम्बली की सालाना मजूरी की जरूरत नही रहेगी; और

(४) जिनके पास होजाने पर प्रान्तीय सरकार को लाजिमी तौरपर खर्चा बढ़ाना पडे ।

शासन-विभाग पर नियन्त्रण

कानून-निर्माण के अलावा धारा-सभा का दूसरा महत्वपूर्ण अधिकार शासन-विभाग पर नियन्त्रण रखना है । शासन-विभाग को नियन्त्रण में रखने के कई जरिये हैं । जैसे—

नियन्त्रण के जरिये

(१) प्रस्ताव पास करके शासन-विभाग अर्थात प्रान्तीय सरकार को कोई खास काम करने के लिए निर्देश देना । ये प्रस्ताव महज सिफारिश की शक्ल में होते हैं, और शासन-विभाग इनको मानने के लिए कानूनन बाध्य नही है ।

(२) प्रश्नो द्वारा शासन-विभाग का ध्यान जनता की शिकायतो की ओर आकृष्ट करना । यह सदस्यो का बहुत ही महत्वपूर्ण अधिकार है और इसके जरिये कई महत्वपूर्ण बातो पर प्रकाश डाला जासकता है ।

(३) कार्रवाई स्थगित करने के यानी 'काम रोको' प्रस्ताव । आजकल इनका रिवाज बहुत बढ़ता जारहा है । धारा-सभा के अधि-

वेशन के समय कोई विशेष घटना होजाने पर इस प्रकार के प्रस्ताव पेश किये जाते हैं। यदि मन्त्रि-मण्डल के विरोध के बावजूद इस प्रकार का प्रस्ताव पास होजाय, तो इसका अभिप्राय यह हुआ कि धारा-सभा का मन्त्रि-मण्डल पर विश्वास नहीं है। ऐसी हालत में मन्त्रि-मण्डल को अक्सर इस्तीफा देना लाज़िमी होजाता है।

(४) सीधे अविश्वास के प्रस्ताव द्वारा। यदि मन्त्रि-मण्डल में अविश्वास का प्रस्ताव पास होजाय, तो मन्त्रि-मण्डल को लाज़िमी तौरपर इस्तीफा देना पड़ता है।

(५) ख़र्चे की मदो में कमी करके या ख़र्चे के लिए मजूरी देने से इकार करके। यह वास्तव में धारा-सभा का सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है, जिसपर आगे 'प्रान्तीय राजस्व' वाले अध्याय में विस्तार से विचार किया जायगा।

शासन-विभाग को नियन्त्रण में रखने के जो ज़रिये ऊपर बताये गये हैं, उनके बारे में नियमोपनियम (Standing Orders) बनाने

नियम-निर्माण

का अधिकार धारा ८४ के अन्तर्गत प्रत्येक भवन को दिया गया है। जिन प्रान्तो में लेजिस्लेटिव कौंसिले है, उन प्रान्तो में दोनों भवनो के संयुक्त अधिवेशन के लिए और दोनो भवनो के पारस्परिक व्यवहार के लिए नियमोपनियम बनाने का अधिकार गवर्नर (अर्थात् मिनिस्टरो) को है, लेकिन पहले दोनो भवनो के अध्यक्षो से सलाह-मशवरा करना लाज़िमी है।

इन नियमोपनियमो के अलावा गवर्नर दोनो भवनो और उनके संयुक्त अधिवेशन के लिए 'अपनी मर्ज़ी' से भी नियम बना सकेगा। इन

गवर्नरो का अकुश

नियमो के फलस्वरूप प्रान्तीय धारा-सभाओ के भवनो में या उनके संयुक्त अधिवेशनो में गवर्नर के उन अधिकारो के बारे में, जिनके प्रयोग में उनको अपनी मर्ज़ी या

विवेक काम में लाने के लिए कहा गया है, कोई भी बहस तबतक नही होसकेगी जबतक कि गवर्नर अपनी मर्ज़ी से उसकी अनुमति न देदे। इन नियमो का दूसरा उद्देश्य यह है कि प्रान्तीय असेम्बली को सरकारी बजट पर लाज़िमी तौर से एक निश्चित काल के अन्दर ही विचार समाप्त कर देना पडेगा।

गवर्नर और धारा-सभाओ के नियमोपनियमो द्वारा लगाई गई पाबन्दियो के अलावा, खास एक्ट में भी कई धारायें ऐसी है जिनके द्वारा धारा-सभा के सदस्यों के शासन-विभाग पर नियन्त्रण रखने के अधिकारो को सीमित कर दिया गया है। जैसे, एक्ट की धारा ८४ (स) के अनुसार किसी भी भवन में देशी रियासतो से सम्बन्ध रखनेवाले किसी भी मामले पर कोई बहस तबतक नहीं होसकती और कोई प्रश्न तबतक नहीं पूछा जासकता जबतक कि (१) गवर्नर को यह विश्वास न होजाय कि यह मामला प्रान्तीय सरकार के या किसी ऐसे व्यक्ति के हितो से सम्बन्ध रखता है जो ब्रिटिश प्रजाजन है और आमतौर पर उसी प्रान्त में रहनेवाला है और (२) गवर्नर अपनी मर्ज़ी से उस मामले पर बहस करनें या प्रश्न पूछनें की अनुमति न दे।

सम्राट् (अर्थात ब्रिटिश सरकार) या गवर्नर-जनरल के विदेशो से या नरेशो से जो सम्बन्ध है, धारा ८४ द (१) के अनुसार, उनके बारे में कोई भी बहस किसी भी भवन में तबतक नहीं होसकती और कोई भी प्रश्न तबतक नहीं पूछा जासकता जबतक कि गवर्नर अपनी मर्ज़ी से अनुमति न देदे।

धारा ८४ द (२) के अनुसार कबीली इलाकों और बहिर्गत-क्षेत्रों के बारे में कोई भी बहस तबतक नहीं होसकती और कोई भी प्रश्न तबतक नहीं पूछा जासकता जबतक कि गवर्नर 'अपमी मर्ज़ी' से

अनुमति न देदे। लेकिन इनके बारे में धारा-सभा से खर्चे की मजूरी लीजाय तो वहस होसकेगी।

धारा ८४ द (३) के अनुसार किसी भी देशी रियासत के नरेश या उसके परिवार के किसी भी व्यक्ति के निजी आचरण के बारे में कोई भी वहस तबतक नही हो सकेगी और कोई भी प्रश्न तबतक नहीं पूछा जा सकेगा जबतक कि गवर्नर 'अपनी मर्जी' से अनुमति न दे दे।

धारा ८६ (१) के अनुसार फेडरल कोर्ट या हाईकोर्ट के किसी भी जज के उस आचरण के वारे में कोई भी वहस नही होसकेगी जो उसके सार्वजनिक कर्तव्य से सम्वन्ध रखता है।

धारा-सभाओ के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष

प्रत्येक लेजिस्लेटिव असेम्वली को आम चुनावो के बाद शीघ्र-से-शीघ्र एक स्पीकर (अध्यक्ष) और एक डिप्टी स्पीकर (उपाध्यक्ष) चुनना पडता है। स्पीकर और डिप्टी-स्पीकर असेम्वली के सदस्यो में से हो होने चाहिएं, उनमें से कोई यदि असेम्बली की सदस्यता से इस्तीफा देदे, तो वह स्पीकर या डिप्टी-स्पीकर नहीं रह सकता। लेकिन यदि वह चाहे तो स्पीकर या डिप्टी-स्पीकरी से इस्तीफा देकर भी असेम्वली का सदस्य वना रह सकता है। ये इस्तीफे प्रान्त के गवर्नर को ही दिये जाते है और स्पीकर या डिप्टी-स्पीकर की जगह खाली होने पर नया चुनाव करना पडता है।

असेम्वली या लोअर हाउस

स्पीकर या डिप्टी-स्पीकर के आचरण से यदि असेम्वली को असन्तोष हो, तो वह अविश्वास का प्रस्ताव पास करके उसे हटा सकती है। लेकिन इस प्रकार का प्रस्ताव पेश करने के लिए कम-से-कम १४ दिन पहले सूचना दी जानी चाहिए। अविश्वास के प्रस्ताव को अमल में

लाने के लिए गवर्नर की स्वीकृति की आवश्यकता नही है, जैसा कि मॉण्टफोर्ड-युग में होता था। इसी प्रकार स्पीकर का चुनाव होजाने पर गवर्नर की मंजूरी की जरूरत नही है।

स्पीकर की जगह खाली होने पर उसका काम डिप्टी-स्पीकर के जिम्मे रहता है, और अगर डिप्टी-स्पीकर की जगह भी खाली हो तो गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से असेम्बली के किसी एक सदस्य को तबतक स्पीकर का काम करने के लिए नियुक्त कर सकता है जबतक कि दुबारा चुनाव न होजाय। असेम्बली की बैठको में स्पीकर की अनुपस्थिति में वह व्यक्ति अध्यक्ष-पद लेनें का अधिकारी होता है जिसके बारे में असेम्बली के नियमोपनियमो में निर्देश किया गया हो। यदि वह व्यक्ति भी अनुपस्थित हो, तो असेम्बली उस बैठक के लिए नया अध्यक्ष चुन सकती है।

स्पीकर को आमतौर से असेम्बली में किसी प्रश्न पर मत देने का अधिकार नही है, लेकिन जब दोनो तरफ बराबर-बराबर मत हो तो वह अपना मत दे सकता है। स्वर्गीय पटेल ने अपना मत देते समय सदा इस नियम का पालन किया था कि उस पक्ष में ही मत दिया जाय जिसमें मत देनें से उस प्रश्न पर फिर विचार करने का मौका रहे।

असेम्बली भंग होजाने पर सब सदस्यो की सदस्यता ख़त्म हो-जाती है, लेकिन स्पीकर के लिए यह नियम रक्खा गया है कि जबतक नया चुनाव होकर नई असेम्बली की पहली बैठक शुरू न हो तबतक वह बराबर अध्यक्ष-पद का काम करता रहेगा।

असेम्बली के स्पीकर और डिप्टी-स्पीकर के वेतन और भत्ते नियत करने का अधिकार प्रान्तीय धारा-सभा को है और इसके लिए एक्ट पास करना जरूरी है। लेकिन इसका यह तात्पर्य नही कि एक्ट पास होजाने

पर ही वे अपने वेतन-भत्ते लेने के हकदार होजायँगे। प्रान्त के और खर्चे की भाँति इनके वेतन-भत्तो की मंजूरी भी हर साल असेम्बली से लेना जरूरी होगा।

जिस प्रकार लेजिस्लेटिव असेम्बली को अपना स्पीकर और डिप्टी स्पीकर चुनने का अधिकार है उसी प्रकार लेजिस्लेटिव कौंसिल को अपना प्रेसिडेण्ट और डिप्टी-प्रेसिडेंण्ट चुनने का अधिकार है। और ऊपर स्पीकर तथा डिप्टी-स्पीकर के बारे में जो नियम दिये गये है वैसे ही लेजिस्लेटिव कौंसिल के प्रेसिडेण्ट और डिप्टी-प्रेसिडेण्ट के बारे में समझने चाहिएँ। हाँ, दोनो भवनो के सयुक्त अधिवेशन में अध्यक्ष-पद लेने का अधिकार लेजिस्लेटिव कौंसिल के प्रेसिडेण्ट को ही दिया गया है।

कौंसिल या अपर हाउस

किसी भी धारा-सभा के अध्यक्ष का पद बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। यद्यपि उसके शासन-सम्बन्धी अधिकार कुछ ज्यादा नही होते, मगर चूँकि वह धारा-सभा की सारी कार्रवाई का सचालन करता है और जबतक उसे उस पद से हटा न दिया जाय तबतक उसके निर्णय मान्य होते है इसलिए उसका वास्तविक प्रभाव और महत्व कुछ कम नही होता।

अध्यक्ष-पद का महत्व

अध्यक्ष आमतौर पर दलबन्दी से अलग और निष्पक्ष समझा जाता है। लेकिन सयुक्तप्रान्त की असेम्बली के स्पीकर प० पुरुषोत्तमदास टण्डन ने इस नियम को लकीर के फकीर की तरह मानने से इकार करके एक नये सिद्धान्त को जन्म दिया है। आपने कहा है कि संयुक्तप्रान्तीय असेम्बली का स्पीकर चुना जाने पर यद्यपि मै पूर्णतया निष्पक्ष रहूँगा, लेकिन इसका यह तात्पर्य्य नही कि मै कॉंग्रेस से या कॉंग्रेस-पार्टी से अपना सम्बन्ध

टण्डनजी की रहनुमाई

तोड़ लूं। कॉंग्रेस मेरे लिए पहली चीज़ है और मैं उसकी सदा सेवा करता रहूँगा; और यदि ऐसा करने के कारण मैं अपने स्पीकर-पद के काम को निष्पक्षरूप से न निवाह सकूंगा, तो ख़ुशी से स्पीकर-पद से इस्तीफा देदूंगा।

टण्डनजी नें इस सिलसिले में अन्य प्रान्तो के स्पीकरो के सामने एक आदर्श और रक्खा है। वह यह कि जब कभी किसी नये कायदे को अपनाना होगा, तो आँख मूंदकर कामन्स-सभा के कायदो का अनुसरण नही करेंगे बल्कि अपने देश-कालानुसार कायदो को पहला स्थान देंगे।

धारा-सभाओं की भाषा

एक्ट की धारा ८५ के अनुसार प्रान्तीय धारा-सभाओ की सारी कार्रवाई अंग्रेजी भाषा में होनी चाहिए, लेकिन धारा-सभा के प्रत्येक भवन को यह अधिकार दिया गया है कि वह अपने नियमोपनियमो के जरिये उन सदस्यो को अन्य भाषाओ के प्रयोग का अधिकार देदे जो या तो अंग्रेज़ी भाषा से अनभिज्ञ हो या जो उसे अच्छी तरह न जानते हो।

एक्ट की इस धारा की व्याख्या पर प्रान्तीय धारा-सभाओ के भवनो में काफी वादविवाद रहा है और भिन्न-भिन्न प्रान्तो में काफी मतभेद भी है। संयुक्तप्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्बली के स्पीकर पं० पुरुषोत्तमदास टण्डन ने इस धारा की व्याख्या करते हुए प्रान्त की असेम्बली में यह रूलिंग दिया था कि इस धारा के अन्तर्गत वे ऐसे किसी सदस्य को, जो अंग्रेज़ी जानता भी हो, हिन्दुस्तानी में या और किसी भाषा में, जिसमें वह अच्छी तरह बोल सकता हो, बोलने की इजाज़त देसकते है। टण्डनजी के इस रूलिंग की लोगो ने तरह-तरह की आलोचना की है। संयुक्तप्रान्त के अंग्रेज़ी भाषा के एक दैनिक पत्र ने तो अपनी सम्पादकीय टिप्पणियो में यहाँ-

टण्डनजी का रूलिंग

तक लिख डालने की हिम्मत की थी कि टण्डनजी का यह रूलिंग एक्ट के विरुद्ध है और इसलिए कानून का भग करता है। लेकिन इस सम्बन्ध में यह जानना लाभदायक होगा कि भिन्न-भिन्न प्रान्तो के हाईकोर्ट कानून की व्याख्या करने के अपने अधिकार के प्रयोग में परस्पर-विरोधी फैसले देदेते है, लेकिन जबतक प्रिवी कौसिल उन फैसलो को न बदल दे या धारा-सभा नया एक्ट पास करके कानून में तब्दीली न करदे तबतक प्रान्तो में उस प्रान्त के हाईकोर्ट के फैसले ही मान्य समझे जाते है, चाहे वे एक-दूसरे के खिलाफ ही क्यो न हो। इसी प्रकार यदि भिन्न-भिन्न प्रान्तो की असेम्बलियो और कौंसिलो के अध्यक्ष अपने भवनो के नियमोपनियमो की व्याख्या करने के अधिकार के प्रयोग में परस्पर-विरोधी फैसले भी दें, तो भी तबतक वे फैसले मान्य होगे जबतक कि या तो असेम्बली या कौसिल ही उस निर्णय को न बदल दे या पार्लमेण्ट ही इस सम्बन्ध में और अधिक स्पष्ट कानून न पास करदे। संयुक्तप्रान्त की असेम्बली टण्डनजी के उपर्युक्त रूलिंग को प्रस्ताव पास करके मजूर कर चुकी है; अत किसी भी व्यक्ति का यह कहना कि टण्डनजी का यह रूलिंग कानून-विरुद्ध है, किसी भी प्रकार कानून-सगत नही कहा जासकता।

धारा-सभायें और अदालतें

एक्ट की धारा ८७ उपधारा १ के अनुसार किसी भी प्रान्तीय धारा-सभा की कार्रवाई को इस बिना पर कानून-विरुद्ध नही ठहराया जासकता कि उसने जाब्ते के अपने नियमोपनियमो का ठीक तरह से पालन नहीं किया है। वास्तव में इस उपधारा के फलस्वरूप अदालते धारा-सभाओ की कार्रवाई से सम्बन्ध रखनेवाले किसी मामले की तहकीकात भी नहीं कर सकतीं।

इसी धारा की उपधारा २ के मातहत प्रान्तीय धारा-सभा के वे अफसर, अध्यक्ष तथा अन्य सदस्य, जिन्हे एक्ट के अन्तर्गत धारा-सभा की कार्रवाई का संचालन करने के लिए और धारा-सभा में व्यवस्था क़ायम रखने के लिए अधिकार दिये गये है, अपने अधिकारों के प्रयोग में अदालतो के नियन्त्रण से मुक्त रहेगे। अर्थात् जबतक ये व्यक्ति अपने अधिकार-क्षेत्र में रहते हुए अपने अधिकारो का प्रयोग करेगे तब-तक अदालते इनके काम में दख़ल नही देसकती, चाहे अदालतो की सम्मति में इन अधिकारियों का कोई काम कानून या नियम के विरुद्ध ही क्यो न हो। अलबत्ता, यदि ये अधिकारी अपने अधिकार-क्षेत्र से ही बाहर चले जायँ, तो अदालतें दख़ल दे सकेगी; और सम्भवतः अदालतों को यह भी निर्णय करने का अधिकार होगा कि इन अधिकारियों का अधिकार-क्षेत्र कहाँतक है।

प्रान्तीय धारा-सभाओ के अधिकारो के इस विवरण से यह स्पष्ट है कि उनका अधिकार-क्षेत्र इतना मर्यादित है और उसपर इतने प्रति-बन्ध लगे हुए है कि उसके द्वारा नौकरशाही शासन पर कितना अंकुश लग सकेगा, यह कहना मुश्किल ही है।

: ८ :

प्रान्तीय राजस्व

सघ-शासन में राजस्व की समस्या

फेडरेशन या सघ-शासन की किसी भी योजना में केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारो के बीच सरकारी आय का विभाजन एक बहुत ही महत्वपूर्ण और मुश्किल सवाल है, क्योकि अपने अधिकारो के प्रयोग में एक-दूसरे से स्वतन्त्र दो भिन्न सत्तायें—अर्थात् केन्द्रीय सरकार और प्रान्तीय सरकारे—एक जन-समूह से ही अपनी आमदनी प्राप्त करती है और दोनो सत्ताओ के आमदनी प्राप्त करनें के अधिकार-क्षेत्रो को बिलकुल अलग-अलग बाँट देना सम्भव नहीं है। इसके अलावा, दोनो सत्ताओ के अधिकार-क्षेत्रो का विभाजन सम्भव भी हो तो, अक्सर यह दिक्कत पेश आसकती है कि दोनो फरीको की आय उनकी आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए काफी न हो, क्योकि दोनो की आवश्यकतायें एक-दूसरे के मुकावले में घटती-बढ़ती रहती है और सदा एकसी नही रहती। अत क्षेत्रो का विभाजन इस प्रकार करना कि दोनो की आवश्यकताओ के घटने-बढने के साथ-साथ उनकी आय में भी घटा-बढी होसके, वस्तुत बहुत मुश्किल काम है।

मॉण्टफोर्ड-विधान मे राजस्व की योजना

भारत में प्रान्तीय राजस्व की समस्या कोई नई नहीं है। यद्यपि कानूनी दृष्टि से मॉण्टफोर्ड-विधान में केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारो के पारस्परिक सम्बन्धो का आधार सघीय (फेडरल) नही था, किन्तु

केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों के बीच सरकारी आय का जो बँटवारा किया गया था उसका आधार व्यवहार में संघीय ही था। इसके अनुसार मालगुजारी, आबपाशी, स्टाम्प ड्यूटी, रजिस्ट्रेशन, आबकारी व जंगलात जैसे कुछ टैक्सों की पूरी आय प्रान्तीय सरकारो के सुपुर्द करदी गई थी और उन्हें यह अधिकार दिया गया था कि उनके जरिये वे अपनी आय में जितनी वृद्धि कर सके करले। इसी प्रकार आयात-निर्यात-कर, इनकमटैक्स, रेल, नमक, अफीम और डाक व तार जैसे कुछ टैक्सों की पूरी आय केन्द्रीय सरकार के सुपुर्द करदी गई थी। इसी सिद्धान्त को दोनो सरकारो के खर्चो के बारे मे भी लागू करके कुछ महकमो का सारा खर्चा प्रान्तीय सरकारो के और कुछ का केन्द्रीय सरकार के जिम्मे कर दिया गया था। लेकिन इससे प्रान्तो को न तो कुछ सन्तोष हुआ और न प्रान्तों में मार्के का कोई काम ही किया जा सका।

नये एक्ट की योजना

नये एक्ट मे इन सब समस्याओ को सुलझाने के लिए करों का विभाजन केन्द्रीय, प्रान्तीय और सम्मिलित विषयो के रूप में किया गया है। इन तीनों विषयो की अलग-अलग जो सूचियाँ दीगई है उनके अनुसार केन्द्रीय कर निम्न प्रकार है:—

केन्द्रीय व प्रान्तीय कर

१. आयात-निर्यात कर।

२. तम्बाकू पर और भारत में बनने व पैदा होनेवाले अन्य माल पर उत्पत्ति-कर अलावा (अ) शराब व अन्य मादक पेय, (ब) अफीम, भंग व दवाई की अन्य नशीली चीजों, व मादक द्रव्यो तथा (स) इन चीजो से बननेवाली दवाइयो और शृंगार के सामान पर उत्पत्ति-कर के।

३. कम्पनी—कारपोरेशनों पर टैक्स।

४. नमक-कर।

५. खेती की आमदनी के अलावा और सब आमदनियो पर कर।

६ खेती की जमीन के अलावा व्यक्तियो व कम्पनियो की कुल मिल्कियत पर टैक्स और कम्पनियो की पूँजी पर टैक्स।

७. खेती की जमीन के अलावा और सब सम्पत्ति पर उत्तराधिकार-कर।

८. हुण्डी, चैक, प्रामिसरी नोट, बिल्स ऑफ एक्सचेञ्ज, बिल्स ऑफ लेडिंग, लेटर्स ऑफ क्रेडिट, बीमे की पालिसी और रसीदो पर लगाये जाने वाले स्टाम्पो की आय।

९. रेल और हवाई जहाजो से चलनेवाले माल व मुसाफिरो पर टर्मिनल्स टैक्स, रेलो के भाडे पर टैक्स।

१० अदालतो की आमदनी के अलावा केन्द्रीय सूची में शामिल किये गये और सब विषयो की आमदनी।

प्रान्तीय कर निम्न प्रकार है:—

१. मालगुजारी।

२. प्रान्त में बनने या पैदा होनेवाली शराब, अन्य मादक पेय, अफीम, भग वगैरा और इन चीजो से बननेवाली दवाइयो व श्रृंगार-पदार्थों पर लगाये जानेवाले उत्पत्ति-कर, और इन्ही दरो पर या इनसे भी कम दरो पर भारत के अन्य प्रान्तो में बनने या पैदा होनेवाले माल पर बराबरी की वजह से लगाई जानेवाली चुंगियाँ।

३ खेती की आमदनी पर कर।

४. जमीन, इमारतो, चूल्हो व खिड़कियो पर कर।

५. खेती की जमीनपर उत्तराधिकार-कर।

६ खानो के हकदारो पर कर।

७. व्यक्तियो पर (Capitation) कर ।

८. पेशो, तिजारतों व नौकरियो पर कर ।

९. जानवरो व नावो पर कर ।

१०. माल की बिक्री और इश्तिहारो पर कर ।

११. खपत के लिए, काम में लेने के लिए, या बिक्री के लिए म्युनिसिपल क्षेत्रो में आनेवाले माल पर चुंगी ।

१२. विलासिता की चीजों—आमोद-प्रमोद, सट्टेबाजी व जुएबाजी पर कर ।

१३. उन दस्तावेजो के अलावा जिनका उल्लेख केन्द्रीय करों की सूची में किया जाचुका है, शेष दस्तावेजों पर लगाये जानेवाले स्टाम्पों की आय ।

१४. देशान्तर्गत जल-मार्गो से जाने-आनेवाले मुसाफिरो और माल पर टैक्स ।

१५. टौल-टैक्स (Tolls); जैसे तेह-बाजारी वगैरा ।

१६. अदालतो की आमदनी के अलावा, प्रान्तीय सूची व सम्मिलित सूची में शामिल किये गये किसी भी विषय की आमदनी ।

केन्द्रीय करो द्वारा प्रान्तो की सहायता

इस प्रकार आय का विभाजन करने पर पता चला कि कई प्रान्तीय सरकारें अपनी जिम्मेदारियों का साधारण तौर से भी पालन नही कर सकेंगी, और कई प्रान्तीय सरकारें यद्यपि साधारणतौर पर अपनी जिम्मेदारियो का पालन कर लेंगी मगर वे अपने प्रान्त को पूरी तरह उन्नत न कर पायँगी । इस कठिनाई को दूर करने के लिए एक्ट में कई प्रकार के प्रबन्ध किये गये ।

एक्ट की धारा १३७ द्वारा यह प्रबन्ध किया गया है कि यद्यपि (१)

खेती की जमीन के अलावा और सब सम्पत्ति पर उत्तराधिकार-कर, (२) उन दस्तावेजो की स्टाम्प-ड्यूटी जिनका उल्लेख केन्द्रीय करो की सूची में किया गया है, (३) रेल और हवाई जहाजो से जाने-आनेवाले माल व मुसाफिरो पर टर्मिनल टैक्स और (४) रेलो के किराये पर टैक्स की दर नियत करना और उनकी वसूली केन्द्रीय विषय ही समझे जायँगे, लेकिन इन टैक्सो की आय से जो बचत होगी उसमे से चीफ कमिश्नरो वाले प्रान्तो के हिस्से को निकालकर बाकी गवर्नरो वाले प्रान्तो में बाँट दी जायगी। किस प्रान्त को कितना हिस्सा मिलेगा, इसका निर्णय केन्द्रीय धारा-सभा एक्ट द्वारा करेगी। साथ ही केन्द्रीय धारा-सभा को यह भी अधिकार होगा कि वह केन्द्रीय सरकार की मदद के लिए इन टैक्सो की दर में वृद्धि करदे। इस प्रकार इन दरो में वृद्धि करने से आय में जो वृद्धि होगी, उसे केन्द्रीय सरकार अपने लिए रख सकेगी।

इसी प्रकार एक्ट की धारा १३८ उपधारा १ द्वारा इनकमटैक्स की आय को प्रान्तो में विभाजित किया गया है। इस धारा के अनुसार खेती की आमदनी के अलावा और सब आमदनियो पर जो टैक्स लगता है, उसकी दरे नियत करना और उसकी वसूली करने का काम रहेगा तो केन्द्र के ही जिम्मे, लेकिन इस टैक्स से जो आय होगी उसमें से चीफ कमिश्नरो के प्रान्तो का हिस्सा और वह आय निकालकर जो केन्द्रीय सरकार के अफसरो व कर्मचारियो के वेतन-भत्तो और पेंशनो पर टैक्स लगाने से होगी, जो आय बचेगी उसका एक 'नियत हिस्सा' प्रति वर्ष प्रान्तो को बाँट दिया जाया करेगा। साथ ही केन्द्रीय धारा-सभा को यह भी अधिकार होगा कि वह केन्द्रीय सरकार की सहायता के लिए टैक्स की दरो में वृद्धि करदे। इस प्रकार दरो में वृद्धि करने से आय में जो वृद्धि होगी उसे केन्द्रीय सरकार अपने लिए रख सकेगी।

उपर्युक्त उपधारा के अनुसार 'प्रान्तीय स्वराज्य' के प्रारम्भ से ही प्रान्तों को इनकमटैक्स की आय का कुछ हिस्सा मिल जाना चाहिए था, लेकिन उपधारा २ के अनुसार केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह चाहे तो एक 'नियत अवधि' तक प्रान्तो के लिए नियत किये गये सारे हिस्से को या उसमे से 'नियत किये गये' कुछ हिस्से को अपने लिए ही रखले । इस नियत अवधि के खत्म होजाने के बाद केन्द्रीय सरकार को वह हिस्सा लाजिमी तौरपर धीरे-धीरे हर साल एक 'दूसरी नियत अवधि' के अन्दर प्रान्तो को देदेना होगा ।

सर ओटो नीमियर की सिफारिशो के फलस्वरूप जो आर्डर-इन-कौंसिल सम्राट् ने इस धारा के मातहत जारी किया है उसमे इन हिस्सों को और अवधियो को नियत किया गया है ।[१] इसके अनुसार प्रान्तो को इनकमटैक्स की उस आय का आधा हिस्सा लेने का अधिकार होगा जो चीफ कमिश्नरो के प्रान्तो का हिस्सा और केन्द्रीय सरकार के कर्म-चारियो से होनेवाली आय को निकाल देने के बाद बचेगी । लेकिन प्रान्तीय स्वराज्य के प्रारम्भ होने के बाद ५ साल तक केन्द्रीय सरकार को प्रान्तो के हिस्से का उतना हिस्सा अपने पास रखने का अधिकार होगा

१ इनकमटैक्स से मिलनेवाली आय आर्डर-इन-कौंसिल के अनुसार विभिन्न प्रान्तो मे इस अनुपात से बॉटी जायगी —

प्रान्त	प्रतिशत	प्रान्त	प्रतिशत
मद्रास	१५	मध्यप्रान्त-बरार	५
बम्बई	२०	आसाम	२
बगाल	२०	पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	१
सयुक्तप्रान्त	१५	उडीसा	२
पजाब	८	सिन्ध	२
बिहार	१०		

कि जिसमें नीचे दी हुई दो रकमो को जोड़ने से कुल रकम १३ करोड होजाय :—

(१) केन्द्रीय सरकार को स्वतः मिलनेवाला आधा हिस्सा; और

(२) वह रकम जो रेलो की आय से केन्द्रीय सरकार को आमतौर पर सालाना मिला करती है।

अगर इस प्रकार १३ करोड का योग मिलाने के लिए केन्द्रीय सरकार प्रान्तो के पूरे आधे हिस्से को भी अपने पास रखना चाहे तो रख सकेगी। ५ साल के बाद फिर दूसरे ५ साल में केन्द्रीय सरकार प्रान्तो के हिस्से को धीरे-धीरे देना शुरू करेगी। वह इस प्रकार कि, फर्ज कीजिए, पहले ५ साल के आखिरी साल में केन्द्रीय सरकार ने प्रान्तो के आधे हिस्से में से ६ करोड़ रुपया अपने लिए रख लिया, तो दूसरे ५ साल के पहले साल में वह केवल ५ करोड, दूसरे साल में ४ करोड़, तीसरे साल में ३ करोड, चौथे साल में २ करोड और पॉचवे साल में केवल १ करोड रुपया अपने लिए रख सकेगी। अर्थात् दूसरे पाँच सालो में केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारो के हिस्से में से हरसाल उतना ही हिस्सा रक्खेगी जो पिछले साल रक्खे गये हिस्से से $\frac{1}{6}$ कम हो। इस प्रकार इन दूसरे पाँच सालो के बाद केन्द्रीय सरकार को प्रान्तीय सरकारो वाले हिस्से में से कुछ भी रखने का अधिकार न होगा, लेकिन उपधारा २ में गवर्नर-जनरल को यह अधिकार दिया गया है कि वह दूसरे पाँच साल में किसी साल यह हुक्म जारी करदे कि उस साल केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारो के हिस्से में से उतना ही हिस्सा पास रख सकेगी जितना कि पिछले साल उसने रक्खा था। इस प्रकार गवर्नर-जनरल इस पाँच साल की अवधि को जितना चाहे बढ़ा सकेगा।

केन्द्रीय सूची के अनुसार यद्यपि नमक-कर, केन्द्रीय उत्पत्ति-कर और

निर्यात-करों की दरो का नियत करना व उनकी वसूली का अधिकार केन्द्रीय सरकार को ही होगा; लेकिन धारा १४० उपधारा १ के अनुसार केन्द्रीय धारा-सभा को यह अधिकार होगा कि वह चाहे तो इन करो की आय को या उसके कुछ हिस्से को एक्ट पास करके प्रान्तो मे विभाजित करदे। लेकिन जहाँ इन सब करो की आय का प्रान्तो में विभाजन केन्द्रीय धारा-सभा की मर्जी के ऊपर है, इसी धारा की उपधारा २ के मातहत सर ओटो नीमियर की सिफारिश से जारी किये गये आर्डर-इन-कौंसिल के अनुसार जूट के निर्यात-कर का ६२½ प्रतिशत उन प्रान्तो में बाँट देना लाज़िमी होगा जिनमें कि जूट पैदा होता है। इसका मुख्य उद्देश्य बंगाल, आसाम व बिहार जैसे उन प्रान्तो की सहायता करना है जिनमें जूट बहुतायत से पैदा होता है।

धारा १४२ के अन्तर्गत सम्राट् को आर्डर-इन-कौंसिल द्वारा यह निश्चय करने का अधिकार है कि केन्द्रीय सरकार की आय से किन खास-खास प्रान्तो को सहायता दी जानी चाहिए। सर ओटो नीमियर की सिफारिश पर जो आर्डर-इन-कौंसिल इस बारे में पास हुआ है उसके अनुसार निम्न प्रान्तो को इस प्रकार सहायता दी जाया करेगी:—

खास-खास प्रान्तो की सहायता

१. संयुक्तप्रान्त को प्रान्तीय स्वराज्य के पहले पाँच सालो में—हर साल २५ लाख रुपया।

२. आसाम को हर साल ३० लाख रुपया।

३. पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त को हर साल १ करोड़ रुपया।

४. उडीसा को प्रान्तीय स्वराज्य के पहले साल में ४७ लाख रुपया; फिर अगले चार सालों में हर साल ४३ लाख रुपया; और फिर हर साल ४० लाख रुपया।

५ सिन्ध को प्रान्तीय स्वराज्य के पहले साल में १ करोड १० लाख रुपया, अगले ९ सालो में हर साल १ करोड ५ लाख रुपया; फिर अगले २० सालो में हर साल ८० लाख रुपया, उससे आगे के पाँच सालो में हर साल ६५ लाख रुपया; फिर अगले पाँच सालो में हर साल ६० लाख रुपया, और उससे अगले ५ सालो में हर साल ५५ लाख रुपया।

गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की उपर्युक्त योजना के फलस्वरूप प्रान्तो को अपने राष्ट्र-निर्माणकारी कार्यो के लिए कहाँतक रुपया प्राप्त हो-सकेगा, यह ठीक-ठीक कहना अभी सम्भव नही है। फिर भी यह जानना जरूरी है कि धारा १४२ के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न प्रान्तो को जो सहायता दी गई है उससे केवल उस घाटे की ही पूर्ति होसकेगी जो मोजूदा मामूली खर्च के कारण उन प्रान्तो के बजट में सालाना होता है, इस सहायता के फलस्वरूप ये प्रान्त किसी विशेष कार्य के लिए रुपया निकाल सकेगे ऐसा सम्भव नही दिखाई देता। दूसरे जिन प्रान्तो को जूट के निर्यात-कर का कुछ हिस्सा मिलेगा उनकी आर्थिक स्थिति में उनसे भी कोई विशेष अन्तर नही पडेगा, क्योकि जूट-कर की सालाना आय मय खर्चे के लगभग ३½ करोड़ से ज्यादा नही है।[1] तीसरे इनकमटैक्स की आय का जो हिस्सा प्रान्तो को मिलेगा वह १० साल बाद भी लगभग ६ करोड से ज्यादा नही होगा, और फिर उसे ११ प्रान्तो में बाँटा जायगा। इन १० सालो से पहले प्रान्तो को इनकमटैक्स का कोई ख़ासा हिस्सा मिल सकेगा, इसकी ज्यादा उम्मीद नहीं, क्योकि रेलो की आर्थिक स्थिति में कोई आशाजनक उन्नति अभीतक नही हुई है।

१. अनुमान लगाया गया है कि जूट निर्यात-कर से सालाना बगाल को लगभग २ करोड, बिहार को १२ लाख, आसाम को ११ लाख और उडीसा को १ लाख रुपये की सहायता मिल जाया करेगी।

अक्सर यह भी कहा जाता है कि यदि प्रान्तों को केन्द्रीय सरकार से ज्यादा मदद न भी मिले तो क्या है, प्रान्तीय सरकारे अपनी आय नये-नये टैक्सो के जरिये काफी बढ़ा सकती है और उन्हे इसके लिए एक्ट में काफी अधिकार दिये गये है। इसके जवाब मे यह जानना जरूरी है कि हिन्दुस्तान वैसे ही गरीब देश है; उसकी आय का बहुत बड़ा हिस्सा प्रतिवर्ष विदेशो को और खासकर इग्लैण्ड को विदेशी माल के बदले मे और होम-चार्जेज (Home charges) के रूप में चला जाता है; इसलिए यहाँ टैक्सो के बढ़ाने की ज्यादा गुँजाइश नही है। जहाँतक खेती पर निर्भर रहनेवाले लोगो का सवाल है, कई प्रख्यात अर्थ-शास्त्रियो का तो मत है कि उनपर आजकल ही गुँजाइश से ज्यादा टैक्स लगा हुआ है। इसलिए मालगुजारी से तो प्रान्तो की आय में कुछ वृद्धि होने की सम्भावना ही नही है; उलटे और भी कमी होजाय तो कुछ ताज्जुब नही। रही उत्तराधिकार-कर व खेती की आमदनी के टैक्स की बात, सो इनसे जरूर सरकारी आय में वृद्धि होसकती है, लेकिन वर्तमान आर्थिक मन्दी को देखकर इनसे भी ज्यादा आय होने की उम्मीद नही है। आबकारी की आमदनी मद्य-निषेध की नीति के कारण बढ़ने के बजाय कुछ सालों में बिलकुल बन्द ही होजाय तो आश्चर्य नही। जंगलात, स्टाम्प, कोर्ट-फीस व रजिस्ट्री द्वारा भी प्रान्तो की आय मे कोई विशेष वृद्धि होने की सम्भावना नही है। शेष टैक्स लगभग सब ऐसे है जिनकी आय म्यूनिसिपैलिटी, जिला बोर्ड आदि संस्थाओ को सौंप दीजाती है।

क़र्ज़ा लेने के अधिकार

मॉण्टफोर्ड-सुधारो से पहले किसी भी प्रान्त की सरकार को स्वतन्त्र रूप से कर्जा लेने का अधिकार नही था। उन्हे जब कभी कर्जे की जरूरत

होती थी तो केन्द्रीय सरकार ही भारत की साख पर कर्जा लेती थी, और फिर वह खुद प्रान्तीय सरकारो को कर्जा देती थी। मॉण्टफोर्ड-सुधारो के फलस्वरूप प्रान्तीय सरकारो को पहली वार स्वतन्त्र रूप से कर्जा लेने का अधिकार दिया गया। लेकिन यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रान्तीय सरकारो के इस अधिकार पर गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट और अधिकार-विभाजक नियमो (Devolution Rules) के द्वारा इतने प्रति-वन्ध लगा दिये गये थे कि सम्पन्न प्रान्तो की सरकारो ने भी स्वतन्त्र रूप से कर्जा लेने के वजाय भारत-सरकार के जरिये कर्जा लेना ही वेहतर समझा। नये एक्ट में प्रान्तीय सरकारो के कर्जा लेने के अधिकारो में काफी वृद्धि कीगई है। ये अधिकार प्रान्तो को एक्ट की धारा १६३ के अनुसार मिले हैं, जिसकी भिन्न-भिन्न उपधाराओ का हम यहाँ वर्णन करेगे।

उपधारा १ के अनुसार प्रान्तीय सरकारे अपने प्रान्त की आय की जमानत पर कर्जा लेसकती है, लेकिन प्रान्तीय धारा-सभा को एक्ट पास करके यह निश्चय करने का अधिकार होगा कि किस हद तक कर्जा लिया जाय; इसी प्रकार प्रान्तीय सरकारे अपने प्रान्त की म्यूनिसि-पैलिटियो वगैरा के कर्जों के वारे में भी अपनी जमानते देसकेगी, लेकिन प्रान्तीय धारा-सभा को एक्ट पास करके यह निश्चय करने का अधिकार होगा कि प्रान्तीय सरकार किस हद तक जमानत देसकेगी।

उपधारा २ के अनुसार केन्द्रीय सरकार अपनी शर्तो पर प्रान्तीय सरकारो को कर्जा देसकेगी और प्रान्तीय सरकारो के कर्जे के वारे में जमानत भी देसकेगी; लेकिन केन्द्रीय धारा-सभा को एक्ट पास करके यह निश्चय करने का अधिकार होगा कि किस हद तक प्रान्तीय सरकारो के कर्जे की जमानत दीजाय। प्रान्तीय सरकार के जिन कर्जो की जमानत केन्द्रीय सरकार देगी उनकी प्रान्तीय सरकार से वसूली न होनें

पर कर्ज देनेवाले केन्द्रीय सरकार से भी उन्हे वसूल कर सकेंगे। केन्द्रीय सरकार जो कर्ज प्रान्तीय सरकारो को देगी उनके लिए केन्द्रीय धारा-सभा की मंजूरी लेने की जरूरत नही होगी।

उपधारा ३ के द्वारा प्रान्तीय सरकारों के कर्जा लेने के अधिकारो पर दो पाबन्दियाँ लगाई गई है। कोई भी प्रान्तीय सरकार केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति के बिना (१) भारत के बाहर किसी भी हालत में कर्जा नही लेसकती; और (२) भारत में भी कोई कर्जा नही लेसकती, यदि वह केन्द्रीय सरकार की कर्जदार हो या उसने अपने उस कर्ज को न चुका दिया हो जिसके लिए केन्द्रीय सरकार ने जमानत दी हो। यही नही बल्कि, इस उपधारा के अन्तर्गत, केन्द्रीय सरकार को यह भी अधिकार होगा कि वह प्रान्तीय सरकारो को भारत में या भारत के बाहर कर्जा लेने की स्वीकृति उस हालत में दे जबकि प्रान्तीय सरकारें उसकी शर्तों को मंजूर करले।

उपधारा ४ के द्वारा प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि यदि केन्द्रीय सरकार उपधारा २ के अन्तर्गत प्रान्तीय सरकारों को कर्जा देने से इंकार करदे, या उपधारा ३ के अन्तर्गत प्रान्तीय सरकारों को भारत में या भारत के बाहर कर्जा लेने की अनुमति न दे, या उनपर ऐसी शर्तें लगादे जो न्यायसंगत न हों, तो वे इस बात की शिकायत वाइसराय से करे। इस सम्बन्ध में वाइसराय 'अपनी मर्जी' से जो फैसला करेगा वही अन्तिम समझा जायगा।

उपर्युक्त उपधाराओ से यह स्पष्ट है कि नये विधान में भी प्रान्तीय सरकारो को कर्जा लेने के मामलो में केन्द्रीय सरकार और वाइसराय की मर्जी पर काफी निर्भर रहना पडेगा; क्योंकि एक तो कई प्रान्त पहले से ही भारत-सरकार के कर्जदार है, दूसरे प्रान्तो में वास्तविक उन्नति

करने के लिए इतनी पूँजी की जरूरत होगी कि प्रान्तीय सरकारो को अपनी निज की साख पर उतना कर्जा भी तबतक नही मिल सकेगा जब-तक कि भारत-सरकार भी जमानत न दे, और तीसरे कई नये और निर्बल प्रान्तो को निज की साख पर कर्जा ही मुश्किल से मिलेगा और उन्हे भारत-सरकार के जरिये ही अपने कर्जे लेने होगे।

प्रान्तीय सरकारों के बजट

प्रान्तीय सरकार के बजट को तैयार करने का काम आमतौर पर उस प्रान्त के फाइनेस मिनिस्टर यानी अर्थ-मत्री का है, लेकिन एक्ट की धारा ७८ उपधारा १ में इस सम्बन्ध मे गवर्नर शब्द का प्रयोग किया गया है और कहा गया है कि गवर्नर का यह कर्त्तव्य होगा कि वह प्रान्तीय सरकार के बजट को हर साल प्रान्तीय धारा-सभा के भवन या भवनो में पेश कराये। मगर यह बात स्पष्ट है कि चूंकि गवर्नर स्वयं धारा-सभा के किसी भी भवन का सदस्य नही है, वह अपनें इस कर्त्तव्य को मिनिस्टरो के जरिये ही पूरा कर सकता है।

खर्चों के भेद

उपधारा २ के अनुसार गवर्नर को इस बात का निर्देश किया गया है कि बजट में खर्चे का जो अन्दाज लगाया जाय उसमें पहले तो यह भेद किया जाय कि कौनसा ख़र्चा प्रान्तीय सरकार की आय से किया जायगा और कौनसा कर्जा वगैरा लेकर। इसके अलावा उस अन्दाज में यह भेद करना भी जरूरी होगा कि उनमें कौनसा खर्च ऐसा है जिसको एक्ट में 'प्रान्तीय सरकार की आय से वसूल किया जानेवाला खर्चा' (i e expenditure charged on the revenues of the Province) करके घोषित किया गया है और कौनसा ख़र्चा ऐसा है जो शेष कामो में ख़र्च होगा। इसके अलावा यदि बजट सम्बन्धी प्रस्तावो पर गवर्नर और मिनिस्टरो में मतभेद

होजाय तो गवर्नर को मिनिस्टरो को यह आदेश देने का भी अधिकार होगा कि वे वजट में उन मदों को भी शामिल करले जिनको कि गवर्नर अपनी 'खास ज़िम्मेदारियो' की पूर्त्ति के लिए आवश्यक समझता हो। इस प्रकार शामिल कीगई मदो को भी वजट में और मदो से अलग दिखाया जायगा।

उपधारा ३ में उन मदो की एक सूची दीगई है जिनपर किया जानेवाला खर्चा 'प्रान्त की आय से वसूल किया जानेवाला खर्चा' समझा जायगा। इसका वास्तविक अभिप्राय यहाँ स्पष्ट कर देना आवश्यक है। मॉण्टफोर्ड-विधान में भी प्रान्तीय सरकार के खर्चों को (१) नान-वोटेड (Non-voted) और (२) वोटेड (Voted) इन दो भागो में बॉटा गया था। इनमें 'नान-वोटेड' खर्चे के लिए धारा-सभा का मत लेना जरूरी नही था और 'वोटेड' खर्चे के लिए प्रान्तीय धारा-सभा का मत लेने की जरूरत होती थी। प्रान्तो के इस 'नान-वोटेड' खर्च को नये एक्ट में 'प्रान्त की आय से वसूल किया जानेवाला खर्चा' नाम दिया गया है। इसका अभिप्राय, जैसा कि धारा ७९ में स्पष्ट किया गया है, यह है कि इन खर्चों के लिए प्रान्तीय धारा-सभा की मंजूरी लेना जरूरी नही है।

प्रान्त की आय से वसूल होनेवाले खर्चे

उपधारा ३ के अनुसार निम्न मदो के खर्चे प्रान्त की आय से वसूल किये जानेवाले खर्चे समझे जायँगे :—

(१) गवर्नर के वेतन-भत्ते और उसकी शान-शौकत के लिए किय जानेवाले वे सब खर्चे जो आर्डर-इन-कौंसिल द्वारा निश्चित किये गये है;

(२) प्रान्तीय सरकार के कर्ज़ों से सम्बन्ध रखनेवाले सब खर्चे,

(३) मिनिस्टरो और एडवोकेट-जनरल के वेतन-भत्ते;

(४) हाईकोर्ट के जजो के वेतन-भत्ते;

(५) वहिर्गत-क्षेत्रो के शासन में किये जानेवाले सब ख़र्चे, और

(६) वे खर्चे जो किसी अदालत या पच के फैसले या डिक्री पर अमल करने के लिए करने जरूरी हो।

उपर्युक्त मदो के अलावा एक्ट की और कई धाराओ में भी जगह-जगह इस वात का उल्लेख किया गया है कि और किन-किन मदो का खर्चा प्रान्त की आय से वसूल किया जासकेगा। इनमें मुख्य है (१) गवर्नर के निजी कर्मचारियो के वेतन-भत्तो सहित उसके निजी दफ्तर का सव ख़र्चा; (२) हाईकोर्ट का सब ख़र्चा; और (३) ऑल-इण्डिया सर्विस वाले तथा अन्य कुछ प्रान्तीय कर्मचारियो के वेतन-भत्ते वगैरा।

उपधारा ३ के अन्तर्गत प्रान्तीय धारा-सभा को यह अधिकार दिया गया है कि वह और मदो के ख़र्चो को भी एक्ट पास करके 'प्रान्त की आय से वसूल किये जानेवाले ख़र्चो' की सूची में डालदे। लेकिन कोई भी धारा-सभा इस प्रकार खुद ही अधिकार छोडने के लिए तैयार होगी, इसकी उम्मीद करना व्यर्थ मालूम होता है; क्योकि कोष पर नियन्त्रण रखने का अधिकार आजकल धारा-सभा के सब अधिकारो में मुख्य समझा जाता है।

अगर कभी इस वात पर मतभेद होजाय कि कोई प्रस्तावित ख़र्चा 'प्रान्त की आय से वसूल किये जानेवाले खर्चो' की श्रेणी में आता है या नहीं, तो धारा ७८ की उपधारा ४ के अनुसार गवर्नर 'अपनी मर्ज़ी' से जो फैसला करे वही मान्य होगा।

प्रान्त की आय से वसूल किये जानेवाले ख़र्चो के वारे में यह लिखना जरूरी है कि इस तरकीव से ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने प्रान्तीय सरकारो की आय के एक वहुत वडे भाग को धारा-सभाओ के नियन्त्रण

से निकालकर उनके अधिकारो पर बिलकुल पानी ही फेर दिया है।
यह सच है कि इंग्लैण्ड आदि देशो में भी इस प्रकार कुछ मदो के खर्चों के लिए पार्लमेण्ट की सालाना मंजूरी की जरूरत नही होती; लेकिन वहाँ एक तो इस प्रकार की मदो की सूची ही बहुत छोटी है, और दूसरे उनका खर्चा कुल आय का एक बहुत ही छोटा हिस्सा होता है। उदाहरणार्थ, इंग्लैण्ड मे या तो सम्राट् के, या सरकारी कर्जे से सम्बन्ध रखनेवाली मदो के, या उच्च जजो के वेतन-भत्तो की मदो के खर्च के लिए पार्लमेण्ट की सालाना मंजूरी लेने की जरूरत नही होती। बाकी पाई-पाई के खर्चे के लिए पार्लमेण्ट से मजूरी लीजाती है।'

एक्ट की धारा ७९ उपधारा १ मे कहा गया है कि प्रान्त की आय से वसूल किये जानेवाले खर्चे के लिए प्रान्तीय धारा-सभा की मंजूरी की जरूरत नही होगी; लेकिन इसका यह मतलब नही कि धारा-सभा के भवन इन खर्चों के बारे में बहस या विचार-विमर्श भी नही कर सकते। हॉ, गवर्नर के वेतन-भत्तो वाली मद के ऊपर धारा-सभा के किसी भी भवन में कोई वादविवाद भी न होसकेगा।

बहस पर भी पाबन्दी

उपधारा २ में कहा गया है कि शेष सब खर्चो के लिए केवल प्रान्त की लेजिस्लेटिव असेम्बली की मंजूरी लीजायगी और लेजिस्लेटिव असेम्बली को इन खर्चो को मंजूर या नामंजूर करने और इनमें काट-

१ सयुक्तप्रान्त की सरकार के सन् १९३७-३८ के बजट के ऑकडो को देखने से पता चलता है कि इस वर्ष की लगभग २४ करोड ७७ लाख की आय मे लगभग ११ करोड ४० लाख का यानी ४६ प्रतिशत खर्चा ऐसा था जो 'प्रान्त की आय से वसूल किया जानेवाला' होने की वजह से प्रान्तीय धारा-सभा की मजूरी के लिए नही पेश किया गया।

छाँट करने का अधिकार होगा। लेकिन प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल को बजट पर केवल आम बहस करने का ही अधिकार होगा, उसमें काट-छाँट करने का उसे कोई अधिकार न होगा।

असेम्बली व कौंसिल

उपधारा ३ में कहा गया है कि खर्चे की किसी भी मद को गवर्नर की सिफारिश के बगैर असेम्बली में मजूरी के लिए पेश नही किया जायगा। इस उपधारा में केवल 'गवर्नर' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अभिप्राय है कि मिनिस्टर ही किसी ख़र्चे के लिए असेम्बली में माँग पेश कर सकते हैं। साधारण सदस्यो को यह प्रस्ताव करने का अधिकार न होगा कि अमुक-अमुक विषय पर इतना रुपया ख़र्च किया जाय। हाँ, वे चाहे तो अपने असन्तोष को खर्चे की माँग में 'कटौती के प्रस्ताव' पेश करके जाहिर कर सकते हैं।

एक्ट की धारा ८० उपधारा १ में कहा गया है कि असेम्बली द्वारा बजट पास होजाने के बाद गवर्नर फिर उसपर अपने हस्ताक्षर करेगा, लेकिन ऐसा करते समय वह अपनी किसी खास जिम्मेदारी की पूर्त्ति के लिए आवश्यक समझे तो उन मदो को फिर बहाल कर सकेगा जिन्हे असेम्बली ने नामजूँर कर दिया हो या जिनमें असेम्बली ने काट-छाँट करदी हो।

बजट को बहाल करने का अधिकार

उपधारा २ में कहा गया है कि गवर्नर के हस्ताक्षर-सहित बजट फिर असेम्बली के सामने रक्खा जायगा, लेकिन वह उसपर न तो बहस कर सकेगी और न उसमें कोई काट-छाँट ही कर सकेगी। उपधारा ३ में कहा गया है कि प्रान्त की आय से किया जानेवाला कोई भी खर्चा तबतक बाजाब्ता नहीं माना जायगा जबतक कि इसका उल्लेख गवर्नर के हस्ताक्षर वाली बजट की प्रति में न हो।

धारा ८१ में कहा गया है कि यदि किसी साल के अन्दर प्रान्त की आय में से और खर्च करने की ज़रूरत पड़ जाय, तो उसी विधि को अपनाना पडेगा जो सालाना बजट के बारे मे उपर्युक्त धाराओं के अनुसार अपनाई जानी जरूरी है। अर्थात् जबतक प्रान्त की असेम्बली में उस पूरक (Supplementary) बजट पर विचार न होलेगा और गवर्नर के उसपर हस्ताक्षर न होजायेंगे तबतक पहले बजट के अतिरिक्त खर्चा न किया जासकेगा।

पूरक बजट

प्रान्त में एंग्लो-इण्डियन और यूरोपियनो की शिक्षा के ऊपर पर्याप्त व्यय किया जाय, इसके लिए एक्ट की धारा ८३ में विशेष प्रबन्ध किया गया है। इस धारा की उपधारा १ में कहा गया है कि एंग्लो-इण्डियनो और यूरोपियनो की शिक्षा के लिए हर साल कम-से-कम उतना रुपया खर्च किया जाया करेगा जितना कि सन् १९२३ से ३३ तक के दस सालो मे औसतन हर साल उस प्रान्त मे उनकी शिक्षा के लिए खर्च किया गया था। और औसतो के निकालने में वह सब खर्च भी शामिल कर लिया जायगा जो स्कूलो की इमारते वगैरा बनाने के काम मे खर्च किया जाता है।

यूरोपियंनो की शिक्षा

इस उपधारा के दो अपवाद भी रक्खे गये है। इनमे पहला यह है कि यदि किसी वर्ष प्रान्तीय असेम्बली सारी शिक्षा पर इतना कम रुपया खर्च करने का निश्चय करे कि वह खर्च उपर्युक्त १० सालो के सारी शिक्षा के औसत-खर्च से भी कम हो, तो उसी अनुपात से एंग्लो-इण्डियनो और यूरोपियनो की शिक्षा पर भी कम व्यय किया जा सकेगा। दूसरा अपवाद यह है कि प्रान्त की असेम्बली अपने $\frac{3}{4}$ बहुमत से प्रस्ताव करके या तो किसी खास साल मे या सदा के लिए इसके विरुद्ध काम करने का निश्चय कर सकती है; लेकिन उपधारा ३ में कहा गया है कि यदि

असेम्बली इस प्रकार प्रस्ताव पास कर भी दे तो भी गवर्नर अपनी उस 'ख़ास ज़िम्मेदारी' की पूर्त्ति के लिए, जो अल्पसंख्यक जातियो के बाजिब हितो की रक्षार्थ उसे दीगई है, बदस्तूर जिम्मेदार रहेगा।

प्रान्त की आय से होसकनेवाले खर्चे

धारा १५० उपधारा १ में कहा गया है कि प्रान्त की या केन्द्र की आय से कोई भी खर्चा ऐसे किसी मामले पर नही किया जासकेगा जिसका सम्बन्ध न तो भारत से हो और न भारत के किसी भाग से। ये शब्द उन शब्दो से बहुत व्यापक है जो पुराने एक्ट में इस सम्बन्ध में काम में लाये गये थे। पुराने एक्ट के शब्द तो सिर्फ यही थे कि "भारत की सरकारी आय भारत के शासन-सम्बन्धी मामलो पर ही खर्च की जा सकेगी।" प्रो० के० टी० शाह का मत है कि नये एक्ट में इतनी व्यापक भाषा प्रयोग करने का यह उद्देश्य है कि केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारो को ब्रिटेन के उन युद्धो के ऊपर भी खर्चा करने के लिए वाधित किया जा सकेगा जिनका भारत से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध न भी हो। ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी के उन शब्दो से प्रो० शाह के इस मत की कुछ पुष्टि भी होती है जो उसने वाइसराय की उस 'खास जिम्मेदारी' के बारे में अपनी रिपोर्ट में लिखे है जो कि भारत में अमन-चैन बनाये रखने की ख़ातिर उसको दीगई है। उन शब्दो का आशय इस प्रकार है :—

"वाइसराय की इस जिम्मेदारी का व्यापक-से-व्यापक अर्थ लगाया जाना चाहिए, और जब कभी भारत की सुरक्षा के लिए भारतीय फौजो को बाहर भेजना आवश्यक हो तो उसे ऐसा करने का अधिकार होना चाहिए, चाहे खास उस समय भारत के अमन-चैन में कोई ख़लल न भी पड़ता हो।"[1]

१ ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की रिपोर्ट, पृष्ठ ९९, पैरा१७८।

उपधारा २ मे इस अंशा को और भी स्पष्ट कर दिया गया है। उसके अनुसार केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभायें भारत से सम्बन्ध रखनेवाले किसी भी मामले के लिए अपना रुपया खर्च कर सकेंगी, चाहे उन्हे उस मामले के लिए कानून बनाने का अधिकार न भी हो। उदाहरणार्थ, मद्रास प्रान्त चाहे तो बिहार के भूकम्प-पीड़ितो के लिए या किसी भी केन्द्रीय विषय के लिए अपना रुपया खर्च कर सकता है। इसी प्रकार केन्द्र भी किसी भी प्रान्तीय विषय पर रुपया खर्च कर सकता है।

इस प्रकार प्रान्तीय राजस्व में उस बात की काफी गुॅजाइश रक्खी गई है जिसकी ओर कि प्रो० शाह ने संकेत किया है। यानी ब्रिटिश सरकार चाहे तो प्रान्तो को ब्रिटेन के उन युद्धो पर भी खर्च करके लिए वाध्य कर सकेगी जिनका कि भारत से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही होगा।

: ६ :

प्रान्तीय न्याय-विभाग

न्याय-विभाग का सगठन

गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की न्याय-विभाग सम्बन्धी धाराओ को ठीक तरह समझने के लिए पहले यह जान लेना जरूरी है कि हरेक प्रान्त के न्याय-विभाग का सगठन दूसरे प्रान्तो के न्याय-विभाग से बहुत-कुछ भिन्न होता है। न्यायाधीशो के ओहदे भिन्न-भिन्न प्रान्तो में जिन नामो से जानें जाते हैं उनमें खासतौर पर बहुत भिन्नता है। फिर भी न्याय-विभागो के संगठन-सम्बन्धी बहुत-सी बाते ऐसी हैं जो सब प्रान्तो में करीब-करीब एक-सी है। जो बाते आमतौर पर सब प्रान्तो में एक-सी हैं उन्हीका हम यहाँ वर्णन करेंगे।

प्रत्येक ज़िले की अदालते तीन किस्मो में बाँटी गई है—(१) दीवानी, (२) फौजदारी, और (३) माल। दीवानी अदालत का हाकिम

दीवानी अदालते

सब-जज, सिविल जज या मुसिफ कहलाता है। इनमें भी कई दर्जे होते है और एक खास दर्जे का हाकिम खास हद तक के ही मुकदमे सुन सकता है। लेकिन कुछ हाकिम ऐसे भी होते हैं जो, बिना किसी तादाद की पाबन्दी के, हरेक मुकदमे सुन सकते है। इन सबके फैसलो की अपीले या तो जिला जज के यहाँ होती है या सीधी हाईकोर्ट में। उदाहरणार्थ, दिल्ली में ५,०००) से कम के मुकदमो की अपीले ज़िला जज के यहाँ और ५,०००) से ऊपर के मुकदमो की अपीले हाईकोर्ट में होती हैं। ज़िला जज खुद भी मुकदमे

कर सकता है, लेकिन आमतौर पर वह अपीलें ही सुनता है। जिला-जज के फैसलों की अपील हाईकोर्ट में होती है और हाईकोर्ट के फैसलों की प्रिवी कौंसिल मे, बशर्ते कि मुकदमा आमतौर पर १०,०००) से ज्यादा का हो। अदालत खफीफा के फैसलो की निगरानी (revision) सीधी हाईकोर्ट में होती है। मद्रास, बम्बई और कलकत्ता के शहरों मे जिला जज का काम हाईकोर्ट के ही सुपुर्द रहता है।

फौजदारी अदालते

फौजदारी अदालत का हाकिम मजिस्ट्रेट कहलाता है। इनमें तीन किस्में होती है। फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट २ साल तक की सजा व १,०००) तक जुर्माना कर सकता है; सेकण्ड क्लास मजिस्ट्रेट ६ महीने की सजा व २००) तक जुर्माना कर सकता है; और थर्ड क्लास मजिस्ट्रेट १ महीने की सजा व ५०) तक जुर्माना कर सकता है। जिले भर के सब मजिस्ट्रेटो के ऊपर एक जिला-मजिस्ट्रेट होता है, जिसके अधिकार फर्स्टक्लास मजिस्ट्रेट के अधिकारो से कुछ अधिक होते हैं। जिला मजिस्ट्रेट जिले के सब मजिस्ट्रेटो को काम बॉटने और उनपर नियंत्रण रखने के अलावा जिले में अमन-चैन कायम रखने के लिए भी जिम्मेदार होता है और इसलिए जिले का पुलिस-विभाग भी उसके मातहत होता है। जिला मजिस्ट्रेट और अन्य सब मजिस्ट्रेटों को मुकदमे सुनने के अलावा मजिस्ट्रेट की हैसियत मे शासन-विभाग से सम्बन्ध रखनेवाली और कई ड्युटियाँ भी करनी पड़ती है; जैसे जुलूसो के साथ चलना या गैर-कानूनी भीड़ को तितर-बितर करने के लिए गोली चलाने का हुक्म देना, शान्ति-रक्षा के लिए उपद्रवियो से जमानत-मुचलके मॉगना इत्यादि। जिला मजिस्ट्रेट आमतौर पर खुद मुकदमे नही सुनता। वेतन पानेवाले मजिस्ट्रेटो के अलावा आनरेरी मजिस्ट्रेट भी होते है।

सेकण्ड व थर्ड क्लास के मजिस्ट्रेटो के फैसलो की अपीले आमतौर पर जिला मजिस्ट्रेट या किसी फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट के यहाँ होती है और बाकी सब मुकदमो की दौरा जज के यहाँ। दौरा जज अपीले सुनने के अलावा उन मुकदमो को भी सुनता है जो मजिस्ट्रेटो द्वारा उसके सुपुर्द किये जाते है। दौरा जज भारी-से-भारी सजा देसकता है, लेकिन फाँसी की सजा के लिए हाईकोर्ट की मजूरी लेने की जरूरत होती है। दौरा जज के फैसलो की अपीले हाईकोर्ट में होती है। फौजदारी मुकदमो में दीवानी मुकदमो की तरह एक अपील के बाद दूसरी अपील नहीं की जासकती। कानूनी नुकतो के ऊपर अलबत्ता हाईकोर्ट में निगरानी होसकती है। मद्रास, बम्बई और कलकत्ता के शहरो में दौरा जज का काम भी हाईकोर्ट के सुपुर्द रहता है।

माल की अदालते

माल की अदालतो के हाकिम तहसीलदार, डिप्टी कलक्टर या असिस्टेण्ट कलक्टर कहलाते है। ये हाकिम अदालती हैसियत में जमीदारो व किसानो के मुकदमे करते है और अफसरी हैसियत में मालगुजारी की वसूली के लिए जिम्मेदार होते है तथा शासन-विभाग से सम्बन्ध रखनेवाले और भी बहुत-से काम उन्हे करने पड़ते है। कलक्टर जिलेभर में इन सबके ऊपर होता है। इनके फैसलो की अपीले या तो कलक्टर के यहाँ होती है या कमिश्नर के यहाँ।[1] कमिश्नर के ऊपर अपील बोर्ड ऑफ रेवेन्यू में कीजाती है। कुछ प्रान्तो में यह स्थान फाइनेशल कमिश्नर या रेवेन्यू कमिश्नर को मिला हुआ है। इनके ऊपर प्रान्तीय सरकार होती है, लेकिन वह अपीले नहीं सुनती।

आमतौर पर जिले का कलक्टर और जिले का मजिस्ट्रेट एक ही

१ मद्रास में कमिश्नर नही होते।

व्यक्ति होते है। इसी प्रकार जो व्यक्ति डिप्टी या असिस्टेण्ट कलक्टर होता है वह डिप्टी मजिस्ट्रेट या ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट भी होता है। तहसीलदारो को भी मजिस्ट्रेटी अख्तियारात दिये जाते है। दीवानी अपीले सुननेवाला जिला जज और फौजदारी मुकदमे व अपीले सुननेवाला दौरा जज भी आमतौर पर एक ही व्यक्ति होता है।

हाईकोर्ट

एक्ट की धारा २१९ के अनुसार इन कोर्टो को हाईकोर्ट की गिनती में शुमार किया गया है—कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, इलाहाबाद, लाहौर, पटना व नागपुर के हाईकोर्ट; अवध का चीफ कोर्ट; तथा सिन्ध और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के जुडीशल कमिश्नर्स कोर्ट। इनमें जो कोर्ट हाईकोर्ट कहलाते है वे सम्राट् के 'लेटर्स पेटेण्ट' द्वारा स्थापित किये गये है और उन लेटर्स पेटेण्टो द्वारा ही उनके अधिकार और अधिकार-क्षेत्रों का वर्णन किया जाता है। इसके अलावा भारतीय धारा-सभायें भी उनको अतिरिक्त अधिकार और अधिकार-क्षेत्र देसकती है। चीफ कोर्ट और जुडीशल कमिश्नर्स कोर्ट भारतीय धारा-सभाओ के कानूनों द्वारा स्थापित किये गये है, इसलिए उनके अधिकारों और अधिकार-क्षेत्रों का निर्णय आमतौर पर केवल भारतीय धारा-सभाओ के कानूनो द्वारा ही होता है।

नए एक्ट मे हाईकोर्ट का अभिप्राय

हाईकोर्ट आमतौर पर हरेक प्रान्त के लिए अलग होता है। लेकिन कलकत्ते का हाईकोर्ट बंगाल और आसाम दो प्रान्तो के लिए है और इलाहाबाद का हाईकोर्ट संयुक्तप्रान्त में केवल आगरा-विभाग के लिए है, अवध के लिए लखनऊ में चीफ कोर्ट अलग है। लाहौर का हाईकोर्ट पंजाब व दिल्ली इन दोनों प्रान्तों के लिए है, और पटना का हाईकोर्ट बिहार व उडीसा इन दोनों प्रान्तों के लिए है।

इन हाईकोर्टो के अलावा अजमेर-मेरवाडा और कुर्ग में जुडीशल कमिश्नरो के कोर्ट हैं, जिनके अधिकार और अधिकार-क्षेत्र भारत-सरकार के रेग्युलेशनो के जरिये निर्धारित किये गये हैं और जजो की नियुक्ति वगैरा के सब अधिकार भारत-सरकार को हैं। नये एक्ट में इन कोर्टो को हाईकोर्ट का दर्जा नही दिया गया है। सम्राट् ने धारा २१९ के द्वारा यह अधिकार अपने पास सुरक्षित जरूर रक्खा है कि वह आर्डर-इन-कौंसिल जारी करके उन्हे हाईकोर्ट का दर्जा देदे। लेकिन अभीतक ऐसा कोई आर्डर-इन-कौंसिल सम्राट् ने जारी नही किया है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि जबतक इन कोर्टो को अन्य हाईकोर्टो के दर्जे तक नहीं लेआया जायगा तबतक इनके फैसलो की अपीलें फेडरल कोर्ट में न होसकेंगी।

जजो की नियुक्ति

एक्ट की धारा २२० उपधारा १ के मातहत हाईकोर्ट के जजो की नियुक्ति का अधिकार सम्राट् ने अपने हाथ में रक्खा है। "प्रान्तीय स्वराज्य" स्थापित होजाने के बाद होना तो यह चाहिए था कि इन मामलो में भी प्रान्तो को पूरे अधिकार देदिये जाते, लेकिन ऐसा नही किया गया, जबकि इग्लैण्ड में हाईकोर्ट के जजो की नियुक्ति मन्त्रि-मण्डल ही करता है। इसके अलावा इस बात की भी कोई आशा नही कि इन मामलो में प्रान्तीय मिनिस्टरो से सलाह ली जायगी। प्रान्तीय स्वराज्य के अमल में आने से पहले भी हाईकोर्टो के जजो की नियुक्ति तो सम्राट् द्वारा ही होती थी, लेकिन उस वक्त चीफ जस्टिस हाईकोर्ट के अन्य जजो से सलाह करके अपनी सिफारिश प्रान्तीय सरकार को भेजता था और वह सिफारिश भारत-सरकार के जरिये भारत-मन्त्री के पास जाती थी, जबकि अब प्रान्तीय सरकार अर्थात् प्रान्तीय मिनिस्टरो से सलाह-मशविरा करने की नीति का

अन्त ही समझना चाहिए। कुछ दिन हुए, उडीसा के एक एडवोकेट को जब पटना हाईकोर्ट का जज नियुक्त किया गया तो उडीसा के प्रधान-मन्त्री को इस बात की खबर सबसे पहले अखबारो से ही मिली थी।

प्रत्येक हाईकोर्ट के जजो की सख्या निश्चित करने का अधिकार भी सम्राट् ने अपने हाथ में रक्खा है। सम्राट् के एक आर्डर-इन-कौंसिल के अनुसार विभिन्न हाईकोर्टो के जजो की अधिकतम संख्या, जिसमें चीफ जस्टिस भी शामिल है, इस प्रकार रक्खी गई है :—

जजो की सख्या

मद्रास-हाईकोर्ट १६; बम्बई-हाईकोर्ट १४; कलकत्ता-हाईकोर्ट २०; इलाहाबाद-हाईकोर्ट १३; लाहौर-हाईकोर्ट १६; पटना-हाईकोर्ट १२; नागपुर-हाईकोर्ट ८; अवध का चीफ कोर्ट ६; सिन्ध का जुडीशल कमिश्नर्स कोर्ट ६; और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त का जुडीशल कमिश्नर्स कोर्ट २।

एक्ट की धारा २२० उपधारा २ में जजो के रिटायर होने की उम्र ६० साल रक्खी गई है, लेकिन कोई भी जज किसी भी समय अपने हस्ताक्षरो से प्रान्त के गवर्नर के पास अपना इस्तीफा भेज सकता है।

जजो की अलहदगी व बर्खास्तगी वगैरा

जजो को बर्खास्त करने या हटाने का अधिकार भी उक्त उपधारा के अन्तर्गत सम्राट् ने अपने हाथ में रक्खा है। प्रान्तीय मन्त्रि-मण्डल और प्रान्तीय धारा-सभा को इस मामले में दखल देने का कोई अधिकार न होगा।[1] इंग्लैण्ड में तथा अन्य लोकतन्त्रवादी देशो में जजो के बारे

१. एक्ट की ४०वीं और ८६वीं धाराओं के अनुसार भारत की किसी भी धारा-सभा में हाईकोर्ट के जजो के आचरण के बारे में कोई बहस भी न हो सकेगी।

में आमतौर पर यह कायदा होता है कि यदि वे दुराचरण का कोई काम करे तो पार्लमेण्ट की प्रार्थना पर उनको हटा दिया जाता है। लेकिन भारत की प्रान्तीय धारा-सभाओ को इस अधिकार से वचित रक्खा गया है। भारत के हाईकोर्टो के जजो को हटाने की सिफारिश करने का अधिकार भारत से ६,००० मील दूर बैठी प्रिवी कौसिल को ही होगा। प्रिवी कौंसिल भी उसी हालत में सिफारिश कर सकेगी जब कि पहले सम्राट् उसकी राय पूछे। इस प्रकार जजो को या तो दुराचरण के कारण या मानसिक वा शारीरिक शक्तियो के क्षीण होजाने के कारण हटाया जासकेगा।

जजो की योग्याये

हाईकोर्ट की जजी के लिए योग्यतायें एक्ट की धारा २२० उपधारा ३ में निर्धारित की गई हैं। उनके अनुसार कोई भी ऐसा व्यक्ति हाईकोर्ट का जज नियुक्त किया जासकता है जो—

(१) कम-से-कम १० साल तक बैरिस्टरी कर चुका हो;

(२) इण्डियन सिविल सर्विस का ऐसा सदस्य हो जो कम-से-कम १० साल तक उस सर्विस का सदस्य रहा हो और कम-से-कम ३ साल तक जिला जज की जगह काम कर चुका हो,

(३) ब्रिटिश भारत में कम-से-कम ५ साल तक ऐसे अदालती ओहदे पर रह चुका हो जो सब-जज या जज खफीफा के ओहदे से नीचा न हो; या

(४) कम-से-कम १० साल तक किसी भी हाईकोर्ट का वकील, प्लीडर या एडवोकेट रह चुका हो।

पैरा नम्बर २ से प्रत्यक्ष है कि इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य हाईकोर्ट की जजी के लिए बदस्तूर नियुक्त किये जासकेगे। प्रथम

गोलमेज़ परिषद् मे जब इस प्रश्न पर विचार हुआ, तो सर्विसेज सब-कमेटी ने बहुमत से यह सिफारिश की थी कि न्यायालयो के लिए इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यो की नियुक्ति कतई बन्द करदी जानी चाहिए। पुराने एक्ट में यह नियम था कि कम-से-कम एक-तिहाई जज बैरिस्टरो में से नियुक्त किये जायँ और कम-से-कम एक-तिहाई इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यो मे से। इस नियम का यह परिणाम होता था कि इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य दो-तिहाई जगहो से ज्यादा पर नही नियुक्त किये जा सकते थे। लेकिन अब यह पाबन्दी उठगई है और इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यो के लिए रास्ता बिलकुल साफ कर दिया गया है।

चीफ जस्टिस

'लेटर्स पेटेण्ट' द्वारा स्थापित किये गये हाईकोर्टों के लिए अभीतक यह नियम था कि उनका चीफ जस्टिस बैरिस्टरों मे से ही कोई होसकता था। इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य इस जगह के लिए काबि़ल नही समझे जाते थे। लेकिन अब इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य तीन साल तक हाईकोर्ट की जजी करने के बाद लेटर्स पेटेण्ट द्वारा स्थापित किये गये हाईकोर्टों के चीफ जस्टिस भी होसकेंगे। शेष हाईकोर्टों के लिए यह तीन साल की पाबन्दी भी नही रक्खी गई है।

पुराने एक्ट के वक़्त हिन्दुस्तान के वे वकील या एडवोकेट जिन्होने विलायत मे बैरिस्टरी पास नहीं की थी, लेटर्स पेटेण्ट द्वारा स्थापित हाईकोर्टों के चीफ जस्टिस नही नियुक्त किये जा सकते थे। लेकिन अब यह पाबन्दी हटादी गई है।

राजभक्ति की शपथ

धारा २२० की उपधारा ४ के अनुसार प्रत्येक जज को अपना काम सम्हालने से पहले या तो गवर्नर के सामने या गवर्नर द्वारा नियुक्त किये गये किसी व्यक्ति

के सामने सम्राट् के प्रति वफादारी की शपथ लेना लाजिमी है।

धारा २२१ के अनुसार हाईकोर्टों के जजो के वेतन, भत्ते, पेंशनो और छुट्टियो के बारे में नियमोपनियम बनाने का अधिकार सम्राट् ने अपने हाथ में रक्खा है। लेकिन नियुक्ति के बाद किसी जज के वेतन, भत्तो वगैरा में कमी सम्राट् भी नहीं कर सकता।

वेतन-छुट्टी-भत्ते

धारा २२१ के अन्तर्गत जो आर्डर-इन-कौंसिल सम्राट् ने जारी किया है उसके अनुसार विभिन्न हाईकोर्टों के चीफ जस्टिस और जजो के वार्षिक वेतन निम्न प्रकार निश्चित किये गये हैं। लेकिन यह आर्डर-इन-कौंसिल उन जजो पर ही लागू होगा जो १ अप्रैल सन् १९३७ के बाद नियुक्त किये जायँगे :—

कलकत्ता-हाईकोर्ट का चीफ जस्टिस		७२,०००)
मद्रास, बम्बई, इलाहाबाद, पटना और लाहौर के हाईकोर्टों के चीफ जस्टिस	(प्रत्येक)	६०,०००)
नागपुर-हाईकोर्ट का चीफ जस्टिस		५०,०००)
कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, इलाहाबाद, पटना और लाहौर के हाईकोर्टों के जज और अवध चीफ कोर्ट का चीफ जज	,,	४८,०००)
अवध चीफ कोर्ट के जज और सिन्ध का जुडीशल कमिश्नर	,,	४२,०००)
नागपुर-हाईकोर्ट के जज	,,	४०,०००)
पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त का जुडीशल कमिश्नर		३९,०००)
सिन्ध और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के असिस्टेण्ट जुडीशल कमिश्नर	,,	३६,०००)

इसी आर्डर-इन-कौंसिल के अनुसार जजों की छुट्टी मंजूर करने और उनकी सवारियो के भत्तो वगैरा की रकमें निश्चित करने का अधिकार प्रान्तीय सरकार को दिया गया है; लेकिन गवर्नर भी 'अपने विवेक' से काम लेसकेगा। यानी जजो की छुट्टी वगैरा की दरख्वास्ते पहले मिनिस्टरों के पास जायँगी और फिर गवर्नर के।

पुराने एक्ट के अनुसार हाईकोर्टो के अस्थायी जजो या अस्थायी चीफ जस्टिसो के नियुक्त करने का अधिकार उस प्रान्त की प्रान्तीय सरकार को था, लेकिन नये एक्ट की धारा २२२ के अन्तर्गत अब प्रान्तीय सरकारो के हाथ से यह छोटा-सा अधिकार भी छीन लिया गया है और अस्थायी नियुक्तियाँ करने का अधिकार गवर्नर-जनरल को ही होगा और वह 'अपनी मर्जी' से काम कर सकेगा। इसी प्रकार काम मे अस्थायी वृद्धि हो जाने के कारण २ साल के लिए जो जज 'अतिरिक्त जज' के बतौर केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते थे, उनकी नियुक्ति भविष्य में गवर्नर-जनरल द्वारा हुआ करेगी और वह इस मामले में भी 'अपनी मर्जी' से काम कर सकेगा।

अस्थायी और अतिरिक्त जज

हाईकोर्टो के अधिकार व अधिकार-क्षेत्र या तो उनके लेटर्स पेटेण्टो द्वारा निर्धारित किये गये है या भारतीय धारा-सभाओ के कानूनो द्वारा। एक्ट की धारा २२३ के अनुसार हाईकोर्टो के पुराने अधिकार व अधिकार-क्षेत्र बदस्तूर जारी रहेगे, लेकिन भारतीय धारा-सभाओ को उनके अधिकारो मे कमी-बेशी करने का अधिकार होगा। उदाहरणार्थ, केन्द्रीय धारा-सभा केन्द्रीय विषयो के बारे में और प्रान्तीय धारा-सभा प्रान्तीय विषयो के बारे में तथा सम्मिलित विषयो के बारे मे दोनो कमी-बेशी

अधिकार व अधिकार-क्षेत्र

कर सकेगी। जब ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी के सामने यह मामला पेश हुआ तो इग्लैण्ड के कजरवेटिवो की ओर से यह आन्दोलन उठाया गया था कि धारा-सभाओ को हाईकोर्टो के ऊपर इतने अधिक अधिकार देने का यह परिणाम होगा कि हाईकोर्टो के अधिकार धारा-सभायें छीनकर मातहत अदालतो को देदेंगी, जो ठीक न होगा, और उससे ब्रिटिश प्रजा की स्थिति डावाँडोल होजायगी। इस आन्दोलन के फलस्वरूप ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की सिफारिश पर गवर्नरो के आदेश-पत्र में यह धारा जोड़दी गई है कि यदि प्रान्तीय धारा-सभा हाईकोर्टो के अधिकारो में काट-छाँट करने के लिए कोई बिल पास करे तो वह बिल वाइसराय की मजूरी के लिए भेज दिया जाय। इसी तरह वाइसराय के आदेश-पत्र में भी यह धारा जोड़दी गई है कि वह बिल सम्राट् की मजूरी के लिए भेज दिया जाय।

मातहत अदालतो पर नियन्त्रण

एक्ट की धारा २२४ उपधारा १ के अन्तर्गत प्रत्येक हाईकोर्ट को अपनी मातहत अदालतो पर नियन्त्रण रखने का अधिकार होगा। मातहत अदालत से मतलब उन सब अदालतो से है जिनकी अपील उस हाईकोर्ट में सुनी जासकती है। इस अधिकार के जरिये हाईकोर्ट खास तौर पर निम्नलिखित काम कर सकता है:—

(अ) हिसाब-किताब व रिपोर्टें माँगना;

(ब) अदालतो की कार्रवाई को नियन्त्रण में रखने के लिए आम कायदे बनाना व जाब्ते के फार्म वगैरा जारी करना;

(स) हिसाब-किताब रखने के बारे में आम हिदायतें देना, और

(द) अदालतो में लिये जानेवाले मेहनतानो की दरें निश्चित करना।

हाईकोर्ट अपने इन अधिकारो का प्रयोग करके जो कायदे, फार्म व

दरे वगैरा नियत करे वे किसी मौजूदा कानून के ख़िलाफ न होने चाहिएँ और उनके लिए प्रान्तीय सरकार की मंजूरी लेने की भी जरूरत होगी।

कतिपय अधिकारो का अपहरण

एक्ट की धारा २२४ उपधारा २ के द्वारा हाईकोर्ट के कतिपय अमूल्य अधिकारो का, जो हाईकोर्टो को पुराने एक्ट के अन्तर्गत मिले हुए थे और जिनका इस्तैमाल कुछ हाईकोर्टो ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन के जमाने में वाइसराय के आर्डिनेसो के विरुद्ध निर्भयता से किया था, अपहरण कर लिया गया है। यह याद रहे कि हाईकोर्टो को जाब्ता फौजदारी व जाब्ता दीवानी के अन्तर्गत अपनी मातहत अदालतो के फैसलों की जॉच करने और उन्हे बदलने का अधिकार है। सन् १९३० में वाइसराय ने एक आर्डिनेस के द्वारा हाईकोर्ट के इस अधिकार को छीन लिया और यह नियम बनाया कि अमुक-अमुक और ख़ासकर प्रेस क़ानूनो के मामलो में हाईकोर्ट में अपील या निगरानी न होसकेगी। एक मामला हाईकोर्ट तक गया और अभियुक्त ने प्रार्थना की कि हालॉकि वाइसराय ने आर्डिनेस के जरिये हाईकोर्ट के निगरानी के उस अधिकार को तो छीन लिया है जो हाईकोर्ट को जाब्ता फौजदारी के जरिये मिला है, लेकिन वाइसराय हाईकोर्ट के उस अधिकार को नही छीन सकता जो गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट द्वारा हाईकोर्ट को मातहत अदालतो पर नियन्त्रण रखनें का मिला है, अतः हाईकोर्ट दखल देसकता है। सरकारी वकील ने कहा कि वाइसराय कुछ समय के लिए गवर्मेण्ट ऑफ़ इण्डिया एक्ट की धाराओं को भी रद कर सकता है, अतः इस मामले में कोर्ट को दखल देने का कोई अख्तियार नही है। बम्बई-हाईकोर्ट ने फैसला देते हुए कहा कि वाइसराय पार्लमेण्ट के एक्ट की धारा को रद करके हाईकोर्ट के निगरानी के उन विशेषाधिकारो को जो उसे गवर्मेण्ट ऑफ

इण्डिया एक्ट द्वारा मिले हुए है नही छीन सकता, अत निगरानी मे अभियुक्त छोडा जासकता है ।

अब धारा २२४ उपधारा २ में यह कहा गया है कि यद्यपि हाईकोर्ट को मातहत अदालतो पर नियन्त्रण रखने का अधिकार होगा, लेकिन हाई-कोर्ट को इस अधिकार के जरिये अपनी मातहत अदालत के ऐसे किसी फैसले को तब्दील करने का अधिकार न होगा जिसकी कानून द्वारा अपील या निगरानी न होसकती हो । इस धारा का जहाँ एक ओर यह परिणाम हुआ कि हाईकोर्ट का न्याय करने का एक महत्वपूर्ण और अमूल्य अधिकार छिन गया, दूसरी ओर यह परिणाम हुआ कि अपीलो और निगरानी के जो साधारण अधिकार हाईकोर्टो को जाब्ता फौजदारी या जाब्ता दीवानी के अन्तर्गत मिले हुए है उनका भी आर्डिनेसो द्वारा अपहरण किया जासकेगा ।

नये एक्ट में केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओ के अधिकार-क्षेत्रो के अलग-अलग बँट जाने के कारण अदालतो में किसी भी मुकदमे के

कानूनी व गैर-कानूनी एक्ट

दौरान में अब यह सवाल उठाया जासकता है कि अमुक केन्द्रीय या प्रान्तीय एक्ट गैर-कानूनी है । गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की धारा २२५ के मातहत हाईकोर्टो को यह आदेश दिया गया है कि यदि किसी मातहत अदालत में किसी एक्ट के कानूनी या गैर-कानूनी होने का सवाल उठाया जाय, तो हाईकोर्ट उस मुकदमे को अपनी फाइल पर मँगाले, बशर्ते कि हाईकोर्ट को साधारण कानून के अनुसार उस मुकदमे को अपने यहाँ मँगा लेने का अधिकार हो ।

लेकिन हाईकोर्ट इस प्रकार अपने अधिकारो का प्रयोग केन्द्रीय एक्टो के सम्बन्ध में उसी हालत में करेगा जबकि केन्द्र का एडवोकेट-जनरल

प्रार्थना करे और प्रान्तीय एक्टों के सम्बन्ध मे उसी हालत में करेगा जबकि केन्द्र का या प्रान्त का एडवोकेट-जनरल प्रार्थना करे। अर्थात् यदि कोई भी फरीक अपने मुकदमे को इस आधार पर एकदम हाईकोर्ट में लेजाना चाहे कि उस मुकदमे में अमुक केन्द्रीय या प्रान्तीय एक्ट के कानूनी या गैर-कानूनी होने का सवाल उठा है, तो उसे पहले उपयुक्त एडवोकेट-जनरल को दर्खास्त देनी पडेगी।

माल के मुकदमे

एक्ट की धारा २२६ के अनुसार किसी भी हाईकोर्ट को माल के मुकदमे स्वयं सुनने का अधिकार न होगा। लेकिन केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभायें एक्ट पास करके ऐसा अधिकार हाईकोर्टों को देसकती है। मगर केन्द्रीय या प्रान्तीय धारा-सभाये ऐसे किसी बिल पर तबतक विचार नही कर सकेंगी जबतक कि पहले वाइसराय या गवर्नर अपनी अनुमति न देदे।

भाषा

एक्ट की धारा २२७ के अनुसार हाईकोर्ट की सब कार्रवाई अंग्रेजी भाषा मे हुआ करेगी। यह ध्यान रहे कि एक्ट में भाषा-सम्बन्धी यह धारा ज्वाइण्ट पार्लमेण्टरी कमेटी की सिफारिशों के फलस्वरूप जोडी गई थी।

खर्चा

एक्ट की धारा २२८ के अनुसार हाईकोर्टो का खर्चा मंजूर करने का अधिकार प्रान्तीय सरकार को दिया गया है। प्रान्तीय सरकार से मतलब उस प्रान्त की प्रान्तीय सरकार से है जिस प्रान्त में हाईकोर्ट की खास कचहरी लगती है। लेकिन इस मामले में गवर्नर को 'अपने विवेक' से भी काम लेनें का अधिकार होगा। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, हाईकोर्टो का खर्चा प्रान्त की आय से वसूल किया जासकेगा, अर्थात् उसके लिए प्रान्तीय धारा-सभा की मंजूरी लेने की जरूरत न होगी। जो हाईकोर्ट एक से

ज्यादा प्रान्तो का काम करते है उनका खर्चा उन प्रान्तो को आपस मे बाँट लेना होगा।

एक्ट की धारा २४२ उपधारा ४ के अनुसार हाईकोर्ट के सारे कर्मचारियो (स्टाफ) की नियुक्ति करने व उनकी नौकरी के सम्बन्ध में विभिन्न नियमादि बनाने का अधिकार चीफ जस्टिस को होगा। चीफ जस्टिस अपने इन अधिकारो को दूसरे जजो को या रजिस्ट्रार वगैरा को भी देसकेगा। लेकिन इन नियमो का जहाँतक कर्मचारियो के वेतन, भत्ते, छुट्टियो व पेंशनो से ताल्लुक हो, चीफ जस्टिस को प्रान्तीय सरकार से मजूरी लेनी होगी। गवर्नर 'अपनी मर्जी' से यह भी नियम बना सकेगा कि यदि चीफ जस्टिस हाईकोर्ट के मौजूदा कर्मचारियो के अलावा किसी और व्यक्ति को हाईकोर्ट के किसी पद पर नियुक्त करे तो वह पहले प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन से परामर्श करले।

स्टाफ

वम्बई, मद्रास और कलकत्ता के हाईकोर्टो में शैरिफ नाम का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अफसर होता है। यह आमतौर पर एक साल के लिए नियुक्त किया जाता है और शहर का एक प्रमुख नागरिक होता है। इसका काम आमतौर पर हाईकोर्ट के सम्मनो की तामील करना और हाईकोर्ट के हुक्मो पर अमल करना होता है। इसका सार्वजनिक कर्तव्य महत्वपूर्ण विषयो पर विचार-विमर्श करने के लिए सार्वजनिक सभाओ का आयोजन करना होता है। इस अफसर की नियुक्ति वगैरा अभीतक सरकार के हाथ में ही रहती थी, लेकिन अव एक्ट की धारा ३०३ के अनुसार कलकत्ता के शैरिफ के लिए यह नियम वनाया गया है कि उसकी नियुक्त हर साल गवर्नर द्वारा हुआ करेगी और हाईकोर्ट के जज

कलकत्ता-हाईकोर्ट का शैरिफ

जिन तीन नामो की सिफारिश करे उनमें से ही कोई एक व्यक्ति नियुक्त किया जायगा। उसके वेतन वगैरा निश्चित करने और उसे बर्खास्त करने वगैरा के सब अधिकार गवर्नर को रहेगे और इन सब मामलो में गवर्नर 'अपने विवेक' से काम लेसकेगा।

धारा २२९ के अनुसार वर्तमान हाईकोर्टो के पुनस्संगठन का अधिकार सम्राट् ने अपने हाथ मे रक्खा है। इस प्रकार सम्राट् लेटस पेटेण्ट द्वारा किसी भी प्रान्त के लिए नया हाईकोर्ट स्थापित कर सकते है, यदि उस प्रान्त में अलग हाईकोर्ट न हो; एक प्रान्त के दो हाईकोर्टो को मिलाकर एक कर सकते है, या एक ही प्रान्त में एक हाईकोर्ट की जगह दो या दो से अधिक हाईकोर्ट भी स्थापित कर सकते है। लेकिन इसके लिए यह जरूरी है कि उस प्रान्त की धारा-सभा का भवन या दोनो भवन गवर्नर के जरिये सम्राट् के पास अपने प्रार्थना-पत्र भेजें।

पुनस्सगठन

हाईकोर्ट के उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट है कि नये विधान में उन्हे जो स्थान दिया गया है वह ऐसा है कि वे प्रान्त की नई भावनाओ से सर्वथा दूर रहेगे और उनका ढर्रा हमेशा उसी प्रकार चलता रहेगा जैसा कि अभीतक चलता रहा है। अर्थात् वे ब्रिटिश साम्राज्यवादी मशीन के ही पुर्जे रहेगे।

बोर्ड ऑफ रेवेन्यू

जहाँ हाईकोर्ट प्रान्त की सर्वोच्च दीवानी व फौजदारी अदालत है, बोर्ड ऑफ रेवेन्यू माल की सर्वोच्च अदालत होती है। कुछ प्रान्तो में बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के बजाय रेवेन्यू-कमिश्नर या फाइनेंशल कमिश्नर होते है। ये सब जगहे आमतौर पर इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यो के लिए सुरक्षित रहती है।

कमिश्नर और जिला व दौरा जज

बोर्ड ऑफ रेवेन्यू और हाईकोर्ट के बाद अदालतो की दूसरी श्रेणी माल के मामलो में कमिश्नर की और दीवानी व फौजदारी के मामलो मे जिला व दौरा जज की होती है। कमिश्नरो की जगहे इण्डियन सिविल-सर्विस वालो के लिए सुरक्षित है, अत उनपर प्रान्तीय सरकार का नियन्त्रण बहुत ही मामूली रहेगा।

जिला और दौरा जजो के बारे में एक्ट मे विशेष सरक्षण रक्खे गये है। जिला और दौरा जज से यहाँ तात्पर्य जिला जज, अतिरिक्त जिला जज, ज्वाइण्ट जिला जज, असिस्टेण्ट जिला जज, दौरा जज, अतिरिक्त दौरा जज, असिस्टेण्ट दौरा जज, चीफ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट और अदालत खफीफा के चीफ जज से है। ये जगहे ज्यादातर इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्यो के लिए सुरक्षित रहती है, लेकिन इनमें से कुछ जगहे अक्सर प्राविशल सर्विस के सदस्यो को भी देदी जाती है। धारा २५४ उपधारा १ के अनुसार जिला और दौरा जजो की नियुक्ति, तबादले और तरक्की सम्बन्धी अधिकारो के प्रयोग में मिनिस्टरो को जहाँ एक ओर हाईकोर्ट से सलाह लेना जरूरी होगा, दूसरी ओर गवर्नर को भी 'अपने विवेक' से काम लेनें का अधिकार होगा।

इण्डियन सिविल सर्विस और प्राविशल सर्विस के अफसरो के अलावा कुछ व्यक्ति इन जगहो पर वकील-बैरिस्टरो में से भी नियुक्त किये जाते है। धारा २५४ उपधारा २ के अनुसार इनका चुनाव भी प्रान्तीय सरकार खुद सीधे न कर सकेगी। जिन नामो की सिफारिश हाईकोर्ट करेगा वे ही व्यक्ति इन जगहो पर नियुक्त किये जासकेगे। इस प्रकार वे वकील, बैरिस्टर या एडवोकेट ही नियुक्त किये जासकेगे जो कम-से-कम ५ साल तक वकालत कर चुके हो।

सब-जज व मुंसिफ

दीवानी की तरफ जिला जज के नीचे जो जज होते है वे या तो सब-जज या सिविल जज कहलाते है या मुंसिफ। इनको भी प्रान्तीय सरकार के नियन्त्रण से काफी मुक्त कर दिया गया है।

धारा २५५ उपधारा १ के अनुसार, "दीवानी के जजो की योग्यता के बारे मे नियम बनाने से पहले प्रान्तीय सरकार को प्रान्तीय हाईकोर्ट और पब्लिक सर्विस कमीशन से परामर्श करना लाजिमी होगा।"

धारा २५५ उपधारा २ के अनुसार, "दीवानी के जजो की नियुक्ति के लिए निम्न कायदा काम मे लाना जरूरी होगा। प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय पब्लिक सर्विस कमीशन से परीक्षा लेने को कहेगी। परीक्षा लेने के बाद पब्लिक सर्विस कमीशन जिन उम्मीदवारो को जजी के योग्य समझेगा उनके नाम की एक सूची बनायगा। जब प्रान्तीय सरकार को जज नियुक्त करने होगे तो उसे उन नामो मे से ही चुनाव करना होगा।"

धारा २५५ उपधारा ३ के अनुसार, "दीवानी जजों के तबादले और उनकी तरक्की करने तथा उन्हे छुट्टी देने के अधिकार हाईकोर्ट को होगे।"

मतलब यह कि दीवानी के जज भी प्रान्तीय मंत्रि-मण्डल के नियन्त्रण से काफी मुक्त रहेगे।

फौजदारी के मजिस्ट्रेट

फौजदारी में दौरा जज के बाद नम्बर जिला मजिस्ट्रेट या उसके मातहत मजिस्ट्रेटो का होता है। जिला मजिस्ट्रेट तो आमतौर पर इण्डियन सिविल सर्विस के होते ही है। इनके अलावा बडे-बडे शहरों में ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट या सिटी मजिस्ट्रेट भी इण्डियन सिविल सर्विस के ही होते है। इनके नीचे जो मजिस्ट्रेट होते है वे या तो प्राविशल सर्विस के होते है या

आनरेरी। माल के तथा अन्य अफसरो को भी आमतौर पर मजिस्ट्रेटी अधिकार देदिये जाते हैं। मजिस्ट्रेटो की स्थिति को सुरक्षित करने के लिए एक्ट में धारा २५६ रक्खी गई है, जिसके अनुसार "किसी भी व्यक्ति को मजिस्ट्रेटी अख्तियारात तबतक नहीं दिये जायँगे और किसी भी मजिस्ट्रेट के अधिकार तबतक नही बढाये या छीने जायँगे जबतक कि उस ज़िले के ज़िला मजिस्ट्रेट या चीफ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट से सलाह न लेली जाय।"

इस प्रकार न्याय-विभाग के पुनस्संगठन के मामले में प्रान्तीय धारा-सभायें और प्रान्तीय मन्त्रि-मण्डल अपनेको चारो तरफ से जकड़ा हुआ ही पायेंगे।

: १० :

उपसंहार

भारत के नये शासन-विधान यानी १९३५ के गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट द्वारा भारत के प्रान्तो में जो शासन-पद्धति १ अप्रैल १९३७ से अमल में आई है, उसका संक्षिप्त किन्तु यथासम्भव खुलासा दिग्दर्शन पिछले अध्यायो में कराने का प्रयत्न किया गया है। ब्रिटिश राजनीतिज्ञो द्वारा इसे 'प्राविशल ऑटोनामी' (Provincial Autonomy) यानी 'प्रान्तीय स्वराज्य' का नाम दिया गया है और उनका दावा है कि इसके द्वारा भारत को प्रान्तो में स्वराज्य और शासन का वास्तविक उत्तरदायित्व मिल गया है। लेकिन जैसा कि इसके विवेचन से स्पष्ट है, हमारी नम्र सम्मति में, यह न तो प्रान्तीय स्वराज्य की योजना है और न वास्तविक उत्तरदायी शासन-पद्धति की। वास्तविक 'प्रान्तीय स्वराज्य' और 'उत्तरदायी शासन-पद्धति' कायम करने के लिए तो निम्न बातो का किया जाना आवश्यक है :—

१. प्रान्तीय विषयो के शासन की सारी जिम्मेदारी एकमात्र जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियो यानी मिनिस्टरो को सौप दी जाय, जो प्रान्त की धारा-सभा के प्रति पूर्णरूप से उत्तरदायी हों। गवर्नरों को मिनिस्टरो की सलाह के बिना या उनकी सलाह के ख़िलाफ काम करने का कोई अधिकार न हो। हॉ, यदि मिनिस्टरो में धारा-सभा का विश्वास न रहे तो मिनिस्टरो को बदलने का और यदि धारा-सभा में जनता का विश्वास न रहे तो धारा-सभा को भंग करके उसका नया चुनाव करने का अधिकार गवर्नरो को दिया जाय।

२. मिनिस्टरों की नियुक्ति मे प्रधान-मंत्री का ही निर्णय अन्तिम हो और गवर्नर मन्त्रि-मण्डल की बैठको में भाग न ले। मिनिस्टर प्रधान-

मन्त्री को ही अपना मुखिया समझें, ताकि मिनिस्टरो में सयुक्त उत्तर-दायित्व की भावना विद्यमान रहे।

३. मिनिस्टर वे ही व्यक्ति नियुक्त किये जायँ जो धारा-सभा के निर्वाचित सदस्य हो और जिनका धारा-सभा में बहुमत हो।

४ शासन के बडे-बडे महकमो के अध्यक्ष या तो स्वय मिनिस्टर ही हो, या उनका समर्थन करनेवाले धारा-सभा के अन्य सदस्य।

५. सरकारी आज्ञायें मिनिस्टरो या उनके सहायको के हस्ताक्षरो से ही जारी हो और गवर्नर को स्वयं अपने हस्ताक्षरो से आज्ञा जारी करने का कोई अधिकार न हो।

६ सरकारी सेक्रेटियो को सरकारी काम के लिए गवर्नर से मिलने का या कोई कागज़ गवर्नर के पास भेजने का कोई अधिकार न हो।

७ गवर्नरो को वाइसराय, भारत-मन्त्री और ब्रिटिश सरकार के नियन्त्रण से एकदम मुक्त कर दिया जाय और वे एकमात्र जनता के प्रति ही उत्तरदायी हो।

८ प्रान्तीय मामलो में वाइसराय के दखल का एकदम अन्त होजाय।

९ प्रान्तीय मामलो में ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश पार्लमेण्ट के दखल का एकदम अन्त होजाय; उन्हे प्रान्तीय धारा-सभाओ के कानूनो को रद करने और प्रान्तीय मामलो के बारे में कानून पास करने का कोई अधिकार न रहे।

१० प्रान्तीय विषयो के बारे में कानून पास करने के प्रान्तीय धारा-सभाओ के अधिकार पर कोई पाबन्दी न हो। प्रान्तीय धारा-सभाओ को अपनी सत्ता की रक्षा करने, अपने जाब्ते के नियम बनाने, किसी भी भाषा में कार्रवाई करने, और बिना गवर्नर या वाइसराय की पूर्व-अनुमती के कानून पास करने का पूर्ण अधिकार हो। शासन-विभाग को

धारा-सभा की कार्रवाई में दखल देने का कोई अधिकार न हो।

११. शासन-विभाग को विशेष परिस्थितियों मे उसी हदतक आर्डि-नेसो वगैरा के जरिये कानून बनाने का अधिकार हो, कि जिस हदतक धारा-सभा यह अधिकार शासन-विभाग को देना उपयुक्त समझे।

१२. धारा-सभा के प्रत्येक सदस्य को भवनो के नियमानुकूल भाषण देने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो।

१३. प्रान्त के खर्चे पर धारा-सभा का पूरा नियन्त्रण रहे, और प्रान्तीय-धारा-सभा की मंजूरी के बिना सरकारी आय की एक पाई भी न खर्च की जाय। हॉ, प्रान्तीय धारा-सभा को यह नियम बनाने का अधि-कार हो कि असुक-अमुक खर्चो के लिए प्रान्तीय धारा-सभा की सालाना मजूरी लेनें की जरूरत न होगी।

१४. प्रान्तो मे से द्वितीय चेम्बरे उड़ा दी जायॅ और प्रान्तीय असेम्बली ही हरेक प्रान्त की एकमात्र धारा-सभा हो, जिसका चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर हो। प्रान्तीय असेम्बलियो को अपने संगठन में परिवर्तन करने और निर्वाचन-सम्बन्धी विविध विपयों पर नियमादि बनाने का पूरा अधिकार हो, बशर्ते कि

(अ) सीटो के साम्प्रादायिक बॅटबारे में कोई भी परिवर्तन तबतक न किया जाय जबतक कि भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय इसके लिए तैयार न हो;

(ब) अल्प-संख्यक जातियो को पृथक् निर्वाचन-पद्धति से ही अपने प्रतिनिधियो को चुनने का अधिकार दिया जाय, जबतक कि वे स्वयं ही इस पद्धति को छोड़ना न चाहे।

१५. प्रान्तीय सरकार के मातहत काम करनेवाले सब कर्मचारियो की भर्ती, नियुक्ति, अनुशासन, नियन्त्रण, वेतन वगैरा के सब मामले प्रान्तीय सरकारो और धारा-सभाओ के हाथ मे रहे। वे चाहे तो इस

काम को पब्लिक सर्विस कमीशन के सुपुर्द करदें, जो मिनिस्टरो और धारासभा के प्रति उत्तरदायी हो।

१६ हाईकोर्ट और प्रान्तीय न्याय-विभाग के सब जजो की नियुक्ति प्रान्तीय सरकारो के हाथ में ही रहे। न्याय-विभाग न्याय करने के अधिकारो के अलावा शेष सब मामलो में प्रान्तीय सरकार और प्रान्तीय धारासभाओ के मातहत रहे, लेकिन हाईकोर्ट के किसी जज को तबतक न हटाया जासके जबतक कि धारा-सभा के सदस्य प्रार्थना न करे।

१७. कानून भग करनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को दण्ड देने का पूर्ण अधिकार अदालतो को हो, चाहे वह व्यक्ति कितना ही उच्च-से-उच्च अधिकारी क्यो न हो।

१८ केन्द्र व प्रान्त में अधिकारो का विभाजन करने के लिए और केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारो के पारस्परिक सम्बन्धो को निर्धारित करने के लिए भिन्न-भिन्न प्रान्तो की असेम्बलियो के प्रतिनिधियो की एक कान्फ्रेन्स हो जो शासन-विधान से सम्बन्ध रखनेवाली शेष सब बातो का निर्णय भी करे और भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तो का भाषा, सस्कृति आदि के आधार पर पुनर्विभाजन करे।

१९. प्रान्त का कोई भी क्षेत्र बहिर्गत या अर्धबहिर्गत क्षेत्र न रहे और भारत के सब प्रान्तो का दर्जा एकसा हो।

२०. 'प्रान्तीय स्वराज्य' के साथ-साथ केन्द्र में भी इसी प्रकार की शासन-पद्धति कायम की जाय, क्योकि जबतक केन्द्रीय सरकार और प्रान्तीय सरकारे दोनो ही पूर्णरूप से जनता के प्रति उत्तरदायी और स्वतन्त्र न होगी तबतक 'प्रान्तीय स्वराज्य' की योजना हर्गिज़ सफल नहीं होसकेगी।

परिशिष्ट

विषयों की सूचियाँ

नीचे तीन सूचियाँ दीजाती है, जिन्हे एक्ट मे क्रमश केन्द्रीय सूची, प्रान्तीय सूची और सम्मिलित सूची का नाम दिया गया है। केन्द्रीय सूची के विषयो पर केन्द्रीय धारा-सभा को और प्रान्तीय सूची के विषयो पर प्रान्तीय धारा-सभा को, और सम्मिलित सूची के विषयो पर केन्द्रीय व प्रान्तीय दोनो धारा-सभाओ को कानून बनाने का अधिकार होगा। केन्द्रीय सूची के विषयो का शासन रहेगा केन्द्रीय सरकार के जिम्मे और प्रान्तीय व सम्मिलित दोनो सूचियो के विषयो का शासन रहेगा प्रान्तीय सरकारो के जिम्मे। लेकिन सम्मिलित सूची के दूसरे भाग के विषयो के बारे मे केन्द्रीय धारा-सभा को यह कानून पास करने का अधिकार होगा कि इन विषयो के शासन मे प्रान्तीय सरकारे केन्द्रीय सरकार के आदेशानुसार काम करे।[१]

केन्द्रीय सूची

१ सम्राट् की भारतीय जल, थल और हवाई सेना; प्रान्तीय सरकारो की फौजी व हथियारबन्द पुलिस के अलावा सम्राट् की अन्य भारतीय सेना, सम्राट् की सेना के साथ काम करनेवाली अन्य देशो की हथियारबन्द सेना, केन्द्रीय खुफिया विभाग (central intelligence bureau), देश की रक्षा, वैदेशिक मामलो और सम्राट् के रियासती ताल्लुकात की वजह से ब्रिटिश भारत मे की जानेवाली नजरबन्दी।

१. विस्तृत विवरण के लिए देखिए, पृष्ठ १४४–१४६।

२ जल, थल और हवाई सेना के तामीरी काम, छावनियो की स्थानिक स्वशासन सस्थाये, छावनियो मे मकानो की जगहो का नियत्रण, छावनियो की हदवन्दी ।

३ वैदेशिक मामले, अन्य देशो से हुई सन्धियो और समझौतो का पालन, विदेशो के (मय ब्रिटिश साम्राज्य के अन्य देशो के) कैदियो और अभियुक्तो को गिरफ्तार करके उनके सुपुर्द करना (extradition) ।

४ यूरोपियनो के कब्रिस्तान सहित ईसाइयत का सरकारी महकमा ।

५ नोट और सिक्के, कानूनी मुद्रा (legal tender) ।

६ केन्द्रीय सरकार का कर्जा ।

७ डाक, तार, टेलीफोन, बेतार का तार, ब्रौडकास्टिग तथा सदेश भेजने के इसी प्रकार के अन्य साधन, डाकखानो के सेविग वैक ।

८ केन्द्रीय सरकार के कर्मचारी और केन्द्रीय पब्लिक सर्विस कमीशन ।

९ केन्द्रीय पेशने, अर्थात् वे पेशने जो केन्द्र को देनी हो या जो केन्द्र की आय से देनी हो ।

१० वे तामीरी काम, जमीन व इमारते जिनकी मालिक केन्द्रीय सरकार हो या जो केन्द्रीय सरकार के कब्जे मे हो । लेकिन जहाँतक प्रान्तो मे स्थित सम्पत्ति का सवाल है, उसपर केन्द्रीय कानूनो के साथ-साथ प्रान्तीय कानून भी लागू होगे, यदि प्रान्तीय कानून केन्द्रीय कानूनो के विरुद्ध न हो ।

११ इम्पीरियल लाइब्रेरी, इण्डियन म्यूजियम, इम्पीरियल वार म्यूजियम, विक्टोरिया मेमोरियल, और केन्द्र द्वारा नियन्त्रित तथा केन्द्र के खर्चे से चलनेवाली इसी प्रकार की अन्य सस्थाये ।

१२ अनुसन्धान, पेशो व उद्योगो की ट्रेनिंग और विशेप विपयो

के अध्ययन (special studies) को प्रोत्साहन देने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित भवन (Institutes) तथा अन्य सस्थाये ।

१३ काशी का हिन्दू विश्वविद्यालय और अलीगढ का मुस्लिम विश्वविद्यालय ।

१४ भारत की पैमाइश (Survey of India) और भारत की भूगर्भ-विद्या, वृक्ष-विद्या तथा जीव-जन्तु सम्बन्धी जाँच, केन्द्रीय आकाश-निरीक्षण विभाग ।

१५ प्राचीन ऐतिहासिक इमारते, पुराने भग्नावशेष और स्थान।

१६ मर्दुमशुमारी ।

१७ भारत मे बाहर के लोगो का आना और भारत से लोगो का बाहर जाना, देश-निकाला, इग्लैण्ड-निवासी और भारत-निवासी ब्रिटिश प्रजाजनो के अलावा भारत मे सब लोगो की हलचलो पर नियन्त्रण, भारत के बाहर के स्थानो की तीर्थयात्रा ।

१८ बन्दरगाहो के क्वेरेण्टाइन, उनके अस्पताल, जहाजियो के अस्पताल और जहाजी अस्पताल ।

१९ केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित चुगी की हदो (custom frontiers) से माल का गुजरना ।

२० केन्द्रीय रेले, प्रान्तीय रेलो की हिफाजत, प्रान्तीय रेलो के मुसाफिरो के प्रति और प्रान्तीय रेलो के जरिये माल भेजनेवालो के प्रति प्रान्तीय रेलो की जिम्मेदारी ।

२१ समुद्रो मे जहाज़ो का चलना व सामुद्रिक यातायात, समुद्री अपराधो के अपराधियो को दण्ड ।

२२ इस बात की घोषणा करना कि कौन-कोनसे बन्दरगाह बड़े समझे जायँगे, बडे बन्दरगाहो की शासन-सस्थाओ का निर्माण तथा उनके अधिकार।

२३ मछलियो का पकडना, समुद्री किनारो से दूर मछली पकडने के स्थान ।

२४ हवाई जहाज, हवाई यातायात, हवाई अड्डे ।

२५ प्रकाश-गृह, समुद्री जहाज व हवाई जहाजो की हिफाजत के अन्य उपाय ।

२६ समुद्री या आकाश-मार्ग से मुसाफिरो और माल का यातायात ।

२७ कापीराइट, आविष्कार, डिजाइन, ट्रेड मार्क व मर्चेण्डाइज मार्क ।

२८ चैक, विल ऑफ एक्सचेन्ज, प्रामिसरी नोट और इसी प्रकार के अन्य दस्तावेज ।

२९ शस्त्रास्त्र, बन्दूक पिस्तौल वगैरा, गोला-बारूद का सामान ।

३० विस्फोटक पदार्थ ।

३१ अफीम की खेती, उत्पत्ति और निर्यात के लिए बिक्री ।

३२ पेट्रोलियम और केन्द्रीय धारा-सभा द्वारा घोपित किये जानेवाले अन्य जल उठनेवाले पदार्थो के रखने व इधर से उधर लेजाने पर नियत्रण ।

३३ कोआपरेटिव सोसायटियो के अलावा व्यापारिक कानूनी समुदायो (trading corporations) का समुदायीकरण (incorporation), नियन्त्रण व उनकी समाप्ति, वे कानूनी समुदाय जिनका उद्देश्य एक प्रान्त तक ही सीमित न हो ।

३४. उद्योग-धन्धो की उन्नति—जिस हद तक कि केन्द्रीय धारा-सभा उचित समझे ।

३५ खानो व तेल के सोतो मे मजदूरी का नियन्त्रण और इन जगहो की हिफाजत ।

३६ खानो और तेलो के सोतो का नियन्त्रण और खानो की उन्नति---जिस हद तक कि केन्द्रीय धारा-सभा उचित समझे ।

३७ बीमे के कानून, बीमे के व्यापार पर नियन्त्रण, प्रान्तीय सरकारो के अधिकारो के बीमे के अलावा सरकारी बीमा ।

३८ बैंक-व्यवसाय पर नियत्रण ।

३९ एक प्रान्त की पुलिस को दूसरे प्रान्त मे उस प्रान्त की सरकार की स्वीकृति से काम करने का अधिकार देना ।

४० इस सूची मे शामिल किये गये विषयो के कानूनो को भग करने की सजा ।

४१ इस सूची मे शामिल किये गये विषयो के बारे मे जॉच और तत्सम्बन्धी ऑकडे ।

४२ आयात-निर्यात कर ।

४३ तम्बाकू पर उत्पत्ति-कर (Excise duties); (अ) शराब व अन्य मादक पेय, (ब) अफीम, भग, आदि मादक द्रव्यो व दवाई की अन्य चीजो तथा (स) इन चीजो से बननेवाली दवाइयो और श्रृगार के सामान पर लगनेवाले उत्पत्ति-कर के अलावा भारत मे बनने व पैदा होनेवाले अन्य माल पर उत्पत्ति-कर ।

४४ कानूनी समुदायो पर टैक्स (Corporation tax) ।

४५ नमक ।

४६ सरकारी लाटरियॉ ।

४७ विदेशियो का ब्रिटिश प्रजाजन बनना ।

४८ एक प्रान्त के निवासियो का दूसरे प्रान्त मे वसना ।

४९ तौल के बाट निर्धारित करना ।

५० रॉची का यूरोपियन पागलो का अस्पताल ।

५१ फेडरल कोर्ट के अलावा सब अदालतो के उन सब विषयो के बारे मे जो इस सूची मे शामिल है अधिकार व अधिकार-क्षेत्र, फेडरल-कोर्ट को दीवानी अपीले सुनने के अधिकार देना, फेडरल कोर्ट को ऐसे अधिकार देना जिनके जरिये वह एक्ट मे दिये गये अपने अधिकारो को और अच्छी तरह प्रयोग मे लासके।

५२ खेती की आमदनी के अलावा और सब आमदनियो पर कर।

५३ खेती की जमीन के अलावा व्यक्तियो व कम्पनियो की कुल मिल्कियत पर टैक्स और कम्पनियो की पूँजी पर टैक्स।

५४ खेती की ज़मीन के अलावा ओर सब सम्पत्ति पर उत्तराधिकार-कर (Succession duties)।

५५ हुण्डी, चैक, प्रामिसरी नोट, विल्स ऑफ एक्सचेञ्ज, विल्स ऑफ लेडिंग, लेटर्स ऑफ क्रेडिट, बीमे की पालिसी और रसीदो पर लगाये जानेवाले स्टाम्पो की दर।

५६ रेल और हवाई जहाजो से चलनेवाले माल व मुसाफिरो पर टर्मीनल टैक्स, रेलो के भाडे पर टैक्स।

५७ अदालतो की आमदनी के अलावा इस सूची मे शामिल किये गये और सब विषयो की आमदनी।

प्रान्तीय सूची

१ सार्वजनिक व्यवस्था (Public order) (अलावा सम्राट् की सेना के उपयोग के), न्याय-विभाग, फेडरल कोर्ट के अलावा और सब अदालतो का निर्माण, सगठन और उनकी आमदनी, सार्वजनिक व्यवस्था को कायम रखने के लिए की जानेवाली नजरवन्दी, इस प्रकार नज़रवन्द किये हुए व्यक्ति।

२ उन सब विषयो के बारे मे जो इस सूची मे शामिल है, फेडरल

कोर्ट के अलावा सब अदालतो के अधिकार और अधिकार-क्षेत्र, माल की अदालतो में जाब्ते के नियम ।

३ पुलिस (मय रेलवे व देहाती पुलिस के)।

४ जेले, रिफार्मेटरी (Reformatories) अर्थात् कैदियो के सुधार-गृह, वोर्स्टल तथा इसी प्रकार की अन्य संस्थाये, इन सस्थाओ मे वन्द किये जानेवाले व्यक्ति, अन्य प्रान्तो की जेलो तथा अन्य सस्थाओ का उपयोग करने के लिए उन प्रान्तो से प्रवन्ध करना ।

५ प्रान्तीय सरकार का कर्जा ।

६ प्रान्तीय सरकार के कर्मचारी और प्रान्तीय पब्लिक सर्विस कमीशन।

७ प्रान्तीय पेशने, अर्थात् वे पेशने जो प्रान्त को या प्रान्त की आय मे देनी हो ।

८ वे तामीरी काम, जमीन व इमारते जिनकी मालिक प्रान्तीय सरकार हो या जो प्रान्तीय सरकार के कब्जे मे हो ।

९ दूसरो की जमीन को हासिल करने का अधिकार।

१० प्रान्त द्वारा नियन्त्रित और प्रान्त के खर्चे से चलनेवाले पुस्त-कालय, अजायवघर तथा इसी प्रकार की अन्य सस्थाये ।

११ प्रान्तीय धारा-सभाओ के चुनाव (लेकिन गवर्मेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट और उसके मातहत जारी किये गये आर्डर-इन-कौसिलो के किसी नियम के विरुद्ध नही)।

१२ प्रान्तीय मिनिस्टर, लेजिस्लेटिव असेम्वली के स्पीकर व डिप्टी-स्पीकर और जिन प्रान्तो मे लेजिस्लेटिव कौंसिले हैं उन प्रान्तो की लेजिस्लेटिव कौंसिल के प्रेसिडेण्ट व डिप्टी-प्रेसिडेण्ट के वेतन; प्रान्तीय धारा-सभा के सदस्यो के वेतन-भत्ते और उनके रिआयती अधिकार (privileges); उन व्यक्तियो को सजा जो प्रान्तीय धारा-सभा की

किसी कमेटी के सामने गवाही देने या दस्तावेज़ पेश करने से इकार करे (लेकिन इस विषय पर गवर्नरो द्वारा बनाये गये नियमो के विरुद्ध नही)।

१३ स्थानिक स्वशासन (local self-government) अर्थात् म्यूनिसिपल समुदायो, इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्टो, जिला वोर्डो, खानो की शासन-सस्थाओ तथा इसी प्रकार की अन्य सस्थाओ का निर्माण और उनके अधिकार।

१४ सार्वजनिक स्वास्थ्य व सफाई, अस्पताल और दवाईखाने, जन्म-मरण की रिपोर्टों की रजिस्ट्री ।

१५ भारत के स्थानो की तीर्थ-यात्रा ।

१६ मुर्दो का गाडना और कब्रिस्तान ।

१७ शिक्षा ।

१८ यातायात, अर्थात् सडक, पुल, नाव व यातायात के वे साधन, जिनका उल्लेख केन्द्रीय सूची मे नही किया गया है, प्रान्तीय रेले अर्थात् वे रेले जो एक ही प्रान्त मे चलती हो और जिनका वडी रेलो से सीधा सम्बन्ध न हो[१], म्यूनिसिपल क्षेत्रो की ट्राम्वे, देशान्तर्गत जल-मार्ग और उनपर यातायात[२], वन्दरगाह[३], मशीनो के जोर से चलनेवाली सवारियो के अलावा सब सवारियाँ।

१९ पानी अर्थात् पानी का प्रवन्ध (water supplies), सिचाई व नहरे, नालिया (drainage) व वन्द या वॉध, पानी को इकट्ठा करना ओर उससे शक्ति पैदा करना ।

२० कृपि (मय कृपि-शिक्षा और कृपि-सम्वन्धी अनुसन्धान के), खेती को नष्ट करनेवाले जीवो से खेती की रक्षा करना और पौधो को

१. लेकिन देखिए केन्द्रीय सूची का न० २० ।

२. लेकिन देखिए सम्मिलित सूची का नं० ३२ ।

३. लेकिन देखिए केन्द्रीय सूची का न० २२ ।

बीमारियो से बचाना, खेती के जानवरो की नस्ल मे सुधार करना और जानवरो को बीमारियो से बचाना, जानवरो की डाक्टरी और उसकी शिक्षा, काजीहौज और जानवरो के आवारा फिरने को रोकना।

२१ जमीन अर्थात् जमीन के ऊपर व जमीन मे लोगो के अधिकार, जमीन का बन्दोबस्त (मय जमीदारो और किसानो के पारस्परिक सम्बन्धो के) और लगान की वसूली, खेती की जमीनो की खरीद-फरोख्त और रेहन वगैरा और उसके उत्तराधिकार, जमीन की उन्नति और खेती के लिए दिये गये कर्जे, नई बस्ती बसाना (colonization), कोर्ट ऑफ वार्ड्स, मकरूज व कुर्क की हुई रियासते, गडा हुआ और छिपा हुआ धन।

२२ जगलात।

२३ खानो व तेल के सोतो का नियन्त्रण और खानो की उन्नति।[१]

२४. मछलियो के पकडने के स्थान।

२५ जगली परिन्दो व जगली जानवरो की रक्षा।

२६ गैस व गैस के तामीरी काम।

२७ प्रान्त का व्यापार, बाजार व मेले, साहूकार व साहूकारा।

२८ सराय व सराय के सचालक।

२९ माल की उत्पत्ति, सप्लाई व बँटवारा, उद्योग-धन्धोकी उन्नति।[२]

३० खाद्य पदार्थो मे और अन्य पदार्थो मे मिलावट, तौल व नाप।

३१. मादक पेय व नशीली दवाइयॉ, अर्थात् उनकी उत्पत्ति, उनको रखना और उनका क्रय-विक्रय।[३]

१. लेकिन देखिए केन्द्रीय सूची का नं० ३६।

२. लेकिन देखिए केन्द्रीय सूची का नं० ३४।

३. लेकिन अफीम के लिए देखिए केन्द्रीय सूची का नं० ३१ और जहर व खतरनाक दवाइयों के लिए देखिए सम्मिलित सूची का नं० १९।

३२ गरीवो की सहायता, वेकारी ।

३३ केन्द्रीय सूची मे वर्णित समुदायो के अलावा सब समुदायो का समुदायीकरण, नियन्त्रण और समाप्ति, ऐसी व्यापारिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, धार्मिक और अन्य सभा-सोसायटियाँ जिनका समुदायीकरण न हुआ हो, कोआपरेटिव सोसायटियाँ ।

३४ धर्मादा व धर्मादे की सस्थाये, मदिर, मस्जिद, मठ वगैरा ।

३५ थियेटर, ड्रामे व सिनेमा (लेकिन इसमे सिनेमा की फिल्मो की मजूरी शामिल नही है) ।

३६ सट्टेवाजी और जुएवाजी ।

३७ इस सूची मे शामिल किये गये विषयो के कानून को भग करने की सजा ।

३८ इस सूची मे शामिल किये गये विषयो के वारे मे जाँच व तत्सम्वन्धी आँकडे ।

३९ मालगुजारी (मय उसकी तशखीस व वसूली के), कागजात ज़मीन, मालगुज़ारी की पैमायश, मिस्ल हकियत और मालगुज़ारी का क्रय-विक्रय, रेहन वगैरा।

४० प्रान्त मे वनने या पैदा होनेवाली शराब, अन्य मादक पेय, अफीम, भग आदि मादक द्रव्यो व दवाई की अन्य चीजो तथा इन चीजो मे वननेवाली दवाइयो व श्रृगार-पदार्थो पर लगाये जानेवाले उत्पत्ति-कर और इन्ही दरो पर या इनसे भी कम दरो पर भारत के अन्य प्रान्तो मे वनने या पैदा होनेवाले इन्ही पदार्थो पर वरावरी की वजह से (countervailing duties) लगाई जानेवाली चुंगियाँ ।

४१ खेती की आमदनी पर कर ।

४२ जमीन, इमारत, चूल्हो व खिडकियो पर कर ।

४३ खेती की जमीन पर उत्तराधिकार-कर।

४४ खानो के हकदारो पर कर[१] (Taxes on mineral rights)।

४५ व्यक्तियो पर कर (Capitation Taxes)।

४६ पेशो, तिजारतो व नौकरियो पर कर।

४७ जानवरो व नावो पर कर।

४८ माल की बिक्री और इश्तिहारो पर कर।

४९ खपत के लिए, काम मे लेने के लिए, या ब्रिक्री के लिए म्यूनिसिपल क्षेत्रो मे आनेवाले माल पर चुगी।

५० विलासिता की चीजो पर कर (मय आमोद-प्रमोद, सट्टेबाजी और जुएबाजी पर कर के)।

५१ उन दस्तावेजो के अलावा जिनका उल्लेख केन्द्रीय सूची के नम्बर ५५ मे किया गया है, सब दस्तावेजो पर लगाये जानेवाले स्टाम्पो की दर।

५२ देशान्तर्गत जल-मार्गो से जाने-आनेवाले मुसाफिरो और माल पर टैक्स

५३ टौल-टैक्स (Tolls)।

५४ अदालतो की आमदनी के अलावा इस सूची मे शामिल किये गये और सब विषयो की आमदनी।

सम्मिलित सूची

(१)

१ ताजीरात हिन्द (अलावा केन्द्रीय और प्रान्तीय सूची मे शामिल किये गये विषयो के कानून को भग करने की सजा के और अलावा सम्राट् की सेना के उपयोग के)।

१. लेकिन देखिए केन्द्रीय सूची का नं० ३६।

२ जाब्ता फौजदारी।

३ एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त को कैदियो और अभियुक्तो का तबादला।

४ जाब्ता दीवानी (मय मुकदमो की मियाद के कानून के), प्रान्तो के अन्दर दूसरे प्रान्तो के टैक्सो, मालगुजारी वगैरा की वसूली।

५ गवाही व शपथ।

६ विवाह व तलाक, नाबालिगी, गोद लेना।

७ खेती की जमीन के अलावा और सब सम्पत्ति की वसीयत व उत्तराधिकार।

८ खेती की जमीन के अलावा और सब सम्पत्ति की खरीद-फरोख्त, रेहन वगैरा के दस्तावेजो की रजिस्ट्री।

९ ट्रस्ट व ट्रस्ट्री।

१० खेती की जमीन के इकरारो के अलावा और सब इकरार (contracts), मय साझे और एजेसी आदि के इकरारो के।

११ सालिसी (arbitration)।

१२ नादारी, लावारिसी जायदादो की रक्षा, सरकारी ट्रस्टी।

१३ अदालती स्टाम्पो के अलावा और सब प्रकार के स्टाम्पो के द्वारा ली जानेवाली ड्यूटी (लेकिन स्टाम्प ड्यूटी की दर नही)।

१४ हर्जाने के दावे (actionable wrongs),सिवा उनके जिनका सम्बन्ध केन्द्रीय या प्रान्तीय सूची के किसी विषय से हो।

१५ फेडरल कोर्ट के अलावा सब अदालतो के अधिकार व अधिकार-क्षेत्र—उन सब विषयो के बारे मे जो इस सूची मे शामिल है।

१६ वकालत, डाक्टरी व अन्य पेशे।

१७ अखबार, किताबे व छापेखाने।

१८ पागलपन व मानसिक दुर्बलता, इनकी चिकित्सा और चिकित्सा-गृह, पागल व दुर्बल मस्तिष्क वाले व्यक्तियो को रखने के स्थान।

१९ जहर व खतरनाक दवाइयाँ।

२० मशीनो के जोर से चलनेवाली सवारियाँ।

२१ वायलर (Boilers)।

२२ जानवरो के प्रति होनेवाली बेरहमी को रोकना।

२३ यूरोपियनो की आवारागर्दी, जरायम-पेशा जातियाँ।

२४ इस सूची के इस भाग मे शामिल किये गये विषयो के बारे मे जाँच और तत्सम्बन्धी आँकडे।

२५ अदालतो से होनेवाली आमदनी के अलावा इस सूची के इस भाग मे शामिल किये गये और सब विषयो की आमदनी।

(२)

२६ कारखाने।

२७ मजदूरो की बहबूदी, मजदूरो की दशा, प्राविडेण्ट-फण्ड, मालिको के फर्ज व मजदूरो को मुआवजा (workmen's compensation), स्वास्थ्य का बीमा, मय बेकार होजाने के कारण दी जानेवाली पेशनो (invalidity pensions) के, वृद्धावस्था की पेशने।

२८ बेकारी का बीमा।

२९ मजदूर-सघ (Trade unions), औद्योगिक व मजदूर-मालिको के झगडे।

३० मनुष्यो, जानवरो व पौधो की छुआछूत की या अन्य बीमारियो को एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक फैलने से रोकना।

३१ बिजली।

३२ देशान्तर्गत जल-मार्गो मे मशीनो के जोर से चलनेवाली सवा-

ड्रियों के जरिये यातायात, इनमे ट्रैफिक के कायदे, देशान्तर्गत जल-मार्गों मे यात्रियो व माल का यातायात।

३३ सिनेमा की फिल्मो की मजूरी।

३४ केन्द्रीय सरकार द्वारा नजरबन्द किये हुए व्यक्ति।

३५ इस सूची के इस भाग मे शामिल किये गये विषयो के बारे मे जॉच और तत्सम्बन्धी आँकडे।

३६ अदालतो की आमदनी के अलावा इस सूची के इस भाग मे शामिल किये गये और सब विषयो की आमदनी।

आधार-भूत ग्रन्थों की सूची

इस पुस्तक को तैयार करने मे निम्न ग्रन्थो, खरीतो और सरकारी रिपोर्टों की सहायता लीगई है :—

1. Ilbert : The Government of India, 3rd Edition, 1915
2. Keith : A Constitutional History of India, 1600-1935.
3. Horne The Political System of British India.
4. Eddy & Lawton : India's New Constitution.
5. Varma & Gharekhan : The Constitutional Law of India and England, Fifth Edition, 1937
6. Lahiri and Bannerjea. New Constitution of India.
7. Shah Provincial Autonomy.
8. Z A. Ahmad A Brief Analysis of the New Constitution.
9. Z. A. Ahmad Some Economic and Financial Aspects of British Rule in India.
10. N R. Aiyangar The Government of India Act, 1935.
11. Montagu-Chelmsford Report on Indian Constitutional Reforms.
12. Simon Commission Report.
13. Government of India's Despatch on Simon Commission Report
14. Round Table Conference Reports
15. White Paper on Indian Constitutional Reforms
16. Joint Parliamentary Committee's Report on Indian Constitutional Reform.

17. Parliamentary Debates on the India Bill
18 Government of India Act, 1935 and the Rules and Orders-in-Council issued thereunder
19 Government of India Acts 1915-1919 and the Rules issued thereunder
20 Report of Hammond Committee on Electoral matters
21 Sir Otto Niemeyer's Indian Financial Enquiry Report
22 United Provinces Government Budget Estimates for 1937-38
23 British Indian Delegation's Memorandum to the Joint Parliamentary Committee
24 Lowell Government of England
25 Keith Constitutional Law of the British Dominions

'मण्डल' की 'सर्वोदय साहित्य माला' के

प्रकाशन

१—दिव्य-जीवन ।=)
२—जीवन-साहित्य १)
३—तामिलवेद ॥)
४—शैतान की लकड़ी अर्थात् भारत में व्यसन और व्यभिचार ॥।=)
५—सामाजिक कुरीतियाँ (जब्त : अप्राप्य) ॥)
६—भारत के स्त्री-रत्न (तीन भाग) ३)
७—अनोखा (विक्टर ह्यूगो) १।=)
८—ब्रह्मचर्य-विज्ञान ॥।=)
९—यूरोप का इतिहास २)
१०—समाज-विज्ञान १॥)
११—खद्दर का सम्पत्ति-शास्त्र ॥।≡)
१२—गोरों का प्रभुत्व ॥।=)
१३—चीन की आवाज(अप्राप्य)।-)
१४—दक्षिण अफ्रिका का सत्याग्रह १)
१५—विजयी बारडोली २)
१६—अनीति की राह पर ॥=)
१७—सीता की अग्नि-परीक्षा ।-)
१८—कन्या-शिक्षा ।)
१९—कर्मयोग ।=)
२०—कलवार की करतूत =)
२१—व्यावहारिक सभ्यता ॥)
२२—अधेरे में उजाला ॥)
२३—स्वामीजी का बलिदान (अप्राप्य) ।-)
२४—हमारे ज़माने की ग़ुलामी (ज़ब्त : अप्राप्य) ।)
२५—स्त्री और पुरुष ॥)
२६—घरों को सफाई ।=)
२७—क्या करे ? (दो भाग) १॥=)
२८—हाथ की कताई-बुनाई (अप्राप्य) ॥=)
२९—आत्मोपदेश ।)
३०—यथार्थ आदर्श जीवन (अप्राप्य) ॥-)
३१—जब अंग्रेज नहीं आये थे- ।)
३२—गंगा गोविन्दसिंह (अप्राप्य) ॥=)
३३—श्रीरामचरित्र १)

७५—हमारे किसानो का सवाल ।)
७६—नया शासन विधान
(प्रांतीय स्वराज्य) ।||)
७७ (१) गांवो की कहानी ||)

आगे प्रकाशित होने वाले ग्रन्थ

गीता-मन्थन १||)
गाधीवाद : समाजवाद १)
नया शासन विधान (फेड-रेशन) |||)
विनाश या इलाज ? ||)
राजनीति की भूमिका ||)
महाभारत के पात्र–१ ||)
संतवाणी ||)
जबसे अंग्रेज आये ||)

सस्ता साहित्य मण्डल, नया बाज़ार, दिल्ली